ज्ञान वल्लभ पुष्पांक १६ ॐ संपादक पुष्पाङ्क ५७

श्रीमद्सुखसागरादि सद्गुरुभ्योनमः

वल्लभ जीवन सौरभ

एवं

ज्ञानसार अष्टक संक्षिप्त

और

वल्लभ गुणमाला

द्रव्यदाताः-सेठ श्री पृथ्वीराज जी वंगाणी

लेखकः—

प्रोफेसर कांतिलालजी चोरडिया, एम. ए. अमलनेर

संपादकः-

चंदनमल नागौरी

छोटी सादड़ी (मेवाड़)

स्व. धोंडीरामजी गुलाबवंदजी खिवसरा

पूना निवासी स्व. धोंडीरामजी गुलाबचंदजी खिंवसरा

इनके संग्रह मे मे ग्रंथ प्राप्त हुआ ।

नम्र सूचन

इस ग्रन्थ के अभ्यास का कार्य पूर्ण होते ही नियत समयावधि में शीघ्र वापस करने की कृपा करें. जिससे अन्य वाचकगण इसका उपयोग कर सकें.

ज्ञान वल्लभ पुष्पांक १६

॥ ॐ ॥

वल्लभ जीवन सौरभ

एवं

वल्लभ गुणमाला

लेखकः-प्रोफेसर कांतिलाल फूलचंद चोरडिया
एम. ए. (हिन्दी), पंडित
एम. ए. (अर्धमागधी)
सेकंड लेफ्टनंट (एन. सी. सी.)
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
प्रताप कॉलेज, अमलनेर

ज्ञानसार अष्टक

मूलकर्ता-श्रीमद् उपाध्यायजी यशो विजयजी म. साहब

अनुवादक-श्रीमद् जिनकविन्द्र सागर सूरीश्वरजी म. सा.

प्रकाशकः-
धमतरी निवासी श्रेष्ठी हजारीमलजी के
सुपुत्र पृथ्वीराजजी बंगानी

प्रथम संस्करण १०००

वीर संवत २४८६

विक्रम संवत २०२०
ईसवी सन् १९६३

परमपूज्या मधुर व्याख्यानदात्री विदुषीवर्या प्रवर्तिनीपद विभूषिता

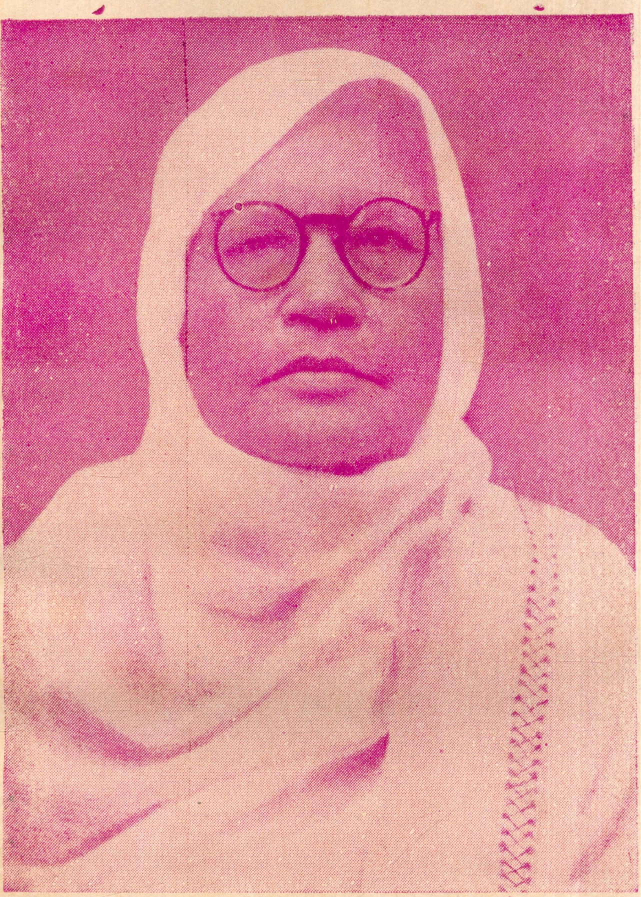

स्व. श्रीमती वल्लभ श्रीजी म. सा.

प्रगटप्रभावी खरतरगच्छाधीश श्रीमत्सुखसागरजी म. सा. की
समुदायवर्तिनी श्रीमती सिंहश्रीजी म. सा. की शिष्यारत्न
बालब्रह्मचारिणी विश्वविख्यात् प्रवर्तिनी
वल्लभश्रीजी म. सा. की पुनीत जीवनी

उपदेशिका

पूज्यपाद खरतरगणाधीश्वर प्रत्यक्षप्रभावी श्रीमत्सुखसागरजी
म. सा. के पट्टपरंपराधीश वर्तमान् गणाधीश शान्तमूर्ति
श्रीमान् हेमेन्द्रसागरजी म. सा. की समुदायवर्तिनी
श्रीमती सिंहश्रीजी म. सा. की अन्तेवासिनी
प्रवर्तिनी वल्लभश्रीजी म. सा. की
शिष्या गुरुभक्तिपरायणा
श्रीमती जिनश्रीजी
म. सा.

॥ श्री ॥

		शुद्ध	अशुद्ध
पृष्ठ	१	पूर्णाष्ठक	पूजाष्ठक
,,	३	द्योतन्ते	(अन्तिम लाइन) द्योतने
,,	४	समाधाय	स्वाध्याय
,,	६	महाकथा	महात्मना
,,	६	यस्य	यस्या
,,	७	वाङनेत्रा	वाङनेत्ता
,,	१३	हृत्तात्म	हत्तात्म
,,	१३	तमोध्नी	तमोद्नी
,,	१९	स्फुरत	स्फुरतृष्णा
,,	२०	मीनेभ	भीनेभ
,,	२०	नित्य धूना श्रये	बन्धुना श्रये
,,	२१	अपि	क्रापि
,,	२१	पीष्टा	भीष्टा

अनुक्रमणिका

१ समर्पण
२ आत्मनिवेदन
३ लेखक परिचय
४ प्रकाशक परिचय
५ श्रद्धांजलि
६ जैन साध्वी
७ बाल्यकाल
८ कसौटी पर
९ पवित्र जीवन का प्रारंभ
१० अहिंसा का प्रचार
११ तीर्थ स्थानों की यात्रा
१२ सामाजिक महान सेवा
१३ प्रवर्तिनी पद
१४ महाराष्ट्र में पदार्पण
१५ महा प्रस्थान
१६ दिव्य विभूति
१७ शिष्या परिवार
१८ जिनश्रीजी म. सा.
१९ चातुर्मास सूची

निवेदन

इस पुस्तक के प्रकाशन का हेतु एक परम पूज्या प्रवर्तिनी जी के जीवन वृत्तांत की रूप रेखा अनुकरणीय होने से धर्मी आत्मा को उपयोगी होगा। इस जीवन वृत्तांत को परम पूज्या श्री जिन-श्रीजी साहिबा ने समयोचित संग्रह कर रखा था जिसको लेखबद्ध श्रीमान् कांतिलाल जी साहब चोरडिया, प्रोफेसर अमलनेर कालेज ने विस्तरित रूप से लिखा। श्री जिन श्रीजी साहिबा प्रवर्तिनी जी की प्रथम शिष्या विनयवान ज्ञानवान और शांत स्वभावी धर्म परायण होने से पृथक् पृथक स्थानों में साथ रह कर जो दृष्टि के सामने घटना हुई उनको लेखबद्ध किया है। इसी कारण लेख में अतिशयोक्ति नहीं है। नोंध को प्रोफेसर साहब ने सुचारु रूप से रोचक भाषा में संक्षिप्त प्रकार से लिखा जिसके उन्नीस प्रकरण बना कर विषय को प्रत्येक प्रकार से स्पष्ट किया है, आप धर्मानु-रागी सज्जन और धर्माराधन में प्रेम रखते हैं, भक्तिवान सज्जन पुरुष हैं। इस जीवन वृत्तांत में (८) कसोटी पर (१०) अहिंसा का प्रचार, समाज की महान सेवा और (१३) प्रवर्तिनी पद का वर्णन विशेष रूप से अनुकरणीय एवं मननीय है।

श्री प्रवर्तिनी साहिबा विदुषा थीं इसी कारण से प्रतिभा-शालिनी भी थीं। व्याख्यानों की और द्रव्यानुयोग का अभ्यास भी प्रशंसनीय था, आपकी भावना मेवाड़, मालवा में विशेष रूप से सुधार करने के हेतु विचरने की थी! परन्तु खानदेश में प्रतिष्ठा

कराने के हेतु श्रीमान् आनंदसागर सूरिजी साहब का पदार्पण हुआ और श्री संघ के प्रतिनिधियों ने आकर श्री प्रवर्तिनी जी साहिबा को विनती की। श्रीमान आचार्य महाराज का आदेश भी आ चुका था। अतः आपने स्वीकृति दी और विहार भी कर दिया, खानदेश पदार्पण होने के पश्चात अस्वस्थता बढ़ गई और अमलनेर पधारीं। औषधोपचार से स्वास्थ्य चाहिए जैसा नहीं सुधर पाया था। दरम्यान में बड़ोदा पधारने की विनती बड़ोदा संघ की ओर से कई बार आयी। आपने विहार भी किया। परंतु मार्ग में कष्ट होने से चार मील से ही वापस अमलनेर पधारीं और आखिर वह दिन जो आने का था आया।

इस चरित्र में ज्ञानसार के अमुक श्लोक का भावार्थ छपा है। मूलकर्त्ता तो श्रीमान् महा महोपाध्याय जी महाराज हैं जिन की उत्तम कृति में उपयोगी अष्टक से उद्धृत कर भाषानुवाद किया जिसका शुद्धिकरण श्रीमान आचार्य महाराज श्री कविन्द्र सागर सूरीश्वर जी साहब ने किया है, दुखः है कि इस पुस्तक के प्रकाशन ो सदगत आचार्य महाराज देख नहीं सके, ज्ञानसार के अमुक श्लोकों का भावार्थ पाठक महोदय को उपयोगी होगा इसी कारण मंगलाचरण रूप प्रथम स्थान प्राचीन कृति को दिया है।

चातुर्मास के वर्णन संक्षेपसे लिखे गये हैं, आपका शिक्षा पर विशे प्रेम था जहां पदार्पण होता श्रावक श्राविका और बाल बालिका ो आप नित्य पाठ देकर व्रत नीयम में दृढ़ करती थीं, शिष्याओं पर अनुपम प्रेम था। संप भी सराहनीय था, अतः यह जीवनी नुकरणीय है।

इस पुस्तक के संपादन की सेवा का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुवा। कागज औफसीट काम में लेने के कारण समय पर बाजार से सम्बन्ध नहीं हो पाये जिस से प्रकाशन में विलम्ब होता गया और आखिर में आर्ट पेपर काम में लिए गए, प्रूफ देखने में भी अशक्त रहा और श्रीमती पूज्या सज्जन श्रीजी साहिबा, सिन्हा साहब और मेरे भतीजे धनरूपमल जी ने यह कार्य सम्पन्न कराया। अतः मैं इनका आभारी हूँ।

इस पुस्तक के प्रकाशन के हेतु द्रव्यदाता श्रीमान् श्रेष्ठिवर्य बंगानी साहब हैं। आप धार्मिक वृत्ति वाले, श्रद्धालु, परम गुरुभक्त हैं। आपकी इस उदारता के लिए धन्यवाद समर्पण करते हैं।

निवेदक:–

२०२० चैत्र शुक्ला प्रतिपदा।
मु० जयपुर

चंदनमल नागोरी
छोटी सादड़ी (मेवाड़)

श्रीमान् परम पूज्य शासनरत्न प्रसिद्ध आचार्य देवेश का

अभिप्राय

गई काले आवेल तमारी पोस्ट तथा तार आ साथे मोकलावेल छे। तार अमोए सही करावी लई लीधो हतो। अने अमोए फोड़ी ने वांच्यो छे। वयोवृद्ध साध्वी श्री वल्लभ श्री घणा विदूषी तेमज प्रभावशाली, सरल अने उच्चकोटिना आत्मा हता। अने तेओए खूबज दीर्घ संयम निरतिचार पणे पाली अनेक जीवो ने समकित अने संयम पमाड़ी अनेक शासन नी प्रभावनाओ करी पोताना आत्मानुं सम्पूर्ण साधी गया छे। बाकी भावी आगल कोई नो उपाय नथी। एज धर्मकरणीमां यथाशक्ति उद्यमवंत रहेवुं।

नोटः-यह पत्र श्री मान् नागोरी जी के नाम पर आया हुवा है।

श्रीमान् परम पूज्य विजय प्रताप सूरीश्वर जी महाराज ने भी आपकी संयम पालना, चारित्रपर्याय विद्वत्ता आदि की प्रशंसा की और संपर्क में आने का वर्णन भी किया।

धन्यवाद।

वंदना

त्यागमूर्ति बाल ब्रह्मचारिणी प्रवर्तिनीजी महाराज श्री श्री वल्लभ श्रीजी महाराज ने इस अवनितल पर अवितरण होकर जैन शासन की जो सेवा की है वो अवर्णनीय है। आप लघुवय में ही संसार से विरक्त होकर दीक्षा ग्रहण कर विद्याध्ययन कर अपनी प्रखर विद्वत्ता भरी वाणी से अनेक जीवों को सन्मार्ग पर आरूढ किये हैं। भारतवर्ष के अनेक स्थानों पर पधार कर वहाँ की जनता को अपने वचनामृत से पावन कर जैन शासन के कई कार्य करवाये हैं। स्व और पर कल्याण की भावना आपके जीवन का लक्ष है। मेरे जैसे अल्पज्ञ को भी आपने जैन दर्शन के महान तत्वों को सिखा कर जो उपकार किया है उससे मैं कभी भी उऋण नहीं हो सकता। आपकी अस्वस्थता की दशा में भी आपकी यह उत्कट अभिलाषा अन्त समय तक रही कि मैं जैन शासन की सेवा करूं। जहां २ भी आपका पदार्पण हुवा है वहां की जनता (कितने ही वर्षों के व्यतीत हो जाने पर भी) आपके गुणों से इतना प्रभावित हुई है कि वो आज भी आपको याद करती है। आप जैन शासन में एक चमकते तारे के समान थे। आपके स्वर्गवास से जैन शासन में भारी क्षति हुई है। आपके अंत समय की कुछ घटनाओं से यह निश्चित होता है कि आपकी आत्मा दूसरे देवलोक में देवपने उत्पन्न हुई है। मैं आपके चरणों में श्रद्धांजलि अर्पित करता हुवा कोटि कोटि वंदना करता हूँ।

आपका चरण किंकर

प्रतापमल सेठिया

प्रथम दर्शन

सन् ४६ की बात है। उस समय मैं ओसियां में था। 'ओसियां' ओसवालों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। कहते हैं कि ओसवालों का उद्भव स्थान यहीं 'ओसियां' है जो पोखरण फलौदी रेलवे लाइन पर जोधपुर से लगभग चालीस मील दूर स्थित है। यहां चरम तीर्थंकर भगवन्त परमात्मा महावीर का बड़ा भव्य जिनालय है। प्रतिमा बड़ी प्राचीन, भव्य एवं मनमोहक है। उस पर स्वर्णलेप किया हुवा है, इससे उसका आकर्षण और भी बढ़ गया है। यह एक तीर्थ स्थान बन गया है। यहां हजारों यात्री प्रति वर्ष दर्शनार्थ आते हैं। इसी तीर्थ भूमि पर ओसवाल समाज का एक विद्यालय और छात्रावास है। यह लगभग चालीस पचास वर्ष से समाज की सेवा कर रहा है। हर्ष है कि मुझे भी वहां कुछ वर्षों तक सेवा करने का अवसर प्राप्त हुवा।

एक दिन की बात कि एक शुभ संदेश मिला। सुना कि एक विदुषी आर्या अपने शिष्या परिवार सहित दो चार दिन में आने वाली हैं। एकाएक इनके विषय में कुछ जानने की अभिलाषा हुई। मुनीमजी से पूछा तो ज्ञात हुवा कि श्री वल्लभ श्रीजी पधार रही हैं। साथियों में बात फैली। कुछ तो उनसे पूर्व परिचित थे। उन्होंने बतलाया कि वे बहुत विदुषी हैं। अच्छी वक्ता हैं। सरल तथा संतोषी हैं। मधुर भाषिणी और बाल ब्रह्मचारिणी हैं। उनका शास्त्रीय अध्ययन भी अनुपम है। ये बातें सुनकर दर्शन की

उत्कंठा तीव्र हो गई। प्रतिदिन प्रतीक्षा करते कि कब वे आवें और हम सब अपने विद्यालय परिवार सहित उनके पुनीत दर्शन कर अपने अपको धन्य समझें।

आखिर वह दिन आया। सूचना के अनुसार छात्र तथा अध्यापकगण उन्हें एक माइल दूर लिवाने हेतु गये। आकाश उनकी जयकारों की तुमुल ध्वनि से गुंजित हो उठा। वे आईं, और हमारी दर्शनाभिलाषा पूर्ण हुई। जैसा जो कुछ साथियों से सुना था उसका सही रूप दृष्टिगोचर हुवा। भगवत् दर्शन पश्चात आर्या श्री ने अल्प समय तक अपना अमृतमय उपदेश बालकों को दिया और मंगलिक सुनाई। उपदेश की शैली बड़ी प्राभाविक थी। उन्होंने बताया कि बालकों को अपना समय व्यर्थ नहीं गंवाना चाहिये। उन्हें चाहिये कि वे विद्याभ्यास दत्तचित्त होकर करें। यह जीवन ऐसा अमूल्य है कि जो दुष्प्राप्य है। अतः एक क्षण मात्र भी प्रमाद न करते हुवे इस जन्म को सफल करना चाहिये। अच्छे से अच्छे विद्वान बनकर समाज सेवी बनने का प्रयत्न करना चाहिये।

बालकों पर उपदेश का अच्छा प्रभाव पड़ा। उपदेश के पश्चात् कुछ बालकों ने यथाशक्य नियमादि ग्रहण किये और कार्यक्रम समाप्त हुवा। गोचरी पानी करने के पश्चात करीब ३ बजे छात्रों ने पुनः एक सभा का आयोजन किया जिस में गांव वालों की उपस्थिति भी अच्छी संख्या में थी। इस सभा में

प्रश्नोत्तरी का कार्यक्रम बड़ा रोचक रहा। छात्रों ने विविध शंकाएं की जिनका उन्होंने बड़े सुन्दर ढंग से समाधान किया। ऐसा प्रतीत होता था कि उनका शास्त्रीय व अन्य विषयक ज्ञान अगाध और परिमार्जित है। भाषा बड़ी सरल और सुबोध, तथा वाणी में स्वाभाविक ही मृदुलता सभी कुछ आकर्षक थी।

आधा घंटा इस प्रकार का कार्यक्रम चला किन्तु समय इतना जल्दी बीतता प्रतीत हुवा कि कुछ अधिक श्रवण करने की जिज्ञासा बनी की बनी रह गई। इसके पश्चात् गुरुणी जी से छात्रों की परीक्षा लेने हेतु निवेदन किया गया। उन्होंने प्रार्थना स्वीकार की और छात्रों से धर्म, व्याकरण, संस्कृत, तथा हिन्दी के पाठ्यक्रम में से कई प्रकार के प्रश्न पूछे। छात्रों ने प्रश्नों का यथोचित उत्तर दिया। जिन्हें सुनकर गुरुणी जी संतुष्ट हुईं और विद्यालय की उन्नति हेतु शुभ कामना प्रगट की। अपने अंतिम प्रवचन में तो उन्होंने सब को अपनी ओर जादूसा आकर्षित कर लिया। कथानक एवं सरल तर्कद्वारा अपनी बात की पुष्टि कर देना और बात को गले उतार देना उनकी अनूठी विशेषता थी।

हमारे यहां केवल एक दिन की स्थिरता रही। दूसरे दिन तो वे बिहार कर गईं। लेकिन उस दिन की स्मृतियां आज भी भुलाये नहीं भूलतीं। उस समय से ही ऐसी भावना थी कि एक बार पुनः दर्शन हो तो अच्छा किन्तु वह समय शीघ्र नहीं आया।

पर जिज्ञासा तीव्र थी। अतः भावना फलीभूत उस समय हुई जब कि आपका चातुर्मास छोटी सादड़ी में हुवा। मैं भी उस समय

वहीं था। जब आपके पधारने के समाचार सुने तो दिल बांसों उछलने लगा। मेरी मनोभावना पूर्ण हुई और एक बार मैं फिर आपके दर्शन कर कृतार्थ हुवा। मैंने आपको प्रथम दर्शन से अधिक निखरता हुवा द्वितीय दर्शन में पाया। आप एक भव्यात्मा थीं, जो बेजोड़ थीं।

प्रभावशील, ओजस्वी मुख, भारी भरकम शरीर, मझला कद, शुभ श्वेत वस्त्र, सरलता, गंभीरता, विद्वता, अध्ययन रुचि, वाणी माधुर्य शिष्याओं पर नियंत्रण एवं चारित्रिक उज्ज्वलता आदि उन में क्या कुछ नहीं था।

इन्हीं अलौकिक गुणों से प्रभावित होकर तो छोटी सादड़ी के श्री संघ ने श्रीमान् परम पूज्य आचार्य महाराज आनंद सागर सूरीश्वर जी की आज्ञा प्राप्त कर श्रीमान् चंदनमल जी साहब नागोरी की निष्ठा में उनके ही कर कमलों द्वारा प्रवर्तिनी पद से विभूषित किया। उनका बहुमान किया और उनके पुनीत यश को अमर बनाने में अनुपम योग दिया।

कहना अनुचित नहीं होगा कि उन्होंने 'यथा नाम तथा गुण' वाली उक्ति को अक्षरशः सिद्ध किया। वल्लभ श्रीजी सब की वल्लभा थीं। जैन एवं जैनेतर सभी को उन्होंने अद्भुत गुणों से एवं व्यक्तित्व से प्रभावित किया। सभी की उनमें अद्भुत श्रद्धा रही। वे एक लम्बे समय तक रुग्ण रहीं, किन्तु मन सब का यही चाहता था कि वे हमारे बीच वर्षों तक बनी रहें और हमें अपने

अनुपम उपदेशों से लाभान्वित करती रहें। किन्तु समय बड़ा बलवान है। वह कभी किसी की कुछ सुनता नहीं। उसकी तो एक निर्धारित अवधि है और वह अपनी अवधि के अनुसार कार्य करता है। ठीक ऐसा ही व्यवहार उसने पूजनीया गुरुवर्या के साथ भी किया। आज वे हमारे बीच से उठ गईं। वे इस भौतिक शरीर को त्याग गईं किन्तु अपनी ज्वलन्त स्मृतियां छोड़ गईं। जो भी उनके संपर्क में आया उसके मानस पटल पर उनकी मधुर स्मृतियां यत्किंचित रूप में आज भी विद्यमान हैं। यही कारण है कि यह प्रतिभास ही नहीं होता कि वे हमारे बीच नहीं है। संक्षेप में यह कहें तो अनुचित नहीं होगा कि वे एक दैदिप्यमान सूर्य थीं जो अपना अमिट प्रकाश सदैव के लिये हमारे लिये छोड़ गईं और अमर हो गईं।

आज हमारा श्रद्धानत मस्तक उनके पावन चरणों में नमित है। शासनदेव उन्हें अनन्त शान्ति प्रदान करें। अस्तु।

एक श्रद्धालु

धनरूपमल नागोरी (छोटी सादड़ी)

बी. ए. साहित्य रत्न

श्रद्धांजलि

चरम तीर्थंकर भगवान महावीर के शासन में अनेकानेक प्रभावशाली युगप्रधान आचार्य, उपाध्याय, साधु साध्वी हुए हैं। किन्तु इस बीसवीं सदी में विश्व की एक अनुपम विभूति शासन दीपिका प्रातः स्मरणीया परम पूज्या प्रकाण्ड विदुषी आबाल ब्रह्मचारिणी श्री सद्गुरुवर्य्या श्री प्रवर्तिनी जी महाराज साहेब श्री स्व. वल्लभ श्रीजी म० सा० अद्वितीय प्रतिभा सम्पन्न महा

पुरुषा हुई हैं। आपश्री ने अपने यशस्वी जीवन में ज्ञान, ध्यान आध्यात्मिकता के बल से आत्म साक्षात्कार करके श्री जिन शासन की महत्त्वपूर्ण मौलिक सेवायें की और श्रीजिन जैन धर्म का बड़ा भारी प्रचार किया। आपश्री की अमृतोपम प्रवचन शैली अति आकर्षक हृदयंगम थी कि जिससे मुमुक्षु जनों को सच्ची आत्मानुभूति होती रही, विकारों का कलुष धुलकर हृदय पवित्र हुआ, और जन्म जन्म के चिर संचित पाप गल कर क्षय हो गये।

युग युगान्तर से प्राणी परम सुख शांति का पिपासु रहा है। वह सदैव मंगलमय सुख शांति की कामना करता है, वह केवल बाह्याडम्बर में सुख शान्ति की खोज करता है, इस प्रकार बाह्य रंगी आत्मा ने सच्चे सुख साधनों को नहीं अपनाये। वह अपने उर में प्रभूत सुख की आशा आकांक्षा लिये भौतिक पदार्थों में भटकता रहा, अपनी निधि उससे दूर होती रही, ऐसे समय में आपश्री के सैद्धान्तिक प्रेरणास्पद उपदेश दीर्घकाल तक निरंतर भव्यात्माओं का पथ आलोकित करते रहे। आपश्री समयज्ञा व दीर्घबुद्धि शालिनी थीं। कई जगह आपश्री ने छात्रालय, कन्या पाठशालाएं स्थापित कीं। श्री जिन मन्दिरों के जीर्णोद्धार कराये। अनेक धार्मिक संस्थाएं कायम कीं। इस प्रकार जैन धर्म की उत्तरोत्तर उन्नति करती रहीं। आपश्री ने अपने स्वर्गवास के ६ मास पूर्व अपनी उत्तराधिकारिणी आबाल ब्रह्मचारिणी गुरुवर्य्या परम पूज्या विदुषी श्री प्रमोद श्रीजी महाराज को प्रवर्तिनी पद प्रदान कर दिया था। अतः आपश्री के चरण कमलों में सविनय नत मस्तक हो अकिञ्चना की विनम्र श्रद्धांजलि समर्पित।

आपश्री की चरण रज
साध्वी राजेन्द्र श्री

॥ श्री ॥

श्रीमत् सुखसागर भगवज्जिन हरिकवीन्द्र

सद्गुरुभ्यो नमोनमः

ज्ञा न सा र

॥ पूजाष्टक ॥

ऐन्द्र श्री सुख मग्नेन, लीला लग्न मिवाखिसम्।
सच्चिदानन्द पूर्णेन, पूर्णं जगद वेक्ष्यते ॥१॥

अर्थः–आत्म सम्बन्धी सुख में लीन, एवं सच्चिदानन्द से पूर्ण महात्मा इस सारे जगत को लीला में लगा हुआ देखता है।

"आप सुखी तो जग सुखी"

पूर्णता या परोपाधेः–सा याचितक–मण्डनम्।
या तु स्वाभाविकी सैव-जात्य रत्न विभा निभा ॥२॥

अर्थः–पुद्गलादि परद्रव्यों की उपाधि-प्राप्ति से जो पूर्णता दीखती है, वह मांगकर पहने हुए गहने जैसी होती है। जो स्वाभाविक-आत्मभाव की पूर्णता है वह जाति रत्न की प्रभा के जैसी होती है।

"अपनी सो अमृत, पराई सो पानी"

अवास्तवी विकल्पैःस्यात्-पूर्णताब्धे रिवोर्मिभिः ।
पूर्णानन्दस्तु भगवां-स्तिमितोदधि सन्निभः ॥३॥

अर्थः—जैसे तरङ्गों से समुद्र की पूर्णता अवास्तविक होती है. वैसे ही मानसिक विकल्पों से हुई पूर्णता भी वास्तविक नहीं-मिथ्या होती है। पूर्ण आनन्द वाले भगवान निश्चल समुद्र के समान होते हैं।

भरिया सो झलके नहीं, झलके सो अधधा।
घोड़ा सो भूंके नहीं, भूंके सो गद्धा॥

जागर्ति ज्ञान, दृष्टिश्चेत्-तृष्णा कृष्णाहि जाङ्गुली
पूर्णानन्दस्य तत्किं स्यात् दैन्य वृश्चिक वेदना ॥४॥

अर्थः—तृष्णारूप काले नाग के लिये जाङ्गुली गारुडी मन्त्र के सामने यदि किसी की ज्ञान दृष्टि जागृत है तो उस पूर्णानन्दी को दीनता रूप विच्छु की वेदना क्या हो सकती है।

"नाग नाथ जाने ताको, विच्छु का न डर है"

पूर्यन्ते येन कृपणा स्तदुपेक्षैव पूर्णता।
पूर्णानन्द सुधा-स्निग्धा, दृष्टिरेषा मनीषिणाम् ॥५॥

अर्थः—क्षणिक सुख की प्राप्ति के लिये सतत प्रयासी लोभ मग्न कृपण जिस धन धान्यादि पर पुदगल द्रव्यों से पूरे जाते हैं वह पूर्णता नहीं है, उसकी उपेक्षा—त्यागवृत्ति ही पूर्णता है। पूर्णानन्द रूप अमृत से भिगी यही ज्ञानियों की ज्ञान दृष्टि है।

"ज्ञानस्य फलं विरतिः"

अपूर्ण पूर्णतामेति-पूर्यमाणस्तु हीयते ।
पूर्णानन्द स्वभावोऽयं-जगदद्भूत दायकः ॥६॥

अर्थः-पुद्गल आदि पर द्रव्यों से अपूर्ण जन आध्यात्मिक पूर्णता को पाता है और पुद्गलादि पर द्रव्यों से पूर्ण होता हुआ जन आध्यात्मिक हीनता को-अपूर्णता को पाता है, जगत को आश्चर्य देने वाला पूर्णानन्द का यही स्वरूप है ।

"त्यागे सो आगे, मांगे सो भागे"

परस्वत्व कृतोन्माथाः-भूनाथा न्यूनतेक्षिणः ।
स्वस्वत्व सुख पूर्णस्य न्यूनता न हरेरपि ॥७॥

अर्थः-पर द्रव्यों को अपनाने में तत्पर छह खण्ड भूमि के स्वामी चक्रवर्ती आदि भी अपनी सम्पत्ति में कमी देखते हैं। क्यों कि तृष्णायें अनन्त होती हैं। आत्म भाव को अपनाने वाले महात्माओं के पास कौड़ी भी नहीं होती, फिर भी उन्हें कहीं कोई कमी नहीं दीखतीं। वे इन्द्र से भी अधिक सुख पूर्ण होते हैं। बंधता हुआ एवं सत्तागत कर्म उतना दुःखदायी नहीं होता जितना उदयगत होता है। अतः कर्मेन्द्रिय में उदासीन रहते हुए आत्म स्वरूप प्राप्ति में प्रयत्नशील रहना चाहिये ।

"आशा दासी के जे जाये, ते जन जग के दासा"

कृष्णे पक्षे परिक्षीणे शुक्ले च समुदञ्चति ।
द्योतते सकलाध्यक्षाः-पूर्णानन्द विधोः कलाः ॥८॥

अर्थः—अनन्तानुबन्धी कषाय मूलक मिथ्यात्व के—अर्थात् कृष्ण पक्ष के सम्पूर्णतया क्षीण होने पर और तत्वार्थ श्रद्धान रूप सम्यग् दर्शन के—अर्थात् शुक्ल पक्ष के पूर्णतया प्रगट होने पर आत्म भाव में पूर्णानन्द स्वरूप चन्द्रमा की लोकालोक के त्रैकालिक भावों को प्रत्यक्ष करने वाली सारी कलायें प्रकाशमान होती है

पूनम पूरा चन्द्रमा, अमृत रस आधार।
अन्धकार रहता नहीं, सुख होता संसार ।।

।।मग्नाष्टक २।।

प्रत्याहृत्येन्द्रिय व्यूहं, स्वाध्याय मनो निजम्।
दधच्चिनमात्र विश्रान्ति-र्मग्न इत्यभिधीयते ।।१।।

अर्थः—संसार के विषयों से इन्द्रिय समूह को वापस खींच कर अपने मन को, अन्तर्मुख समाधिमय बनाकर केवल ज्ञान स्वरूपा आत्मा में विश्राम करने वाला मग्न स्थितिप्रज्ञ कहा जाता है।

"हम मगन भये प्रभु ध्यान में"

यस्य ज्ञान सुधा सिन्धौ, पर ब्रह्मणि मग्नता
विषयान्तर सञ्चार—स्तस्य हाला हलोपमः ।।२।।

अर्थः—अनन्त ज्ञान के सुधा—समुद्ररूप परमात्मा परब्रह्म में जिसकी मग्नता हो गयी है उसको संसार के विकारी विषयान्तरों में जाना भयङ्कर जहर के जैसा मालूम होता है।

"विषय विकारी, जगत भिखारी"

स्वभाव सुख मग्नस्य, जगत्तत्वावलोकिनः

कर्तृत्वं नान्य भावानां, साक्षित्व मवशिष्यते ॥३॥

अर्थः—आत्मा के स्वाभाविक सुखों में मग्न जगत के अनेक दुःखमय विकारी तत्वों का अनुशीलन करने वाले व्यक्ति का संसार के भौतिक भावों में कर्तृत्व नहीं होता। उनका तो केवल साक्षित्व ही शेष रहता है।

"हुआ आत्म प्रकाश, रहत संसार में उदास"

परब्रह्मणि मग्नस्य, श्लथा पौद्गलिकी कथा

क्वामी चामी करोन्मादाः-स्फारा दाराः दराः क्वच ॥४॥

अर्थः—परमात्मा परब्रह्म में मग्न जीव को भौतिक कथायें रस रहित शिथिल हो जाती हैं। उनके लिये कहां ये सुवर्ण के उन्माद? और सुन्दरी प्रियतमाओं के हाव भाव ? कुछ भी महत्व नहीं रखते।

"भोगे रोगभयं, धने जनभयं, वैराग्य मेवाभयम्"

तेजो लेश्या विवृद्धिर्या-साधोःपर्याय वृद्धितः

भाषिता भगवत्यादौ*-सेत्थं भूतस्य युज्यते ॥५॥

अर्थः—चारित्रपर्याय की वृद्धि से साधु को तेजोलेश्या प्रताप और सुखों की जो अभिवृद्धि भगवती आदि आगमों में श्री गण-धर भगवानों ने फरमायी है। वह तेजो वृद्धि ऐसे आत्मानन्दी महात्माओं को ही हो सकती है।

" बार मास पर्याये जेहने, अनुत्तर सुख अतिक्रमिये"

* भगवत्पादैः (पाठान्तरम्)

ज्ञानमग्नस्य यच्छर्म-तदवक्तु' नैव शक्यते ।
नोपमेयं प्रियाश्लेषै-र्नापि तच्चन्दन द्रवैः ॥६॥

अर्थः–आध्यात्मिक ज्ञान में मग्न आत्मानन्दी जीव को जो सुख होता है, वह बताया नहीं जा सकता। उस सुख की प्रियतमा के भावभरे आलिङ्गनों से और चन्दन रस के विलेपनों से भी उपमा नहीं दी जा सकती।

"वचन अगोचर ज्ञान सुख"

शम-शैत्य पुषोयस्य-विप्रुषोऽपि महात्मना
किं स्तुमो ज्ञान पीयूषे–तत्र सर्वाङ्ग मग्नता ॥७॥

अर्थः–कषायों के उपशम को और सन्ताप को मिटाने वाली ठंडक का पोषण करने वाले ज्ञानामृत के जिस एक बूंद की भारी कथा बन जाती है। उस ज्ञानामृत में सर्वाङ्ग सांगोपांग लीनता की हम क्या तारीफ करें ?

ज्ञानामृत की बूंद की बड़ी कथा बन जाय
सम्पूरण की क्या कहूं मुख से कहा न जाय

यस्या दृष्टिः कृपावृष्टि-र्गिरः शमसुधाकिरः
तस्मै नमः शुभ-ज्ञान-ध्यानमग्नाय योगिने ॥८॥

अर्थः–कृपा-वृष्टि करनेवाली जिसकी दृष्टि है, शान्ति सुधा को फैलाने वाली जिसकी वाणी है। उस शुभ आत्म ज्ञान में और शुभ ध्यान में लीन योगी महात्मा के लिये नमस्कार हो।

॥ स्थिरताष्टक ३ ॥

वत्स किं चंचल स्वान्तो, भ्रान्त्वा भ्रान्त्वा विषीदसि
निधिं स्वसन्निधावेव–स्थिरता दर्शयिष्यति ॥ १ ॥

अर्थः–हे वत्स ? चञ्चल चित्तवाला तू भटक भटक कर क्यों दुःख पाता है ? तू स्थिर हो जा। स्थिरता तुझे अपने पास ही आत्मगुणों का खजाना दिखावेगी।

"मन जीत्युं तेणे सघलुं जीत्युं"

ज्ञान दुग्धं विनश्येत-लोभ विक्षोभ कूर्चकैः।
अम्ल द्रव्यादि वास्थैर्या-दिति मत्वा स्थिरोभव ॥२॥

अर्थः–अस्थिरता रूप खट्टे पदार्थ के लग जाने से ज्ञान दुग्ध लोभ विक्षोभ के कूचड़ोंवाला नष्ट भ्रष्ट हो जाता है। ऐसा जान-कर हे मन ? तू स्थिर हो जा।

"जिनवर दर्शन पाय मनवा क्यों तू स्थिर न थाय"

अस्थिरे हृदये चिन्ता, वाङ्नेत्रा कारगोपना।
पुँश्चल्या इव कल्याणकारिणी न प्रकीर्तिता ॥३॥

अर्थः–अस्थिर हृदय में होने वाली वाणी के नेत्रों के एवं आकार गोपन के विचित्र आडम्बरों से कुलटा स्त्री के जैसे कल्याणकारी नहीं होते। स्थिर चित्त किये बिना सारी क्रियायें निष्फल ही होती हैं।

"निष्फलता अस्थिरता मूलक होती है"

अन्तर्गतं महाशल्य–मस्थैर्यं यदि नोद्धृतम्।
क्रियौषधस्य को दोष-स्तदा गुण मयच्छतः ॥४॥

अर्थः–आत्मा के अन्तर्गत अस्थिरता रूप महाशल्य का यदि

शोधन न हुआ हो, और क्रिया रूप औषध लाभ न पहुंचाता हो तो उस में क्रिया का दोष नहीं है, अस्थिरता का ही दोष है।

"सफलता स्थिरता मूलक होती है"

स्थिरता वाङ्मन कायै-र्येषामङ्गाङ्गितां गता।
योगिनः शमशीलास्ते-ग्रामेऽरण्ये दिवा निशि ॥५॥

अर्थः-स्थिरता वाणी मन और काया से अंगांगि पण को चन्दन के गन्ध की तरह तन्मयता जिन्हें प्राप्त है ऐसे योगी लोग, ग्राम, नगर तथा वन में दिन और रात सम स्वभाव वाले रहते हैं।

"योगी सदैव सर्वत्र समस्वभावी होते हैं"

स्थैर्यरत्न प्रदीपश्चेद्, दीप्रः संकल्प दीपजैः
तद्विकल्पैरलं धूमैरलं धूमैस्तथाऽऽस्त्रवै ॥६॥

अर्थः-स्थिरता रूप रत्न का दिया यदि निरन्तर प्रकाशमान है तो चपलता मूलक संकल्प रूप दीपक से पैदा होने वाले विकल्प धुओं से क्या? और पाप मलिन हिंसा झूठ चोरी मैथुन परिग्रह रूप आश्रवों से भी क्या? बेकार हैं। रत्न दीप के मुकाबले में बनावटी तैल दीप में जलन धुएं की मलिनता और तेल के झरने की गंदगी होती है।

"स्थिरता ही रत्नदीप है"

उदीरयिष्यसि स्वान्ता दस्थैर्य पवनं यदि।
समाधे धर्म मेघस्य घटां विघटयिष्यसि ॥७॥

अर्थः-यदि अपने मन के संकल्प विकल्पों से अस्थिरता रूप आंधी को उठावेगा तो धर्म की खेती के लिये लाभदायक समाधि धर्म मेघ की घटा को-अपनी सुखशान्ति को तू नष्ट भ्रष्ट कर देगा।

"संकल्प विकल्पों की आंधी से बचो"

चारित्रं स्थिरता रूपमतः शिद्ध ष्वपीष्यते ।
यतन्तां यतयो ऽवश्य-मस्या एव प्रसिद्धये॥८॥

अर्थः-आत्म गुणों में स्थिरतारूप चारित्र श्री सिद्ध परमात्माओं में भी माना जाता है। हे यतियो, साधनाशील-साधु पुरुषो, इसी स्थिरता की सिद्धि के लिये प्रयत्नशील होओ।

"जीते सो जती, साधे सो साधु"

॥ मोहाष्टकम् ४ ॥

अहं ममेति मन्त्रोऽयं, मोहस्य जगदांध्य कृत् ।
अयमेव हि नञ्पूर्वः-प्रतिमन्त्रोऽपि मोहजित् ॥१॥

अर्थः-मैं और मेरा ऐसा यह जगत को अन्धा बनाने वाला मोह का मन्त्र है। यही जब नकार पूर्व हो जाता है, अर्थात् न मैं हूं, न मेरा कोई है, तो यही मोह को जीतने वाला प्रतिमन्त्री भी बन जाता है।

"मैं और मेरा ही मोह मन्त्र है"

शुद्धात्म द्रव्यमेवाहं, शुद्धज्ञानं गुणो मम ।
नान्योऽहं न ममान्ये चे-त्यदो मोहास्त्र मुल्बणम् ॥२॥

अर्थः-शुद्ध आत्म द्रव्य रूप ही मैं हूँ और दर्शन-चारित्र वीर्यमय शुद्धज्ञान गुण ही मेरा है। इस से भिन्न मैं स्त्री पुरुष रूप नहीं हूँ, न यह शरीर स्त्री पुरुष धन जनादि रूप संसार ही मेरा है, ऐसा यह मोह को मार हटाने का प्रबल अदृश्य शस्त्र है।

"मेरा है सो मेरी पासे अवर सभी अनेरा"

यो न मुह्यति लग्नेषु-भावेष्वौदयिकादिषु
आकाशमिवपङ्केन, नासौ पापेन लिप्यते ।।३।।

अर्थः-जो जीवात्मा लगे हुए कर्मों के औदयिक पारिणामिक आदि भावों में मोहित नहीं होता वह आकाश के जैसे पाप रूप कीचड़ से लिप्त नहीं होता ।

"सम्यगदृष्टि जीवड़ो, करे कुटुम्ब प्रतिपाल"
अन्तर्गत न्यारो रहे, धाव खिलावे बाल

पश्यन्नेव पर द्रव्य-नाटकं प्रतिपाटकम् ।
भवचक्र पुरस्थोऽपि-नामूढः परि खिद्यति ।।४।।

अर्थः-संसार रूप नगर में रहा हुआ सम्यग दृष्टि अमूढ आत्मा चार गति चौरासी लाख योनिरूप प्रत्येक गली में पुद्गलादि पर द्रव्यों के परभाव जनित भौतिक नाटकों को देखता हुआ भी ये पुद्गल के खेल हैं मानता हुआ खेद नहीं करता ।

कबहुक काजी कबहुक पाजी कबहुक हुए अपभ्राजी,
कबहुक जग में कीरति गाजी सब पुद्गल की बाजी ।
आप स्वभाव में रे अवधू ? सदा मगन में रहना ।

विकल्प चषकैरात्मा-पीत मोहासवो ह्ययम् ।
भवोच्चताल मुत्ताल प्रपञ्चमधितिष्ठति ।।५।।

अर्थः-संकल्प विकल्प रूप शराब की प्यालियों से-मोह मदिरा का पिया हुआ ही यह जीव हा हा ? ही ही ? करता निर्लज्ज तालियां पीटता अनेक विडम्बनीय जन्म मरण के प्रपञ्चों में फंसता जाता है ।

"दुखिये जग दारुडिये-पीते की पत जाय"

निर्मलं स्फटिकस्येव-सहजं रूप मात्मनः ।

अध्यस्तोपाधि सम्बन्धो-जडस्तत्र विमुह्यति ॥६॥

अर्थः-स्फटिक रत्न के जैसे आत्मा का स्वाभाविक निर्मल रूप है। स्फटिक के पीछे लाल पीले माली पन्ने लगाने से वह लीला पीला दीखता है, और बच्चे उसे लाल पीला ही मानने लगते हैं। वैसे ही कर्म जनित उपाधि से सम्बन्धित मूर्ख जीव उसी कर्मोपाधि में मोहित हो जाता है। कर्मों के रङ्ग में रंग जाता है-पर कर्मोदय जनित रूप आत्मा का नहीं है।

"निज को मैं भूला, फिर भी फिरता हूं फूला मान में"

अनारोप सुखं मोह-त्यागादनुभवन्नपि ।

आरोप प्रिय लोकेषु-वक्तुमाश्चर्यवान् भवेत् ॥७॥

अर्थः-मोह के त्याग से अनारोप-स्वाभाविक सुख का अनुभव करते हुए भी ज्ञानीजन बनावट प्रिय लोगों में व्यवहार से कहने को आश्चर्यचकित से होते हैं।

"समझ कर बेसमझ रहना तभी आनन्द पाओगे"

यश्चिद्दर्पण विन्यस्त-समस्ताचार चारु धीः ।

क्वं नाम स पर द्रव्ये-ऽनुपयोगिनी मुह्यति ॥८॥

अर्थः-सम्यग ज्ञान रूप दर्पण में स्थापित पवित्रता चार बुद्धि वाला जो महात्मा है वह अनुपयोगी-पर द्रव्यों में कब मोहित हो सकता है ? कभी नहीं।

"ज्ञानी पर प्रपञ्चों से दूर रहता है"

॥ ज्ञानाष्टकम् ५ ॥

मज्जत्यज्ञः किला ज्ञाने विष्टायामिव शूकरः ।
ज्ञानी निमज्जति ज्ञाने-मराल इव मानसे ॥१॥

अर्थः– टट्टी में गडूरिये-सूअर के जैसे अज्ञानी अज्ञानमार्ग काम क्रोध आदि में डूबता है। मानस सरोवर में हंस के जैसे ज्ञानी ज्ञानमार्ग अहिंसा–संयम-तप-आदि में तैरते रहते हैं।

"अज्ञानी है डूबते-तिरते ज्ञानी लोग"

निर्वाण पदमप्येकं-भाव्यते यन्मुहूर्मुहुः ।
तदेव ज्ञान मुत्कृष्टं-निर्बन्धो नास्ति भूयसा ॥ ॥२॥

अर्थः–जिसके द्वारा बार बार एक मोक्ष पद की भावना संस्कारित की जा सके वही ज्ञान उत्कृष्ट है। पुस्तकीय-बाह्य श्रुतज्ञान की अधिकता से कोई आग्रह नहीं है।

"मोक्षमार्ग से शून्य सब, पोथे थोथे रूप"

स्वभाव लाभ संस्कार-कारणं ज्ञान मिष्यते ।
ध्यान्ध्य मात्रमतस्त्वन्य-त्तथा चोक्तं महात्मना ॥३॥

अर्थः–आत्मभाव की प्राप्ति के संस्कार का कारणभूत ज्ञान ही इष्ट है। इससे भिन्न-आत्म भाव के बिना वैषयिक ज्ञान केवल बुद्धि की अन्धता-मात्र है। ऐसे महात्माओं का कथन है।

"आत्म ज्ञान ही सच्चा ज्ञान है"

वादांश्च प्रतिवादांश्च, वदन्तोऽनिश्चितांस्तथा ।
तत्वान्तं नैव गच्छन्ति, तिल पीलक वद् गतौ ॥४॥

अर्थः-जैसे घाणी के बैल की गति में अन्त नहीं आता वैसे ही अनिर्द्धारित आत्मलक्ष्य वाले विद्वान वाद और प्रतिवाद को करते हुए भी तत्व के अन्तिम लक्ष्य-पूर्ण सुख रूप मोक्ष को नहीं पाते हैं ।

"ज्यों घाणी के बैल को, घर ही कोश हजार
त्यों अज्ञानवाद भी होते हैं बेकार"

स्वद्रव्य गुण पर्याय-चर्या वर्यापरान्यथा ।
इति हृत्तात्म सन्तुष्टि-मुष्टि ज्ञान स्थिति मुनेः ॥५॥

अर्थः-अपने आत्म द्रव्य में ज्ञानादि गुणों में एवं अर्थ पर्याय और व्यञ्जना-पर्यायोंरूप परमेष्ठी भावों में जो चर्या-रमणता है वह सत्य है, कल्याणकारी है, और परिणाम में सुन्दर है । इस प्रकार महात्मा महामुनि का आत्म सन्तोष ही मुष्ठी ज्ञान मौलिक ज्ञान का स्थापक है ।

"अपना घर चाहे सो कर, पराया घर डर ही डर"

अस्ति चेद् ग्रन्थि भिज्ज्ञानं, किं चित्रैस्तन्त्रयन्त्रणैः ।
प्रदीपाः क्वोपयुज्यन्ते-तमोघ्नी दृष्टिरेव चेद् ॥६॥

अर्थः-यदि अनन्तानुबन्धी राग द्वेष की गांठ को भेदने वाला ज्ञान किसी में है तो फिर उसे विचित्र तंत्र-अनेक सम्प्रदायों की

अनेक साधना रूप यन्त्रणाओं से क्या ? कोई खास प्रयोजन नहीं। यदि आंखें ही अन्धकार को भेदने वाली हैं, तो दीपक कहां उपयोगी हो सकते हैं ? नहीं

"कषाय मुक्तिः किल मुक्ति रेव"

मिथ्यात्व शैल पक्षच्छिद् ज्ञानदम्भोलि शोभितः।
निर्भयः शक्रवद्योगी-नन्दत्यानन्द नन्दने ॥७॥

अर्थः-वैदिक साहित्यिक परम्परा में वर्णन मिलता है-कि पहाड़ों के पास पांखें होती थीं। वे उड़ते थे और जहां पड़ते थे, वहां नीचे के देश गांव-नगरों का नाश कर देते थे। इन्द्र ने उन पहाड़ों की पांखें अपने वज्र से काट दीं, तब से ये पहाड़ स्थिर हो गये हैं। इसी वर्णन को रूपक बनाते हुए कहते हैं।

अनित्य अनात्म और अशुचि भावों में नित्यता की आत्मा की और पवित्रता की भावना रखने रूप-मिथ्यात्त्व-पहाड़ की पांख काटने वाले-ज्ञानरूप वज्र को धारण करने वाले योगी इन्द्र के जैसे आत्मानंद के नन्दन वन में आनन्दित रहते हैं।

"जय जय नन्दा जय जय भद्दा"

पीयूषम समुद्रोत्थं, रसायन मनौषधम्।
अनन्या पेक्षमैश्वर्यं ज्ञान माहुर्मनीषिणः ॥८॥

अर्थः-लौकिक मान्यता है कि-अमृत समुद्र से उत्पन्न है। रसायन औषधियों से बनता है। ऐसे ही ऐश्वर्य दूसरों के प्रबल

पत्त से होता है। इस लौकिक मान्यता को ध्यान में रखते हुए कहते हैं।

ज्ञान रूप अमृत समुद्र से उत्पन्न नहीं है। ज्ञान रूप रसायन औषधियों से बना नहीं है। ज्ञान रूप ऐश्वर्य दूसरों के अपेक्षा से उत्पन्न नहीं है। ज्ञान तो स्वयं सिद्ध अमृत, रसायन और ऐश्वर्य है।

"ज्ञान गुण लोकोत्तर है"

॥ शमाष्टकम् ६ ॥

विकल्प विषयोत्तीर्णः-स्वभावालम्बनः सदा।
ज्ञानस्य परिपाको यः--स शमः परिकीर्तितः ॥१॥

अर्थः-उत्पादन संरक्षण संवर्द्धन आदि में मेरे तेरे संकल्प विकल्पों से पूर्ण भौतिक विषयों से जो पार हो गया है, जो हमेशा स्वभाव का ही आश्रित है। जो वस्तु स्वरूप की यथावत् जानकारी-रूप ज्ञान का पका हुआ परिणाम है। वही "शम" कहा जाता है।

"ज्ञानस्य फलं शान्तिः"

अनिच्छन् कर्म वैषम्यं ब्रह्मांशेन समं जगत्
आत्माभेदेन यः पश्येदसौ मोक्षं गमी शमी ॥२॥

अर्थः-पूर्व के किये हुए कर्मों से उत्पन्न विषमता को उदासीन भाव से देखता हुआ, जगत के चराचर भावों को पूर्ण ब्रह्म के अंश समान मानता हुआ दूसरों को जो आत्मस्वरूप में अभेद भाव से

देखता है वह शमी-शान्ति को धारण करने वाला मोक्षगामी होता है।

"विषमता में समता को देखने वाला मोक्ष जाता है"

आरुरुक्षुर्मुनिर्योगं-श्रयेद्बाह्य क्रियामपि ।
योगारूढः शमादेव-शुद्धयत्यन्तर्गत क्रियः ॥३॥

अर्थः-संक्लेश पैदा करने वाली चित्तवृत्तियों के निरोध रूप योग में बढ़ने की इच्छा वाला साधक साधु बाह्य क्रियाओं का आश्रय लेता हुआ भी शम भाव से ही योगारूढ़-अन्तर क्रिया करने वाला शुद्ध होता है।

"योगी शमभावी शुची:"

ध्यान वृष्टेर्दयानद्याः शमपूरे प्रसर्पति ।
विकार तीर वृक्षाणां-मूलादुन्मूलनं भवेत् ॥४॥

अर्थः-धर्म ध्यान की दिव्य वृष्टि से दया नदी में शान्ति का पूर बढ़ता है। तब विषय विकारी-किनारे के वासना वृक्ष जड़-मूल से उखड़ जाते हैं।

"विषय विकार मिटें तभी मन होवेगा शान्त"

ज्ञान ध्यान तपः शील-सम्यक्त्व सहितोऽप्यहो ?
तं नाप्नोति गुणं साधु-र्यमाप्नोति शमान्वितः ॥५॥

अर्थः-ज्ञान-ध्यान तप-शील एवं सम्यक्त्व आदि गुणों से सहित साधक साधु भी आश्चर्य है-उस गुणस्थानक को नहीं पाता

जिस गुणस्थानक को कषायों को सम्पूर्ण शान्ति रूप शमभाव से भावित महात्मा पाते हैं।

"कषायों की शान्ति से उच्च गुणस्थानक मिलता है"

स्वयंभुरमण स्पर्द्धि वर्द्धिष्णु समतारसः।
मुनिर्येनोपमीयेत–कोऽपि नासो चराचरे ॥७॥

अर्थः–इस चराचर जगत में ऐसा कोई भी पदार्थ नहीं है जिससे स्वयंभूरमण समुद्र की स्पर्द्धा करने वाले बढ़ते हुए शम रस को धारण करने वाला महामुनि उपमित किया जा सके-नापा जा सके।

"समता समता ही है"

शमसूक्त सुधासिक्तं-येषां नक्तंदिनं मनः।
कदापि ते न दह्यन्ते-रागोरग विषोर्मिभिः ॥७॥

अर्थः–जिनका मन हमेशा रागद्वेष के अभाव से परम शान्त स्वरूपवाले वीतराग की सुभाषित वाणी–सुधा से सिंचित है, वे महात्मा राग द्वेष रूप सांपों की भयंकर विष ज्वालाओं से कभी भी जलाये नहीं जा सकते।

"सांप लिपटे रहते हैं पर चन्दन को जहर नहीं लगता"

गजंद् ज्ञान गजोत्तुङ्गा–रङ्गद् ध्यान तुरङ्गमाः।
जयन्ति मुनिराजस्य-शम साम्राज्य सम्पदः ॥८॥

अर्थः—ज्ञानरूप ऊँचे गरजते हाथियों वाली और ध्यानरूप तेजस्वी घोड़ों वाली मुनि महात्माओं की शम साम्राज्य सम्पदायें जयवन्ती हैं।

"जब आवे सन्तोष धन—सब धन धूल समान"

॥ इन्द्रिय जयाष्टक ७ ॥

बिभेषि यदि संसाराद्-मोक्षप्राप्तिं च कांक्षसि ।
तदेन्द्रिय जयं कर्तुं—स्फोरय स्फार पौरुषम् ॥१॥

अर्थः—यदि तू इस संसार से भयभीत होता है, और मोक्ष को पाने की चाहना करता है, तो अपनी इन्द्रियों को जीतने के लिये भारी पुरुषार्थ को कर।

"इन्द्रिय जीते जीत है—नहीं तो निश्चित हार"

वृद्धास्तृष्णा-जलापूर्णै-रालवालैः किलेन्द्रियैः ।
मूर्च्छामतुच्छां यच्छन्ति—विकार विष पादपाः ॥२॥

अर्थः—तृष्णा जल से पूर्ण इन्द्रियों की क्यारियों से बढ़े हुए विषय विकारों के जहरीले पेड़ भारी बेहोशी पैदा करेंगे।

"विषय विकारों से बचो नहीं तो होगी मौत"

सरित्सहस्र—दुष्पूर—समुद्रोदर सोदरः ।
तृप्तिमान् नेन्द्रियग्रामो-भव तृप्तोऽन्तरात्मना ॥३॥

अर्थः-हजारों नदियों से भी भरा नहीं जा सकता ऐसे समुद्र के पेट को भाई जैसा इन्द्रियों का समुदाय है. वह कभी तृप्त नहीं होता, हे भव्यात्मन् ! यदि सुखो होना चाहता है तो आत्माभिमुख हो कर आत्म गुणों में तृप्त हो ।

"सब सुख की संसार में विषय लीनता सौत"

आत्मानं विषयैः पाशै-र्भववास पराङ्मुखम् ।
इन्द्रियाणि निबध्नन्ति, मोहराजस्य किंकराः ॥४॥

अर्थः-मोहराजा के नौकर रूप से ये इन्द्रियां संसार में रहने से उदासीन आत्माओं को-अपने २ विषयों के पाशरूप बेड़ियों से जकड़ती है ।

"विषय पाश से छूटना-मुश्किल और महान्"

गिरि मृत्स्नां धनं पश्यन् धावतीन्द्रिय मोहितः ।
अनादि निधनं ज्ञान-धनं पार्श्वे न पश्यति ॥५॥

अर्थः-इन्द्रिय सुखों में मोहित मानव पहाड़ की मिट्टी धन मानकर लेने को दौड़ता है, अरे बड़े आश्चर्य की बात है ! कि पास रहे अनादि अनन्त ज्ञान को नहीं दिखता ।

"धन मिट्टी में ढूंढता-विषय मूढ जन अन्ध ।
रहा ज्ञान धन पास में-लखे न हो निर्बन्ध"

पुरः पुरः स्फुरत्तृष्णा-मृगतृष्णानु कारिषु ।
इन्द्रियार्थेषु धावन्ति-त्यक्त्वा ज्ञानामृतं जडाः ॥६॥

अर्थ:—आगे आगे तृष्णा जिसमें बढ़ती है—ऐसी मृगतृष्णा का अनुकरण करने वाले इन्द्रियों के विषयों में मूढ़ जन ज्ञानामृत को छोड़ कर दौड़ते हैं।

"मृगतृष्णा इन्द्रिय विषय—दौड रहे जन मूढ़ ।
परम तृप्ति कारण तजें—ज्ञानामृत गुण गूढ़"

पतङ्गा भृङ्ग मीनेभ—सारङ्गा यान्ति दुर्दशाम् ।
एकैकेन्द्रिय दोषाच्चेद्—दुष्टैस्तैः किं न पञ्चभिः ॥७॥

अर्थ:—पतंगिये—भौंरे, मछलियां, हाथी और हिरण ये एक एक इन्द्रिय के विषय दोष से दुर्दशा को दुःखों को पाते हैं, तो उन पांचों इन्द्रियों के दोषों से क्या दुःख न हो? सब कुछ दुःख हो सकते हैं।

"दुःखों से हटना हो, विषयों से हट जाओ"

विवेक द्विप हर्यक्षैः—समाधि धन तस्करैः ।
इन्द्रियै र्योनजितोऽसौ—धीराणां धुरि गण्यते ॥८॥

अर्थ:—विवेक रूप हाथी को मारने में सिंह के समान और समाधिरूप धन को चुराने में चोर के समान इन्द्रियों से जो न जीता गया हो वह धीर पुरुषों में धुरीण—मुखिया गिना जाता है।

"जितेन्द्रिय पुरुष हो सच्चे पुरुष हैं"

॥ त्यागाष्टकम् ८ ॥

संयतात्मा श्रयेशुद्धोपयोगं पितरं निजम् ।
धृति मम्बां च पितरौ! तन्मां विसृजतं ध्रुवम् ॥१॥

अर्थः—जन्म देने वाली हे माताजी ? हे पिताजी, अब मुझे अवश्य त्याग दें जिससे कि संयमी ऐसा मैं शुद्धोपयोग रूप पिता को एवं धृतिरूप माता को निश्चित रूप से अपना सकूं ।

"शुद्धोपयोग और धृति ही सच्चे माता पिता हैं"

युष्माकं सङ्गमोऽनादि–बन्धवोऽनियतात्मनाम् ।
ध्रुवैक रूपान् शीलादि–बन्धुनाश्रये ॥२॥

अर्थः—अय संसार संबन्धी बन्धुओं ! कभी कोई ऐसे अनियत स्वरूप वाले आप लोगों का सम्बन्ध अनादि काल से चला आ रहा है । अब आप कृपा करके मुझे छुट्टी दें जिससे कि मैं शील सत्य–शम आदि अविचलित एक स्वरूपवाले आत्मगुण रूप बन्धुओं का आश्रय ले सकूं ।

"शील सत्य शम आदि गुण ही सच्चे बन्धु हैं"

कान्ता मे समतैवैका–ज्ञातयो मे समक्रियाः ।
बाह्यवर्गमिति त्यक्त्वा-धर्म संन्यासवान् भवेत् ॥३॥

अर्थः—समता ही एक मेरी प्रिया है । मन–वचन और काया के योगों की समान क्रिया ही मेरे ज्ञातिजन–कुटुम्बी लोग हैं। ऐसा जानकर स्त्री–कुटुम्बी जन रूप बाह्य–परिवार वर्ग को छोड़ कर सच्चा धर्म संन्यासी बने ।

"समता समक्रिया आदि ही त्यागी का सच्चा परिवार है"

धर्मास्त्याज्याः सुसङ्गोत्थाः-क्षायोपशमिकापि ।
प्राप्य चन्दन गन्धाभं-धर्म सन्यासमुत्तमम् ॥४॥

अर्थः–चन्दन की शान्त सुगन्ध के समान उत्तम धर्म सन्यास साधु भाव को पाकर पूर्व पुण्य प्रसंग से पैदा होने वाले कर्मों के क्षयोपशम भाव रूप बाह्य दानादिक धर्म भी सांसारिक बन्धों को बढ़ाने वाले होने से त्याग करने योग्य होते हैं।

"आत्म धर्म ही एक मात्र उपादेय है"

गुरुत्वं स्वस्य नोदेति–शिक्षा-सात्म्येन यावता।
आत्म तत्व प्रकाशेन–तावत्सेव्यो गुरुत्तमः ॥५॥

अर्थः–सद्गुरुओं की शिक्षा के आत्म परिणाम से जब तक निज में हिताहित की जानकारी रूप–आत्म प्रकाश से गुरुत्व पैदा नहीं होता तब तक ही उत्तम गुरु सेवा करने योग्य होते हैं!

"गुण गुरुत्व प्रकटे नहीं–तबतक कर गुरुसेव।
गुण गुरुत्व प्रकटे पिछे–तूं ही गुरु स्वयमेव"

ज्ञानाचारादयोऽभीष्टाः शुद्ध स्वस्वपदावधि।
निर्विकल्पे पुनस्त्यागे-न विकल्पो न च क्रिया ॥६॥

अर्थः–जब तक निज में शुद्ध परमात्म पद पैदा नहीं हुआ तब तक ज्ञानाचारादि आचारों का पालन भी इष्ट है। जिस रोज इस आत्मा का त्याग भाव–उत्तम निर्विकल्प कोटि का हो जायगा तब न विधि निषेध रूप विकल्प रहेंगे और न द्रव्य क्रियाओं का कर्तव्य ही रहेगा।

"निर्विकल्प त्याग भाव में विधि निषेध नहीं रहता"

योग सन्यासतस्त्यागी-योगानप्यखिलां त्यजेत्
इत्येवं निर्गुणं ब्रह्म परोक्तमुपपद्यते ॥७॥

अर्थः–मन–वचन–काया को योगों के रुंधन करने से भाव त्यागी साधु मन वचन काया की योग–प्रवृत्तियों को सम्पूर्ण भाव से त्याग करे। इस प्रकार वेदान्तियों के द्वारा कथित सत्व–रज और तमोगुण से रहित निर्गुण ब्रह्म परमात्व तत्व संगत होता है।

"कभी २ कितनेक गुण भी उपाधि रूप होते हैं"

वस्तुतस्तु गुणैः पूर्ण–मनन्तै र्भासते स्वतः
रूपं त्यक्तात्मनः साधो–र्निरभ्रस्य विधोरिव ॥८॥

अर्थः–द्रव्य विचारणा में वस्तु स्वरूप से आत्मा स्वयमेव ज्ञानादि अनन्त गुणों से पूर्ण भासमान प्रकाशित होता है। बिना बादल के चन्द्रमा के जैसे पूर्ण त्यागी साधुओं का वही रूप है।

साधक होते सिद्ध–आत्मा पूरण ज्ञानी।
कपडा होता शुद्ध– पायकर साबू पानी॥

॥ क्रियाष्टकम् ९ ॥

ज्ञानी क्रियापरः शान्तो–भावितात्मा जितेन्द्रियः।
स्वयं तीर्णो भवाम्भोधेः–परांस्तारयितुं क्षमः ॥१॥

अर्थः–वस्तु स्वरूप जानने वाला ज्ञानी क्रोधादि कषायों से रहित शान्त आत्मभाव में रमण करने वाला भावित आत्मा

विषय · विकारों को दूर हटाने वाला जितेन्द्रिय ऐसा व्यक्ति जब स्वभाव प्राप्ति के लिये क्रिया करने में तत्पर होता है तो वह संसार समुद्र से पारगामी होकर दूसरों को भी पार लगाने में समर्थ होता है।

"ज्ञान क्रियाभ्यां मोक्षः"

क्रिया विरहितं हन्त–ज्ञान मात्र मनर्थकम् ।
गतिं विना पथज्ञोऽपि, नाप्नोति पुरमीप्सितम् ॥२॥

अर्थः–केवल जानकारी रूप ज्ञान, क्रिया से रहित हो तो खेद जनक और अनर्थक व्यर्थ होता है। ठीक तो है गमन क्रिया रहित पथज्ञ-मार्ग को जानने मात्र से इच्छित नगर को नहीं पहुंच पाता है।

"क्रिया हीन ज्ञान व्यर्थ होता है"

स्वानुकूलां क्रियां काले, ज्ञान पूर्णोऽप्यपेक्षते ।
प्रदीपः स्वप्रकाशोऽपि तैल पूर्त्यादिकं यथा ॥३॥

अर्थः–ज्ञान पूर्ण व्यक्ति भी मौके पर अपने अनुकूल क्रिया की अपेक्षा रखता है। जैसे प्रकाशमान दीपक भी तैल पूर्ति आदि की।

"क्रिया से ज्ञान-तैल से दीपक प्रकाशमान होता है"

बाह्यभावं पुरस्कृत्य–ये क्रियां व्यवहारतः ।
वदने कवल क्षेपं विना ते तृप्ति कांक्षिणः ॥४॥

अर्थः–अध्यात्मिकाभास मात्र पाखण्डी धूर्त हैं, वे जन क्रिया का बाह्य भाव मात्र प्रमुख मान कर व्यवहार से भी क्रिया की

अकर्तव्यता मानते हैं वे मुख में ग्रास दिये बिना ही भूख मिटाना चाहते हैं।

"बाह्यभाव मात्र मानकर क्रिया का अपलाप करना धूर्तता है"

गुणवद् बहुमानादे-र्नित्य स्मृत्या च सत्क्रिया।
जातं न पातयेद् भाव-मजातं जनयेदपि ॥५॥

अर्थः-गुणी जनों के बहुमानादि से और नित्य स्मरण से सत्क्रिया होती है। वह सत्क्रिया पैदा हुए भावों को गिरने नहीं देती और अनुत्पन्न भावों को पैदा भी करती है।

"क्रिया भाव का मूल है"

क्षायोपशमिके भावे या क्रिया क्रियते तया,
पतितस्यापि तद्भाव-प्रवृद्धि र्जायते पुनः ॥६॥

अर्थः-क्षायोपशमिक भाव में सदनुष्ठानरूप अच्छे आचार पालन की जो क्रिया की जाती है, उससे कभी कभी प्रमाद भाव से गिरी हुई आत्मा के भी भावों में फिर से अभिवृद्धि हो सकती है।

"सत्क्रिया पतित को भी ऊँचा उठाती है"

गुणवृद्ध्यै ततः कुर्यात्-क्रिया मस्खलनाय वा
एकं तु संयम स्थानं-जिनानामवतिष्ठते ॥७॥

अर्थः-गुणों की वृद्धि के लिये एवं प्राप्त गुणों की रक्षा के लिये अवश्यमेव क्रिया करें। क्योंकि तीर्थंकरों के भी एक संयम स्थान क्षायिक-यथाख्यात चारित्र पालनरूप होता ही है।

"आत्म स्थिरता के लिये क्रिया आवश्यक है।"

वचोऽनुष्ठानतोऽसङ्ग-क्रिया सङ्गतिमङ्गति ।
सेयं ज्ञान क्रिया भेद-भूमिरानन्द पिच्छला ॥८॥

अर्थः-जिनवाणी-श्रुतज्ञान के द्वारा समाधि-रूप असंग क्रिया की योग्यता-प्राप्त होती है। वही ज्ञान क्रिया की अभेद भूमिरूप साधकता आनन्द से पूर्ण होती है।

"ज्ञान क्रिया की अभेदता से आनन्द होता है"

गुरु स्तुति

॥ ॐ ॥

(राग—महावीर तुम्हारी मनहर मूर्ति)

गुरुदेव तुम्हारे चरण कमल में, वंदन वारंवार,
गुरुदेव परम उपकारी, मैं चाहुं शरण तिहांरी,
है महिमा अपरंपारी रे, सुरगुरु पार न पाय। गुरु. १
श्रद्धा के पुष्प चढावुं, गुरुचरणे शीष नमावुं,
अन्तर ज्योति जगावुं रे, हृदय कमल मजार। गुरु. २
गुरुवर स्वर्ग सिधारे हमको छोड़ गये क्यों प्यारे
आंखों से आंसू सारे रे, हो गए निराधार। गुरु. ३
तुम ही हो माता पिता, स्वजन सबन्धि भ्राता,
नहीं और संसारे त्रातारे सब स्वार्थिया परिवार। गुरु. ४
मैत्रि प्रमोद विशेष, नहीं राग द्वेष लवलेश
कारुण्य मध्यस्थ प्रशस्यरे, वात्सल्य भाव भंडार। गुरु. ५
अपूर्व समाधि भारी, सोहं सोहं जप धारी,
अगणित गुणगण क्यारी रे, मैं जावुं तुम बलिहार। गुरु. ६
संवत दो हजार अठागर, शुभ फाल्गुण चतुर्दशी सार,
मंगल अमंगल कार रे, ले गया काल कराल। गुरु. ७
ज्ञान वल्लभ वल्लभ जन ने, है भक्त जनो के मन ने,
जिन भक्ति भाव भरो दिल में रे, प्रवीण प्रवीणता सार। गुरु. ८

❀ "श्री मत्सुख सागरजी महाराज सा० की स्तुति" ❀

यथाप्राणा नराधारास्तथैव सुखसागरः ।
नित्यं नमामि नाथत्वं त्वमेव शरणं मम ॥१॥

चखान दुष्टकर्माणि दिव्यज्ञान दिवाकर ।
चारित्र रत्न भण्डार दर्शनं विमलं कृतम् ॥२॥

दानशील तपोभाव अष्टमातृ परायणः ।
आबालब्रह्मचारी च भाविता भावना सदा ॥३॥

कषाय मद निद्रादि पञ्चेन्द्रियाणि शेषतः ।
जितानिहास्य जिन्नूनं वैरिणी विकथाजिता ॥४॥

निर्जितौ काममोहौ च रागद्वेष विवर्जितः ।
धौत सकल मिथ्यात्वं सम्यक्त्व रागरंगितः ॥५॥

नयनिक्षेप संवेत्ता गुणस्थानं विशेषतः ।
विजानासि गुणग्राहिन् स्याद्वादश्च महारसम् ॥६॥

पवित्रनाम जापेन ज्ञानादि सकलं फलं ।
लभन्ते सर्वधीमन्तः नैवात्र कोपिसंशयः ॥७॥

त्वमेव प्राणकाधारः त्वमेव हितकारकः ।
त्वमेव सुखसौन्दर्यः त्वमेव भवतारकः ॥८॥

त्रैलोक्य सिन्धोर्भवतापहर्तुगुरोः प्रसाद प्रभुतांकितान्तः ।
तस्यैव सानन्द सुखाम्बुराशेः पादौसदानन्द रसेननौमि ॥९॥

॥ खरतरगच्छीया क्षमागुण विभूषिता स्वर्गीया ॥
पूज्या श्रीमती जी ज्ञान श्रीजी म. सा का स्तुतिः रूप पंचक

(राग) भारत का डंका आलम में:

जिसने निज जीवन शान्त सुधारस से,
परिपूर्ण बनाया था ।
जिसने जीवन में अनुभव का,
अमृत को भी अपनाया था ॥
जिसने सद्भाव परस्पर में,
अनुमोदन योग्य बताया था ।
विनयादि गुण से ज्ञानश्री ने,
विरति के फल को पाया था ॥१॥
है धन्य पिताजी मुकनचंद,
जिस का गृह पावन कारी किया ।
फिर धन्य धन्य कस्तूरी है,
जननी ने तुझ को जन्म दिया ॥
संसारी 'नाम जड़ाव' दिया,
तो जीवन रत्न जड़ाया था ।
विनयादि गुण से ज्ञानश्री ने
विरति के फल को पाया था ॥२॥
अपने में ज्ञान विषय की ज्योत,
ज्वलंत सदा ही दिखलाई थी ।
निज जीवन में आत्म चिंतन बिन,
और न बात बतलाई थी ॥

परिणामें आत्म विकास बनाकर,
जीवन सफल बनाया था ।
विनयादि गुण से ज्ञानश्री ने
विरति के फल को पाया था ॥३॥
रात्रि में सोते लोग सभी तब,
जागृत आप सदा रहते ।
सोऽहं सोऽहं ध्यान लगाकर,
तनमय हो संकट को सहते ॥
अनुपम ज्ञान ध्यानादि गुण को ।
जीवन में बतलाया था ।
विनयादि गुण से ज्ञानश्री ने,
विरति के फलको पाया था ॥४॥
स्व निंदा गुणीजन स्तवना,
निशदिन आप किया करते ।
पंच विगय त्यागरूपतप को,
आजीवन गुरुवर्या धरते ॥
हो धन्य जीवन हो धन्य जीवन,
संयम को खूब दिपाया था ।
विनयादि गुण से ज्ञानश्री ने,
विरति के फल को पाया था ॥५॥

लेखक
श्री मावजी दामजी शाह
मुम्बई

(तर्ज—तेरी प्यारी प्यारी सूरत को)

अति प्यारी प्यारी मनहारी, तव देव लोक अभियान वल्लभ श्री जी...
सूरज की लाली लोहावट, गोगा माते चमकान, वल्लभ श्रीजी...।।टेर।।

इक्कावन में जन्मीं आप, दिक्षा लीनी इकसठ साज।
दशवर्षी ब्रह्मचारी बाला, चमक उठी चहुतरफ समाज।।
शासन उजवाला ज्योति से, मां की गुरुणी जी महान
।।वल्लभ श्री जी।।१।।

शिव श्री जी की शिष्या थीं, धर्म ध्यान अनुरक्ता थीं।
सुख कविन्द्र की अनुयायिनी, श्रावक की प्रिय वक्ता थीं।।
ऐसी थीं खरतर गुरुवर्या, सम चंदन बाला जान
।।वल्लभ श्री जी।।२।।

प्रवर्तनी के काज भूरे, नगर अमलनेर लोक बडे।
वल्लभ समाजी सहुहित काजी, अनुयायी तब आन खडे।।
"पीया" हम मांगत आशीष बडी, सम मेरु पर्वत जान
।।वल्लभ श्री जी।।३।।

प्रियंकर "पीया"

(तर्ज :—जरा सामने तो आओ)

मन मोहनी मूरतो चली गईं, अति सलोनी सूरतो चली गईं ।
जन जीवन को शोक में डुबो गईं, शिष्याएं अनाथ सारी हो गईं ॥

सूरज के कुल लोहावट नगर में, पारख जाति अति धन्य महा ।
रत्नों की ज्योति अनमोल मोती, ऐसा दिखा ना अन्य कहां ॥
आजीवन थी बाल ब्रह्मचारिणी, सहु जीवों की थी हितकारिणी
॥जन जीवन ॥१॥

वचनों में जादू करता था काबू, पाप पुलिन्दे हटाती थी ।
मधुरी मनोहर मीठी भाषा, सदियों की याद दिलाती थी ॥
बीस मार्च निर्दयी आज है, जिसने छीना हमारा सरताज है
॥जन जीवन ॥२॥

ओ मनहारी पर उपकारी, तुमको विदाई देते हैं ।
संघ सभी हम आज यहां पर, नाम प्रभु का लेते हैं ॥
अनुयायी खड़े सहु आज हैं, पीया गूँजत घन की गाज है ।

॥जन जीवन ॥३॥

प्रियंकर "पीया"

"सद्गत परमपूज्या प्रवर्तिनी जी महाराज को श्रद्धांजलि"

लेखक चंदनमल नागोरी, छोटी सादड़ी (मेवाड़)

संवत् २००६ में श्रीमती विदूषी पूज्या प्रमोद श्री महाराज साहब का पदार्पण छोटी सादड़ी हुवा। आपकी व्याख्यान शैली से श्रोताओं पर बहुत प्रभाव पड़ा। उसके उपलक्ष में चातुर्मास की विनती की गई। आपने स्वीकार भी किया और श्री केशरिया जी की तरफ प्रयाण करते हुवे उदयपुर पधारना हुवा। अचानक व्याधिग्रस्त हो जाने से छोटी सादड़ी की ओर विहार न कर सके। चातुर्मास समाप्त होने के बाद कुछ दिनों में ही श्रीमती विदुषी, बाल ब्रह्मचारिणी आर्या श्री वल्लभ श्री जी का आगमन केशरियाजी के लिये हुवा और इन दोनों के समागम में श्री प्रमोद श्री जी ने विशेष रूप से कहा कि आप चातुर्मास छोटी सादड़ी अवश्य करियेगा। वैसे मेरा परिचय दीर्घकाल से था और जब आपका चातुर्मास 'मंदसौर' हुवा उस समय श्रीमान् सूबा साहब श्री रहीमतुल्ला खाँ साहब श्रीमती विदुषी वल्लभ श्री जी के व्याख्यान में नित आया करते थे। हिंसा विरोधी व्याख्यान बहुत दिनों तक चला और उसका प्रभाव सूबा साहब पर विशेष रूप से हुवा, जिसके उपलक्ष में आपने सरकारी तौर से आज्ञा दी कि 'जीरण' तालाब पर शिकार के लिये लोग आया करते हैं और बड़ी २ मछलियाँ और मगर होने से विशेष रूप से सोलजर (सिपाही) नीमच से आया करते थे। आपने शिलालेख तालाब के लिये रोपण कराये और सूचना दी कि तालाब पर कोई मछलियों का शिकार न करे। उसका पालन आज तक हो रहा है। उस समय से मैं परिचित था। दर्शनार्थ मंदसौर भी गया था।

अतः आपका पदार्पण केसरियाजी की ओर होने की सूचना मिलते ही, संघ के प्रतिनिधि सहित में उदयपुर पहुंचा तो मालूम हुवा कि आप केसरिया जी की ओर रवाना हुवे, तो अर्धमार्ग में ही आपके दर्शन हो गये। मोटर से उतर कर जहां आप ठहरी थी, जाकर चातुर्मास की विनती की। आपने

उदयपुर के मुकाम पर निश्चयात्मक उत्तर देने को कहा। वापसी पर उदयपुर आये और स्वीकृति प्रदान की। जब आप विहार करके 'करेड़ा' पहुंची तो संघ की ओर से चार श्रावक सेवामें पहुंच गये और आपको 'छोटी सादड़ी' ले आये। बड़े उत्साह और धूम-धाम के साथ आपका प्रवेश कराया। व्याख्यान वाणी से श्रोता मुग्ध हुये। इतने में मंदसौर श्री संघ की ओर से मुख्य प्रतिनिधियों का आगमन हुआ। आपने चातुर्मास के लिये किसी को भेजने की विनती की। उत्तर में आपने कहा कि मैंने 'छोटी सादड़ी' के लिये विनती स्वीकार कर ली है। अतः यहां के संघ की इच्छा हो और कहें तो मैं भेज सकती हूँ। उपकार का काम तो था ही, मंदसौर संघ के साथ निकट का सम्बन्ध था। प्रतिनिधि प्रभावशाली थे। उनकी विनती को मान देकर निवेदन किया कि आप जिसे योग्य समझें भेज देवें। हमारा कोई विरोध नहीं है। परिणाम स्वरूप आपने श्रीमती जिन श्री जी महाराज जो व्याख्याता और द्रव्यानुयोग के जानकार हैं भेजी।

चातुर्मास दरम्यान में अट्ठाई महोत्सव बहुत ठाट बाट से कराने के लिये संघ की ओर से मेरे नाम आमंत्रण आया और उपस्थित होकर अट्ठाई महोत्सव का काम सुचारु रूप से पूर्ण कराया। छोटी सादड़ी में कई पूजाएं प्रभावनाएं हुईं। बाहर से आने वालों के लिये चौका जारी किया गया। कई ग्रामों के भक्तजन दर्शनार्थ आये और अपूर्व आनन्द रहा। आप कुछ व्याधिग्रस्त हो गई थी। उसका उपचार डॉक्टरी और आयुर्वेदिक विशेष रूप से कराया गया। स्वास्थ्य भी सुधर गया था।

छोटी सादड़ी में स्वप्न व पालना नहीं होने से आपके उपदेश से पचास तोला चांदी स्वप्न के लिए अमुक व्यक्तियों ने दी और पालने के लिए रुपयों का चन्दा हो गया, योजनानुसार बन भी गए। आप नित्य प्रति लगभग तीस श्रावकों को थोकड़े सिखाते थे, श्राविकाओं में तो विशेष अध्ययन चलता था, कुछ समय जाने बाद फलोधी में प्रवर्तिनीजी के स्वर्गस्थ होने का तार आया, देववन्दन किया गया। पूजाएं पढ़ाई गईं और संघ की ओर से प्रवर्तिनी पद देने बावत से लाने में बिराजित श्री आचार्य महाराज को पत्र लिखा, तार भी दिया और वर्णन किया गया कि,

श्लोक

गीतार्थो कुलजाऽभ्यस्त–सत्क्रिया परिणामिकी ॥
गम्भीरोभयतो वृद्धा स्मृताऽऽपि प्रवर्तिनी ॥

धर्म संग्रह ॥१३७॥

भावार्थ-साध्वी भी गीतार्थ कुलवती, सर्व क्रियाओं में कुशल, प्रौढ, बुद्धिमति गम्भीर आदि गुणों से वृद्ध हो, तो प्रवर्तिनी पद योग्य होती हैं।

गीतार्थ-अर्थात् श्रुतज्ञान उत्सर्ग अपवाद व्यवहार निश्चय द्रव्य क्षेत्र काल भाव को समझने वाली हो।

कुलजा–उत्तम कुल में जन्म हुआ हो और सर्वपक्ष उत्तम हो।

अभ्यस्त सत्क्रिया–प्रति लेखनादि सर्व क्रिया में दृढ़ चित्त से अभ्यास करने वाली हो।

गम्भीरा–गंभीर, धैर्यवान, संकट के समय शोकातुर न हो, शोक का त्याग करने वाली, सुख दुख में समान भाव से रहने वाली।

उभयता वृद्धा–दीक्षा पर्याय और वय दोनों में वृद्धा हो तो प्रवर्तिनी पद योग्य होती है।

सद्गुणंवियोगे तु, गणीन्द्र वा प्रवर्त्तनीम् ॥
स्थापयेत्स महापाप, इत्युक्तं पूर्वसूरिभिः ॥

धर्म संग्रह ॥१३८॥

भावार्थ–उक्त गुणों के अभाव में जो अयोग्य मुनि को गच्छाचार्य पद और साध्वी को प्रर्वातनी पद दिया जाय तो महापाप होता है; ऐसा पूर्वाचार्यों ने कहा है। ऐसा ही लेख पञ्च वस्तु ग्रंथ में भी है।

साथ ही विनती की गई कि लाभालाभ देख कर आज्ञा दीजिये।

प्रयत्न करने से उत्तर आया कि पदस्त किये जांय। आश्विन पूर्णिमा का शुभ दिन है, विधान चंदनमल नागोरी करावें और चद्दर समर्पित करें। संघ में आनन्द छा गया, कुंभ स्थापना के वाद उत्सव जारी हुवा, आस-पास के गांवों से और छावनी-मंदसोर से भी प्रतिनिधि आये और समारोह के साथ प्रवर्तिनी पद से विभूषित किये गये। उपलक्ष में कई जगह उपकरण आदि भेंट स्वरूप भेजे, रत्थोत्सव हुवा जिसके फोटो लिए गए, उनमें से तीन दृश्य पाठकों के सामने हैं।

चातुर्मास पूर्ण होने के बाद आपका विहार हुवा, संघने विनती की कि भविष्य में एक चातुर्मास के लिए शीघ्र पधारिये, आपकी भावना भी थी परंतु अस्वस्थता के कारण पूरी नहीं हो सकी यह देन शिष्या परिवार देगा, ऐसी आशा है।

आपकी शिष्या भी सुयोग्य है। कई व्याख्याता हैं, संघ संगठन सराहनीय है, श्रीमती पूज्या ज्ञान श्रीजी महाराज की दस शिष्या जिनमें सर्वोपरि श्री प्रधान श्रीजी महाराज, सद्गत प्रवर्तिनी जी महाराज की ग्यारह शिष्या। जिनमें सर्वोपरि श्री जिनश्रीजी महाराज समुदाय के कार्य का भार दोनों पर हैं, प्रार्थना करते हैं कि शासन हित के लिए शासन देव सहायक होवें और शासनोन्नति में बल बुद्धि की वृद्धि हो।

श्री पूज्या प्रवर्तिनीजी के स्वर्गगमन पश्चात प्रवर्तिनी पद से पूज्या महोदया श्री प्रमोद श्रीजी साहिबा को विभूषित किये हैं जिसके लिए बधाई और मंगल कामनाएं करते हैं।

श्रमणोपासक सेवक

छोटी सादड़ी (मेवाड़) — चंदनमल नागोरी

खरतरगच्छाधीश श्रीमत्सुखसागरजी म. सा. की समुदायवर्तिनी श्रीमती ज्ञानश्रीजी म. सा. एवं श्रीमती बालब्रह्मचारिणी प्रवर्तिनी वल्लभश्रीजी म. सा. के स्मारक में आर्थिक सहयोग देने वाले सद्गृहस्थो की शुभ नामावली।

१००१) रामलाल बुधमल लुंकड़, धमतरी (सी. पी.)
१००१) चुनीलालजी चंपालालजी कोठारी दुर्ग ,, ,,
१००१) कमलाबेन भ्र. चंदुलाल जमनादास ग्रहमदाबाद (गुजरात)
७०१) नेमिचंदजी जेठमलजी पारक राजिम (सी. पी.)
५०१) संपतलालजी भंवरलालजी पारक धमतरी (सी. पी.)
५०१) जमनालाल जी दुगड़ धमतरी (सी. पी.)
५०१) घुड़मलजी कन्हैयालालजी पारक धमतरी (सी. पी.)
५०१) प्रतापमलजी जेठमलजी दुगड़ ,, ,, ,,
५०१) विजयलालजी केशरीचंदजी पारक जगदलपुर (सी. पी.)
५०१) दीपचंदजी मनोरमलजी सींगी कुसुमकसा ,, ,,
५०१) माणेकलालजी जवरीलालजी कोठारी दुर्ग ,, ,,
३५१) भैरुदानजी माणेकलालजी नाहर धमतरी ,, ,,
३५१) कंवरलालजी मोतीलालजी दुगड़ ,, ,, ,,
३०१) भानीरामजी जीवराजजी राखेचा ,, ,, ,,
३०१) अगरचंदजी सुगनमलजी वंगानी ,, ,, ,,
३०१) नेमिचंदजी अनोपचंदजी कोठारी कुसुमकसा ,, ,,
३०१) वीसनचंदजी लालचंदजी कोचर दुर्ग ,, ,,
२५१) चतुर्भुजजी भंवरीलालजी बुरड़ बलोद ,, ,,
२५१) रमण भाई मंगलदास शाह मुम्बई गुजरात
२५१) कुनणमलजी राणुलालजी पारक धमतरी (सी. पी.)
२५१) नेमिचंदजी अचलदासजी कोटड़िया ,, ,,
२५१) वींजराजजी मूलचंदजी गोलेछा ,, ,,
२०१) जुगराजजी ओस्तवाल की धर्मपत्नी जेठीबाई तीवरी, राजस्थान

२०१) नेमिचंदजी कोचर की धर्मपत्नी नाथी बाई फलोदी ,,
२०१) पृथ्वीराजजी मेघराजजी पारख धमतरी (सी. पी.)
२०१) बागमलजी प्रेमराजजी सेठीया ,, ,,
२०१) गेनमलजी विजयलालजी पारक नवापारा ,,
२०१) बनेचंदजी हणुतमलजी पीचा महासमुंद ,,
२०१) मेघराजजी बक्तावरमलजी श्री श्रीमाल महासमुंद (सी. पी.)
२०१) भीमराजजी चोपड़ा दुर्ग (सी. पी.)
२०१) पानाचंद भाई गुलाबचंद भाई धुलिया खानदेश
१५१) जुगराज जी धनराज जी लुंकड़ धमतरी सी. पी.
१५१) नेमिचंद जी अमरचंद जी चोपड़ा ,, ,,
१५१) हजारीमलजी चतुर्भुजजी बंगानी ,, ,,
१५१) धनराजजी भंवरलालजी पारक ,, ,,
१५१) श्रीचंदजी लालचंदजी छाजेड़ ,, ,,
१५१) जोगराजजी खेतमलजी गुणधर कुसुमकसा ,,
१५१) तिलोकचंदजी भीमराजजी श्री श्रीमाल बलोद ,,
१५१) सतीदानजी केवलचंदजी गुलेछा नवापारा ,,
१५१) राणुलालजी भंवरलालजी पारक दुर्ग ,,
१५१) विनोद भाई पादरा गुजरात
१०१) वस्तीमल जी उत्तमचंद जी लोढा धमतरी सी. पी.
१०१) तेजमलजी घेवरचंदजी पारक ,, ,,
१०१) पारसमलजी गुलेछा ,, ,,
१०१) मिश्रीलालजी जशराजजी कोचर ,, ,,
१०१) सोभागमलजी लुणकरणजी बुरड़ ,, ,,
१०१) भभूतमलजी लुणकरणजी पारक ,, ,,
१०१) गंभीरमलजी नेमीचंदजी बरड़िया ,, ,,
१०१) ठाकुरलालजी कनैयालालजी चोपड़ा ,, ,,
१०१) माणेकलालजी कनैयालालजी पारक ,, ,,
१०१) संपतलालजी नथमलजी कोठारी दुर्ग ,,

१०१)	पाबुदानजी भंवरलालजी पारक नवापारा		,,
१०१)	जेठमलजी प्रतापचंदजी बंगानी	,,	,,
१०१)	रामुलालजी छगनमलजी लुणीया महासमुंद		,,
१०१)	एम. पी. राइस मील	,,	,,
१०१)	भीखमचंदजी भंवरलाजी लोढा	दुर्ग	,,
१०१)	मीश्रीलालजी गेंदमलजी लोढा	,,	,,
१०१)	मोतीलालजी पारक	बेटावद	खानदेश
१०१)	दुर्गाबाई	फलोदी	राजस्थान
१०१)	नरसीभाई	गंभीरा	गुजरात
१०१)	शकराभाई	,,	,,
१०१)	शांतिभाई चकुभाई पादरा		,,

शोक प्रस्ताव-श्रद्धांजलि

श्री श्री साध्वी श्री जिन श्रीजी महाराज साहिबा

आदिठाणा १३ की सेवा में

दादावाड़ी अमलनेर

योग्य श्री धरणगांव से जैन श्री संघ का विधि पूर्वक वन्दना स्वीकार हो। प्रातः स्मरणीय अ. शा. प्र. स्व. साध्वीजी श्री बल्लभ श्रीजी महाराज साहब का देवलोक सिधारने का समाचार तारीख २०-३-६७ की रात्रि को ७ बजे फोन से मिलते ही सारे संघ में शोक की छाया पसार गई। सारे समाज की मीटिंग बुलाई गई। शोक प्रस्ताव पास किया गया और इनकी यादगार प्रित्यर्थ ता० २१ को सारा व्यवहार बन्द रखा गया। श्री जिन शासन देव से यही प्रार्थना की गई कि उनकी स्वर्गस्थ आत्मा को चिर शान्ति मिले और शिष्य मंडली को धैर्य धारण करने की हिम्मत दे।

श्रद्धांजलि

अर्पण करने के लिए धरणगांव श्री संघ अंतिम संस्कार के ठीकाने पर हजर था। परन्तु अंतिम संस्कार के कार्यकर्त्ताओं ने श्रद्धांजलि अर्पण करने वालों के नाम कम कर दिये गए हैं। ऐसा लाउड स्पीकर पर जाहिर करने से हमें निराश होकर वापिस जाना पड़ा है, तो भी हम हमारी श्रद्धांजलि कविता रूप में भेज रहे हैं।

श्री वल्लभ श्रीजी म. साहिबा
के पवित्र चरणों में श्रद्धांजलि

प्रात: स्मरणीय अ. बा ब्र. साध्वी श्री. श्री. स्व.

श्री वल्लभ श्री जी म. साहिब

के पवित्रचरणों में श्रद्धांजलि

गए छोड़ हमें मजधार, गुरु तुम आज, छाया अंधियारा
अब किसका लेऊं सहारा ॥१॥

उस दिव्य किरण से भक्तों के, अंतरसे ज्योति चमकी थी,
अब मुरझा मन ये करे हमेशा पुकारा,
अब किसका लेऊं सहारा ॥२॥

गुरु दर्शन करने जब आते थे, संसार को भूल ही जाते थे,
इस नैया को अब कौन रहा खेवैया,
अब किसका लेऊं सहारा ॥३॥

संवत् २०१३ में इस नगरी आप पधारे थे,
नही भूलेंगे हम गुरु उपदेश तुम्हारा ।
अब किसका लेऊं सहारा ॥४॥

जब याद आपकी आवेगी, तब छाती भर भर जावेगी,
अब कहो ! कौन इस दुनिया में हमारा ।
अब किसका लेऊं सहारा ॥५॥

श्री संघ धरणगांव नतमस्तक श्रद्धांजलि अर्पण करते हैं,
नित अमर रहे गुरु आत्मा भव में तुम्हारा ।
अब किसका लेऊं सहारा ॥६॥

दास 'अनूप' की यही विनती स्वीकारो, गुरुजी प्रणाम हमारा ।
अब किसका लेऊं सहारा ॥७॥

छोड़ गये महावीर (राग) ॥ ॐ ॥

॥ प्र. वल्लभ श्रीजी म. सा. की विरह गहुली ॥

पूज्या जिनश्री कृत

क्यों छोड़ चले गुरुवर, हमें अकेले छोड़ गये ।
भूल गये गुरुवर, इस मोह भरी दुनिया सबे ॥टेर॥
राजस्थान लोहावट नगरे, पारक गोत्र सुधाम ।
पिता सुरजमल मात गोगा देवी, वरजु कुमारी शुभनाम ॥१॥
उगणिसे एकावन जन्मे, इगसठ दीक्षा सार ।
दो हजार दश छोटी सादडी, प्रवर्तिनी पद धार ॥२॥
मरुधर गुर्जर देश मालवा, महाराष्ट्र पावन कीना ।
रायराणा प्रतिबोध गुरुवर, शासन रसिये कीना ॥३॥
निर्मल ज्ञान ध्यान रस भीना, संयम गुण अविकारा ।
वचन अखंड अमोघ प्रचारा, वर्षे अविछिन्न धारा ॥४॥
वाद-विवाद और राग द्वेष से, दूर निरंतर रहते ।
गुणी जनों को देख सदाही, अनुमोदन नित्य करते ॥५॥
जी जी करते जीभ सूकती, प्यार अति दिल धरते ।
अंत समय सहु कोही विसारी, स्वर्ग सीधारे हर्षे ॥६॥
शांत सुधारस करुणा सागर, उपशम भावे भरिया ।
प्रयाण समय निज चरण अंगुठे, अमीरस झरणा झरिया ॥७॥
दो हजार आढार फागुण सुद चवदश मंगलवार ।
अमलनेर श्री संघ सकल में, छाया शोक अपार ॥८॥
उसी रात को तीन सुपन से, निज दिव्य स्थान बतलाये ।
सिद्ध गिरीकी यात्रा करते, जिन मंदिर में आये ॥९॥
मरी उपद्रव निकट न आवे, स्मरण से सुख पावे ।
ज्ञान वल्लभ गुरु चरण कमल में, जिन सादर शीप नमावें ॥१०॥
क्यों छोड़ चले गुरुवर, हा हमें अकेले छोड़ गये ॥इति॥

॥ ॐ ॥

॥ पू. प्र. गुरु गुण गहूँली ॥

श्रीमती जिनश्री कृत

॥ आरति उतारुँ वासुपूज्य की आरति उतारुं आज ॥

(राग.)

गुरुवर परमाधार, मेरे जीवन के आधार।
दुर्गति पड़ते वार मुझको भवसायर से तार ॥टेर॥
बाल ब्रह्मचारी, संयम धारी।
वल्लभ वल्लभ नाम उच्चारी।
हुवे शासन शिरताज, गुरुवर गुरु आज्ञा शिरधार ॥१॥
क्रोधादिक दुर्गु णको तारी।
आतम उज्जवल ध्यान बिचारी।
किया शास्त्र अभ्यास, गुरुवर किया है जन उपकार॥२॥
प्रगट प्रभावी, मधुर वाणी।
देश विदेश में कीर्ति प्रसारी।
स्मरे भक्त समाज, गुरुवर तुम गुण शक्ति अपार ॥३॥
चमत्कार गुरु अतिशय भारी।
प्रत्यक्ष देखा जनता सारी।
करते आश्चर्य अपार, गुरु के चरणे शीश झुकाय ॥४॥
ज्ञान वल्लभ गुरु चरण शरण में।
अर्ज करते हैं जिन प्रति क्षण में।
करजो मुझ संभाल, गुरुवर भवभव तुम आधार ॥५॥
जीवन के आधार, गुरु को स्मरूं दिवसने रात ॥इति॥

पूज्यश्री प्रवर्तिनी वल्लभ श्रीजी म. साहिब

की

गुरु भक्त परम शिष्या

तथा

इस पुस्तक की प्रेरणादात्री

साध्वी श्रेष्ठा पूज्यश्री जिन श्रीजी महाराज साहिब

के

कर कमलों में सादर समर्पण

कांतिलाल चोरड़िया

श्री परमपूज्या श्री जिनश्रीजी साहिबा

आप सेवाभावी, गुरुणी भक्ति परायणा हैं

पूर्वाचार्यों की स्तुतिरूप अष्टक

रचयिता:-श्री मावजी दामजी शाह

१

जिनेश्वर सूरि।

सब से पहिले चैत्यवास को जिस सूरिने हटा दिया,
उच्च उपाधि खरतर नायक जिस सूरिने प्राप्त किया।
शासन के रक्षक सूरिवर ने जनता का कल्याण किया,
जिन युत ईश्वर सूरिवर को सब जनताने नमन किया।

२

अभयदेव सूरि।

जिनधर्म सुनाकर अपनी जिसने प्रभावशीलता दिखलायी,
नव अंग विषय की वृत्ति बनाकर शासन गुरुता बतलायी।
खरतर मत के रक्षक होकर आप बने थे उपकारी,
श्री अभयदेव सूरि को अंजलि देते हैं हम भाव भरी।

३

हेमचन्द्र सूरि।

जिस सूरिने विविध विषय के ग्रन्थ बनाये भारत में,
चमत्कार दिखला कर जिसने मुग्ध बनायी आलम ने।

श्री कुमारपाल को भक्त बनाकर दया धर्म फैलाया था,
हो वन्दन यह हेमसूरि की जिसने युग पलटाया था।

४

जिनदत्त सूरि।

जिस सूरिने लक्षाधिक जैनी बोध बोधकर बनवाये,
जनता को फिर जिस सूरि ने चमत्कार भी बतलाये।
जिन शासन का गौरव जिस सूरि ने बार-बार भी बतलाया,
श्री जिनदत्त सूरि ने संयम साधन परिचय करवाया।

५

जिनकुशल सूरि।

जब पार्श्वप्रभु का स्नपनमहोत्सव मेरु शिखर पर किया गया,
तब देवों ने धामधूम से भक्ति भाव को प्रगट किया।
स्तवनों में द्रं द्रं धपमप के वर्णन से विस्मित किया,
खरतर की ख्याति में सब अंग अपना दीपक तेज किया।

६

जिनचन्द्र सूरि।

अमास की पूनम दिखलाकर जनता को दिङ्मूढ़ की थी,
अकबर नृप को जिस सूरि ने धर्म देशना दीनी थी।
चन्द्र समी शीतलता जिसने जगह जगह पर दिखलायी,
श्रीजिनचन्द्र सूरि ने शासन सेवा हरदम अपनायी।

७

समयसुन्दर कवि ।

काव्यशास्त्र को पढ़कर जिसने जिनवर स्तोत्र बनाये थे,
"राजा नो ददते सौख्यं" का विध विध अर्थ बताये थे ।
स्तवनों की रचना कर करके सबको चकित बनाये थे,
समय कविवर वन्दन सुन्दर उत्तर पद कहलाये थे ।

८

देवचन्द्र जी ।

रसमय स्तवनों रचकर जिसने जनता को विस्मित की थी,
योगीश्वर की योगसाधना पद पद शिव को करती थी ।
अद्भुत शक्ति दिखायी जिसने आत्मा की निज ध्यान बले,
देवचन्द्र की जय जय बोलो जग में जिन की ज्योति जले ।

स्वर्गीय विदुषी साध्वी

* श्रीज्ञानश्रीजी म. सा. की स्तुति *

यस्याश्चरित्तमतिबोधकरं जनानां—
वाणीविवेककलितापि मुखे सदैव ।
शान्त्यादि सद्गुणनिधिं परिरक्षति या,
ज्ञानश्रियं प्रतिदिनं प्रणमामि सद्य ॥१॥

यस्या "जडाव" इति नाम सदैव योग्यं,
रत्नानि धारयति सौम्यगुणात्मकानि ।
ज्योतिः प्रसारयति या परिशीलनेन,
ज्ञानश्रियं प्रतिदिनं प्रणमामि सद्यः ॥२॥

शेते सदैव जनता निशि स्पष्टमेतत्,
जागर्ति चिन्तयति ध्यायति तत्त्वमेकम् ।
सोऽहं स्मरन्ती बहुशः सुगुणाभिरामा,
ज्ञानश्रियं प्रतिदिनं प्रणमामि सद्य ॥३॥

आबालब्रह्मचारिणी विदुषी प्रवर्तिनी जी

श्री वल्लभश्रीजी म. सा. की स्तुति

"संस्कृत अष्टक"—१

शार्दूलविक्रीडित वृत्तम्

सामान्ये प्रवरे गुणोत्तम कुले, सुग्राम लोहावटे,
श्रेष्ठी सूर्यमलः पिता च कुशलो, माताऽस्ति गोगा सती ।
तत्कुक्ष्या जननं सुखं च समभूद् गुर्व्यो मदीया खलु,
पायाद्धन्यतमा सुशीलहृदया, सा वल्लभश्रीः मुदा ॥१॥

सौख्याब्धेः समुदायिनी खरतरे, गच्छे च विज्ञानदा,
सा शान्त्या गुणोत्तमा लघुवया, ब्रह्मव्रता पुण्यभाक् ।
सामीप्ये च शिवश्रिया गुणभृतश्चारित्तमङ्गीकृतम्,
तत्सेवा त्रिविधेन सादरभरा, भूयाच्छ्रियै मे सदा ॥२॥

गम्भीरां जिनशास्त्रबोध सहितां, मिथ्यात्व निर्मूलिकाम्,
नित्यानित्य पदार्थ भावविहितां यस्या वरां देशनाम् ।
श्रुत्वा जीवनपद्मबोधनवरा, दीक्षा गृहीता शुभा,
त्वां वन्दे सुभगे मनोहरतमे विज्ञानदे भावतः ॥३॥

दुःखस्थानवतां नृणां भवभयाब्धौ सा वरा नौ समा,
बोध्यादौ च समर्पितुं बहुजनेभ्यः कल्पवृक्षोपमा ।
संप्राप्ता व्रत घोर कष्टसहने, धीरा च मेरोः समा,
गम्भीरा नृकृते हि सागरसमा, मानापमाने सदा ॥४॥

सद्भक्त्या सततं परान् गुणवतः पञ्चेश्वरान् ध्यायति,
मूर्च्छा मत्सर वर्जिता प्रभुगुणान् या गायति प्रत्यहम् ।
कल्याणं स्वपरान् सुसाधयति सा, स्वाचार मग्नामतिः,
पूज्या पुण्यभरा श्रियं दिशतु मे पूज्येश्वरी मोक्षदा ॥५॥

सुव्योमेन्दु नभोयुगाशिवनवलक्षे पूर्णिमायाः दिने,
सिंहश्री समुदाय रक्षण-विधौ, आनन्द सूर्याज्ञया ।

श्रीसंघेन सुसादड़ी लघु पुरे प्रस्थापिता सादरम्,
सन्मान्या च महत्तरा वरपदे सा वल्लभश्रीः शुभा ॥६॥

धर्म ध्यानरता महोदयवरा, सद्भाव-निष्ठा सदा,
पापानां बलनाशने भगवती, वीर्यादि युक्ता शुभा।
सद्बुद्धया खलु तद्गुणान् कथयितुं विद्वज्जनो न प्रभुः,
बालत्वेन तथापि तद्गुणकथां, कर्तुं न शक्तिश्च मे ॥७॥

जीर्णोद्धार जिनालयादि विधयो, सद्भावतः कारिताः,
यस्याः सद्गुणवर्णना कविवराः कर्तुं समर्था नहि।
प्राप्तायाः कुसुमश्रियाश्चरणयोः तस्याश्च भूयाच्छिवम्,
कल्याणं विदधातु सर्वजगतां, सा वल्लभश्रीः मुदा ॥८॥

द्रुतविलम्बित छन्द—२

विशद दिव्यगुणाकर शोभिते,
जगति भव्य सरोज सुबोधिते।
प्रबल मोह महामद ताडिते,
जय यशोनिधि वल्लभ भानिधे ॥१॥

वचन कोमल क्लेश विनाशिके,
वदन दीप्ति सुधारस धारिके।
नय विचारक शास्त्र विशारदे,
जय यशोनिधि वल्लभ पूजिते ॥२॥

विगत राग विराग विराजिते,
परम शान्ति निकेतन कारिके।
विषम दुर्जय शत्रु विदारिके,
जय यशोनिधि वल्लभ वन्दिते ॥३॥

नयन दर्शन पावन कारिके,
भव विवर्धक भाव निघर्षिके।
मधुर वाणी सुधामय भाषिते,
जय यशोनिधि वल्लभ संस्तुते ॥४॥

मदनदर्प विशेष निकन्दने,
तिमिरकन्द निकर्षक भास्करे।
विनय बुद्धि विचक्षण दायिके,
जय यशोनिधि वल्लभ धीमते ॥५॥

गिरि सुमेरु समोपम निश्चले,
जयतु भूतितले गुण गौरवे।

पुनित जन्म मरुस्थल भूधरे,
जय यशोनिधि वल्लभ सुव्रते ॥६॥
परिख गोत्र सुवंश सरोवरे,
लघुतरावर संयम धारिके।
अचल कीर्ति जगत्प्रसारिके,
जय यशोनिधि वल्लभ शासिके ॥७॥
रिपुगणात्कर विध्वंसके,
महतरा विभु शासन सेविके।
परम धाम सुधाम सुदीपिके,
जय यशोनिधि वल्लभ वारिधे ॥८॥

हरिगीत—३

(रचयिता :—मावजी दामजी शाह)

इस भूमि पर विख्यात राजस्थान नामक देश है,
राणा प्रताप समान नृप का जन्म से सुविशेष है।
यहीं गांव लोहावट समा है लोहसम दृढ़ता धरे,
इस गांवमें वजु बाई निज अवतार को धारण करे ॥१॥

इनके पिता का नाम सूरजमलजी से विख्यात था,
माताजी गोगाबाई का यश विश्व में प्रख्यात था।
गुरुणीजी श्री शिवश्री समीप दीक्षा ग्रहीती आपने,
वजुवाई में से आप वल्लभश्री रूपे सत्वर बने ॥२॥

जब पंच वर्ष की उम्र थी तब धर्मपथ में चल रही,
सिद्धि अपूर्ण रह गयी थी योग साधन की सही।
इस जन्म में परिपूर्णता को प्राप्त करना पा चुकी,
संसार का निस्तार करने की घड़ी भी आ चुकी ॥३॥

दश वर्ष की लघु उम्र में दीक्षा ग्रहीती आपने,
लघुवय तथापि ज्ञानसागर पार कीना आपने।
है आपका वैदुष्य अद्भुत सर्वदर्शनमय मति,
वैसी ही गुरुभक्ति परायणता तुम्हारी विलसती ॥४॥

है आप में अति नम्रता समता सुशीलता सर्वदा,
सुसंयम आराधना की ज्योति जलती है सदा।
है आप में विद्याविनोद निज प्रकृति में शांतता,
प्रतिसमय होती पठन-पाठन कार्यरत सुविनीतता ॥५॥

हैं आप खरतरगच्छ में तेजस्विता अति तौर से,
अति प्रियता मिली जैन से जैनेतरों की ओर से।

मुस्लिम अफसर आपके उपदेश पर अति मुग्ध था,
निज गांव में हिंसा शिकार सदैव करना बन्द था ॥६॥
कई मन्दिरों की जीर्णता मिटवायी निज उपदेश से,
कई गांव में शाला बनी हैं आप के प्रतिबोध से।
जिनदत्तसूरि की उद्धरी हैं अनेक दादावाड़ियां,
पुरुषार्थकर कर आपने जिन धर्म का डंका दिया ॥७॥
जन कोई परिचय आपका करके कभी भूले नहीं,
है आप में अद्भुत शक्ति आप भी भूले नहीं।
है सर्वदा हंसता ही चेहरा सब समय में आपका,
है धन्य जीवन आपका, चिरकाल जय हो आपका ॥८॥

आत्मनिवेदन

महापुरुषों के जीवन का आदर्श सामान्य जनों के लिए बहुत ही उपयोगी होता है। इसी जीवन पथ पर चलते हुए वे अपने जीवन को पवित्र बना सकते हैं।

जो लोग महापुरुष के सहवास में रहे हों, उनका तो अहोभाग्य, किन्तु जिन्हें उत्तम आत्मा का परिचय नहीं हुवा, वे भी उनके जीवन चरित्र को पढ़कर उनके बताये हुए मार्ग पर चलकर संतोष पा सकते हैं। धर्म श्रद्धा उत्पन्न होती है। मन की कुवासनाओं का नाश होकर जीवन मार्ग उज्ज्वल बन जाता है और जब कोई अपने जीवन को उज्ज्वल बनाता है तब उसे यश, कीर्ति, लक्ष्मी आदि की प्राप्ति होती है, परलोक में भी स्वर्ग या मोक्ष उससे दूर नहीं रहता।

करीब तीन महीने के परिश्रम के बाद, आज जब इस पुस्तक को पूर्ण रूप में देख रहा हूँ तब मुझे संतोष होता है। वैसे पुस्तक छोटी है। यह कार्य इससे भी कम समय में हो सकता था, किन्तु कालेज में अध्यापन का कार्य तथा एन. सी. सी. अफसर होने के नाते एन. सी. सी. से संबंधित कार्य करने के बाद जो भी समय मिलता मैं इस पुस्तक के काम में जुट जाता। अन्य कार्यों के साथ यह कार्य करते रहने से इसमें समय लग जाना स्वाभाविक है।

इसके अलावा मनमें हमेशा यह इच्छा थी कि जहां तक बन सके चरित्र को सुन्दर बनाया जाय। साथ ही साथ उस महान साध्वी के जीवन की महानता के स्पष्ट दर्शन भी हों। चरित्र आधुनिक ढंग का बने ताकि वह भक्तों की तरह अन्य जनों के लिए भी आकर्षक तथा उपयुक्त बने। इन सभी बातों का ध्यान रख कर इसके कुछ प्रकरण पुनः पुनः लिखे, कभी-कभी एक-एक प्रकरण को ७–७ दिन लग जाते।

यद्यपि यह चरित्र लिखने का कार्य मैंने किया है, इसका मूलतः श्रेय पूज्यश्री जिनश्रीजी म. सा. तथा श्री निपुणा श्रीजी म. सा. को है। जिनश्रीजी म. सा. की प्रेरणा से ही इस चरित्र लेखन का कार्य मैंने किया है। पूज्यश्री वल्लभश्रीजी म. सा. के जीवन प्रसंगों को आप ही ने बताया। आपका और पूज्यश्री का पिछले ४४ वर्ष का साथ और आपकी गुरुवर्य्या के प्रति एकनिष्ठ श्रद्धा की भावना के कारण पूज्यश्री के जीवन के सभी प्रसंगों से आप पूर्णतः परिचित थीं। चरित्र लिखते समय भी आप एक-एक शब्द पर भी कितना ध्यान देती थीं कि कभी कभी कुछ भाग मुझे २–२, ३–३ बार लिखना पड़ता। चरित्र ग्रन्थ निर्दोष बने, पूज्यश्री के जीवन के सभी पहलुओं का ठीक परिचय हो, इसका आपने पूरा ध्यान रखा है।

प्रथमतः जीवन चरित्र की घटनाओं का अंकन काल-क्रमानुसार किया गया था, किन्तु उसमें कुछ बातों की पुनरुक्ति

चरित्र लेखक प्रोफेसर कान्तिलालजी चोरडिया

होती थी, उसे टालने के लिए तथा पूज्यश्री के जीवन के विभिन्न पहलू पाठकों के सामने स्पष्ट रूप से रखने के लिए कालक्रमानुसार जीवन न लेते हुए महत्व की घटनाओं को तथा विशेष गुणों को ध्यान में लेकर उसके अनुसार प्रकरणों में विभाजन कर जीवन चरित्र लिखा गया है।

पूज्यश्री प्र. वल्लभश्रीजी जैसी महात्मा के जीवन को शब्दों में अंकित करना, यह मेरी सामर्थ्य के बाहर है। फिर भी मैंने जो प्रयत्न किया है उससे कुछ दिग्दर्शन अवश्य होगा। पुस्तक में कुछ त्रुटियां रह गयी हों तो पाठक क्षमा करें।

भवदीय—

कांतिलाल चोरडिया

लेखक का संक्षिप्त परिचय

इस जीवन चरित्र के लेखक प्रोफेसर कांतीलाल जी फूलचन्दजी चोरडिया धर्म प्रेमी एवं सुशिक्षित युवक हैं। आपका जन्म सन् १९३२ में पूना के पास रांजणगांव गणपती नामक स्थान पर हुआ। आपके परिवार में सात भाई, माता-पिता, पत्नी, पुत्र, पुत्री सभी मिलाकर विशाल कुटुम्ब है। आपकी हाईस्कूल की शिक्षा श्री महाराष्ट्रीय जैन विद्याभुवन, जुन्नर तथा जैन गुरुकुल

चांदवड, इन स्थानों पर हुई। इन संस्थाओं के कारण ही आपके मनमें धर्मश्रद्धा उत्पन्न हुई जो आज तक कायम है।

आमतौर पर देखा जाता है कि आज की स्कूल, कालेजों की शिक्षा पाने वाले छात्र धर्म से दूर भागते हैं। किन्तु प्रोफेसर चोरडियाजी डबल एम. ए. होकर भी धर्म में पूरी श्रद्धा रखते हैं।

आपने सन् १९५५ में पूना के एस. पी. कालेज से बी. ए. की डिग्री प्राप्त की। इसके बाद आप अर्धमागधी (जो कि जैन धर्मग्रन्थों की भाषा है) लेकर एम. ए. करना चाहते थे— किन्तु पूना विद्यापीठ पूना में यह विषय पढाने का प्रबंध नहीं था, इस वास्ते एक साल तक आपने पत्रव्यवहार कर तथा विविध प्रयत्न कर अर्धमागधी के अध्यापनका प्रबन्ध करवाया और सन् १९५७ में आप अर्धमागधी लेकर एम. ए. हुए। बाद में सन् १९५९ में आप हिन्दी लेकर डबल एम. ए. हुए। इसके पहले सन् १९५६ में ही महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा पूना से आपने 'राष्ट्रभाषा पंडित' की परीक्षा पास कर ली थी। इन सभी परीक्षाओं में आपने अच्छा सुयश पाया और उसके फलस्वरूप सन १९५९ में अमलनेर के प्रताप कालेज में हिन्दी विभागके प्रमुख प्राध्यापक के रूप में आपकी नियुक्ति हुई। दो वर्ष पूर्व एन. सी. सी. अफसर की ट्रेनिंग के लिए आपका चुनाव हुआ और कामटी (नागपुर) में रहकर आपने वह शिक्षा पूर्ण की। तब से कालेज अध्यापक के साथ साथ एन. सी. सी. कार्य का भी आप संचालन कर रहे हैं।

विद्यार्थी अवस्था में ही आपने 'जैन धर्म दीपिका' नामक पुस्तिका लिखी थी, जो अत्यंत लोकप्रिय हुई। इसके बाद जैन धर्मपर तथा हिंदी साहित्य पर विभिन्न मराठी तथा हिंदी पत्रिकाओं में अपने लेख लिखे। आपके अबतक २० लेख मराठीकी प्रसिद्ध पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। आपका वक्तृत्व अत्यन्त प्रभावी है। विद्यार्थी दशा से ही विभिन्न वक्तृत्व स्पर्धाओं में तथा लेखन स्पर्धाओं में भाग लेकर आपने कई पुरस्कार प्राप्त किये हैं। जैन धर्म पर आपके विभिन्न स्थानों पर व्याख्यान हो चुके हैं।

जैन धर्म के बारे में अन्य जनता में प्रचार न होने से काफी अज्ञान है। पूना में एक अजैन प्राध्यापक ने महावीर जयन्ती की सभा में जैन धर्म के बारे में कुछ भ्रामक बातें कहीं। आप वहीं पर थे। आप जैसे धर्माभिमानी व्यक्ति के लिए उनको चुपचाप सुन लेना असम्भव था। आपने उसके जवाब में अभ्यासपूर्ण व्याख्यान देकर उनकी भ्रामक बातों का खण्डन किया।

आपने गुजरात, मारवाड़, बिहार, महाराष्ट्र आदि प्रांतों में भ्रमण कर लगभग सभी जैन तीर्थ स्थानों की यात्रा की है। जल्द ही "जैन तीर्थदर्शन" यह पुस्तक आप लिखने वाले हैं। इस पुस्तक के कुछ लेख पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं।

आप आपस के भेदभावों को नहीं मानते हैं और इसी

लिए मन्दिर तथा स्थानक, दोनों आपके लिए एक समान है। जैन धर्म के विविध अंग पर लेखन करने का आपका इरादा है।

जैन धर्म की इसी तरह अधिकाधिक सेवा आपके द्वारा होवे, यही शुभेच्छा।

श्री सेठ चन्दनमल जी नागोरी

इस पुस्तक के साथ एक अन्य विद्वान का सम्बन्ध है और वे हैं विद्वानरत्न सेठ चन्दनमल जी नागोरी। इस पुस्तक की छपाई आप ही की निगरानी में हुई।

आप छोटी सादड़ी के निवासी हैं, किन्तु व्यवसाय के कारण बहुत वर्ष बम्बई में रहे। आप धर्म शास्त्रों के प्रकांड पंडित हैं, आगम, इतिहास, साहित्य, ज्योतिष, दर्शनशास्त्र के अच्छे ज्ञाता हैं, साथ ही प्रतिष्ठा आदि विभिन्न धार्मिक कार्यों की विधिविधान के अच्छे जानकार हैं। आपकी स्मरण शक्ति भी तीव्र है। आगम शास्त्रादि के विषय में पृच्छा करने पर सूत्रों के नाम, संदर्भ तथा विस्तृत विवरण के साथ तुरन्त उत्तर मिलता है। आपने यह शिक्षा कहीं स्कूलों में नहीं, घर पर ही परिश्रम तथा अध्यवसाय से प्राप्त की है।

कई जगह पर प्रतिष्ठादि कार्य की विधि आपके द्वारा हुई है। पूज्यश्री वल्लभश्री जी म. सा. के प्रवर्तिनी पद अधिष्ठान की सब विधि आपने ही करवाई थी।

श्री चांदनमल नागोरी जोसा

चरित्र पुस्तक द्रव्य सहायक पृथ्वी राजजी बंगानी धमतरी

सादगी आपके जीवन की विशेषता है। धर्म क्रियाओं में आप हमेशा मग्न रहते हैं। जिनपूजा, व्रत, सामायिक आदि तो प्रतिदिन के आपके आवश्यक कार्य हैं। कई वर्षों से आप केवल चार द्रव्य ही लेते हैं।

आप विद्या के इतने प्रेमी हैं कि खुद तो अध्ययन में हमेशा रत हैं ही, दूसरों को भी प्रेरणा देते हैं। अपने स्थान से कई विद्यार्थियों को संस्कृत, न्याय आदि अध्ययन के लिए शिवपुरी भेज अध्ययन करवाया था।

आप जैन समाज के नररत्न हैं। प्रोफेसर कांतीलालजी चोरडिया तथा श्री चन्दनमल जी नागौरी ने इस पुस्तक के लिए जो परिश्रम किये हैं, इस लिए वे धन्यवाद के पात्र हैं।

—पृथ्वीराज वेंगाणी

श्री पृथ्वीराजजी वेंगाणी
तथा
तपस्विनी श्री राधादेवी वेंगाणी

इस पुस्तक के प्रकाशन का व्यय श्री. पृथ्वीराजजी वेंगाणी ने अपनी तपस्विनी पत्नी सौ. राधाबाई की प्रेरणा से किया है। हाथ का भूषण दान कहा गया है और ऐसे सत्कार्य में दान देने

से उस दान का महत्व और भी बढ़ जाता है। महान व्यक्तियों का जीवन चरित्र पढ़ने से औरों को भी उनके उज्ज्वल मार्ग पर चलने की प्रेरणा मिलती है। एक दीपक हजारों दीपक प्रज्ज्वलित करता है। उसी तरह महापुरुषों का जीवन हजारों को प्रेरणा देता है। इस ज्ञान के कार्य में आपने योगदान दिया, इसलिए आप धन्यवाद के पात्र हैं।

आपके पिता श्री हजारीमल जी चतुर्भुज जी मोजासर (राजस्थान) से व्यवसाय निमित्त धमतरी पधारे। श्री. हजारीमलजी के आप ज्येष्ठ पुत्र हैं। संवत् १९६७ में आपका जन्म हुआ। बाल्यकाल से ही आप व्यवसाय में विशेष अभिरुचि लेते रहे और आज भी कुशल व्यवसायी के रूप में अपना अग्र स्थान रखते हैं।

आपका प्रथम विवाह कांकेर निवासी श्री जीवराज जी चोपड़ा की सुपुत्री चन्दाबाई से हुआ था। किन्तु एक पुत्ररत्न (श्री देवीचन्दजी) को जन्म देने के पश्चात चन्दाबाई स्वर्गवासी हुईं। तत्पश्चात संवत् १९७९ में आपका श्रीमती राधादेवी के साथ मंगल परिणय हुआ।

श्रीमती राधादेवी के पिता लोहावट जाटावास के निवासी श्री जोधराज जी पारख हैं। आपका ठेके का मुख्य व्यवसाय है और कई जगह ठेकों के काम सफलतापूर्वक सम्पन्न कर चुके हैं। आप बड़े साहसी तथा धर्म में अटूट श्रद्धालु श्रावक थे। ऐसे

सुयोग्य परिवार में श्री राधाबाई का जन्म संवत १९६६ में हुआ था।

श्रीमती राधादेवी माता पिता के अनुरूप धर्मश्रद्धालु तथा गृहकार्य निपुण हैं। इनकी प्रेरणा से ही श्री. पृथ्वीराज जी ने परिवार सहित सम्मेत शेखर जी, पावापुरी, चम्पापुरी, क्षत्रियकुण्ड, अजीम गंज, श्री लोद्रवाजी, श्री नाकोडा पार्श्वनाथ, श्री केशरिया-नाथजी की यात्रा की है। आप तीन बार श्री सिद्धक्षेत्र शत्रुंजय की यात्रा कर चुके हैं।

श्री राधादेवी के चार पुत्र तथा चार कन्याएं हैं। इतना बड़ा परिवार होते हुए भी आप अहर्निश धर्माराधन में लगी रहती हैं। दान, शील, तप, भाव इनका आपके जीवन में विशेष स्थान है।

तपस्या को आपने अपने जीवन का एक अभिन्न अंग बना लिया है। आपकी तपस्या का विवरण निम्नलिखित है—

१–आपने प्रथम अट्ठाई संवत १९९२ में अपने देवर श्री मिश्रीलाल जो तथा देवरानी राजादेवी के साथ की।

२–संवत १९९९ में ७१ दिन की आयंबिल की तपस्या की।

३–संवत २००४ में ३२ दिन उपवास की तपस्या की।

४–संवत २००७ में वर्षीतप कर उसका पारणा पालिताना में किया।

५-संवत २०१२ में २४ दिनों की उपवास की तपस्या की।

६-संवत २०१६ में श्रावण मास में २१ उपवास एवं कार्तिक मास में ३२ उपवास किए।

७-संवत २०१७ में साध्वीजी गुप्तिश्रीजी, हेमश्रीजी आदि के चातुर्मास में, श्रावण मास में २१ उपवास किए। आप के साथ आपके परिवार के सदस्यों ने भी अच्छी तपाराधना की है।

आपकी इस कठोर तपश्चर्या को देखकर उसके अनुमोदनार्थ दिनांक २३-७-५५ को श्री जैन श्वेताम्बर संघ धमतरी ने आपको अभिनन्दन पत्र भेंट किया है।

आप पूज्यश्री वल्लभश्रीजी की भक्त हैं, और उनकी संसारी अवस्था की भतीजी हैं। जब आपको पूज्यश्री जी के अस्वस्थता के समाचार ज्ञात हुए तो आप पूज्यश्री की सेवा में अमलनेर पहुंची। पूज्यश्री के स्वर्गवास समय आप यहीं पर थीं। पूज्यश्री के प्रति आपके मनमें जो अपार श्रद्धा है, उसी के कारण इस चरित्र ग्रन्थ को प्रकाशित करने में आपने धन व्यय किया है।

दानवीर श्री पृथ्वीराज जी तथा तपस्विनी श्री राधाबाई धर्म सेवा में इसी तरह अग्रसर बने रहें, यही शुभकामनाएँ।

पृथ्वी राजजी बंगानी की धर्मपत्नी श्री राधा देवी

श्रद्धांजलि

पूज्यश्री प्र. वल्लभश्री जी महाराज साहिबा अब नहीं रहीं। अभी कुछ दिन की ही तो बात है। दादावाड़ी में जब भी जाता था तब उनकी वह मीठी अमृत भरी वाणी कान पर आती थी। शरीर विकल था किन्तु हृदय उदात्त भावना से भरा था।

पिछले तीन वर्ष आपके दर्शन करने का, आपकी वाणी सुनने का मौका मुझे मिला था। जब भी दादावाड़ी में जाता था "प्रोफेसर सा. आप आया" यह वात्सल्य भरे शब्द कानों पर पड़ते थे। हर शब्द में उल्लास था और मंगल, कल्याण की भावना के दर्शन होते थे। कभी मेरी चार साल की पुत्री 'आशा' साथ में होती तो आप नजदीक लेकर प्यार से थपथपातीं। यह वात्सल्य भाव सभी बच्चों के बारे में दिखाई देता था। आदर और प्यार की भावना सब के लिए थी। जो भी उनके सहवास में थे, वे हमेशा इस खुशी में रहते कि वे किसी महान व्यक्ति के सहवास में हैं। उनके साथ में जो साध्वियां थीं, उन्होंने आप में माता, गुरु, मार्गदर्शक, उद्धारक सभी को पा लिया था। उनकी मूर्ति तो आज भी आंखों के सामने है, जैसे वे गयी नहीं, अब भी हैं। किन्तु यह सच होता ....काश !

२० मार्च का दिन। किसी कार्यवश दादावाड़ी के सामने से शाम को ४ बजे जा रहा था, देखा कुछ जैन भाई वहां आ रहे थे। इस वक्त क्यों आए यह विचार कर रहा था, इतने में महाराज साहिबा के स्वर्गवास का समाचार सुना, तब विश्वास नहीं हुआ। उस दिन सुबह तो दर्शन किए थे, तब वह शंका भूल कर भी नहीं आयी कि अन्त समय नजदीक है। स्वास्थ्य तो कई दिनों से ठीक नहीं था, सो क्या हुआ? अन्दर जा कर देखा। म. सा. के चेहरे पर ऐसी रौनक कि देखने वाला समझे कि निद्रा में है। किन्तु अफसोस! वह निद्रा नहीं, चिर निद्रा थी।

वज्रपात हुआ। आंखों से आंसुओं की धारा फूट पड़ी। हाय! अब वह मीठी वाणी कैसे कानों पर आयगी? आपके दर्शन का वह अपूर्व आनन्द कैसे मिलेगा? व्यथित हृदय से घर लौटा। आपके जीवन की कई घटनाएं याद आईं। सोचा, उन पर कुछ लिखूं, किन्तु व्यथित हृदय कुछ लिख न सका।

मरना तो सभी को है। 'एक दहाडे मरवुं छे' मरते तो सभी हैं, किन्तु महान विभूति की मृत्यु दुनियां को दुःख मग्न बनाती है। सभी जैन जगत को अनाथ बनाने वाली यह मृत्यु! जिन्होंने अपने जीवन का उपयोग जगत को सुखी बनाने के लिये किया उनकी मृत्यु। ऐसी मृत्यु किसे नहीं रुलायेगी। दर्शनशास्त्र का आधार कैसे सांत्वना कर सकता है?

वैसे महापुरुष मरते ही कब हैं? जो खुद के लिए जीता है, मर जाता है और जो दूसरों के लिए जीता है, अमर बन

जाता है, उसी का जीवन असल में जीवन है। वल्लभश्री जी ने अपना जीवन समाज और धर्म की सेवा तथा आत्मकल्याण में व्यतीत किया। वे गयीं किन्तु यशोदेह पीछे छोड़ कर गयीं। इस प्रकार विचार मन में आते रहे।

गर्मी की छुट्टियों में पूना जाना था। पूना जाने के पूर्व उस स्थान पर गया जहां आपका अग्नि संस्कार हुआ था। आपकी रक्षा में से थोड़ी सी उठा कर मस्तिष्क को लगायी और श्रद्धा से प्रणाम किया। सोचा जब तक वापिस लौटूं तब तक शायद यह अवशेष भी नहीं रहेंगे।

आज भी हृदय दुःख से भरा है। फिर भी आपके जीवन की महान गाथा लिपिबद्ध करने की कोशिश कर रहा हूँ। यही आपके प्रति मेरे श्रद्धा के फूल हैं।

जैन साध्वी

आजकल हर तरफ देखा जाता है कि मानव स्वार्थी बना हुआ है। हर कोई अपने सुख-विलास में मग्न है। भौतिक सुख यह एक ऐसी मायावी वस्तु है कि जिससे कभी शान्ति और समाधान नहीं मिलता, उन सुखों की प्यास बढ़ती ही

जाती है और आत्मा को भूला हुआ मानव दुखी बनता है। इन भूले भटके आत्माओं को सीधे रास्ते पर लाने वाले कई महान् व्यक्ति इस धरती पर मौजूद हैं, इसीलिए कभी कभी अज्ञान अंधकार में फँसा मानव प्रकाश देख कर उसकी तरफ चल पड़ता है। संसार में ऐसा मार्ग बताने वाले जो व्यक्ति हैं, उनमें जैन साधु-साध्वियों का स्थान बहुत ऊँचा है।

आज जब हम देखते हैं कि सन्त विनोबा भावे सर्वोदय कार्य के लिए भारत भर पैदल यात्रा करते हैं, लोगों में आत्मा की शक्ति जगाने का प्रयत्न करते हैं तब हमारा मस्तक श्रद्धा से उनके सामने झुक जाता है। आज से चौदह वर्ष पूर्व महात्मा गांधी जब नोआखली विभाग में फैली साम्प्रदायिकता की आग को बुझाने पैदल यात्रा करने गये तब सारी दुनिया ने उनके कार्य की प्रशंसा की। उनके ऐसे कई महान कार्यों से वे मर कर भी अमर बने। गणतंत्र भारत के राष्ट्रपिता बने। महात्मा गांधी और विनोबा भावे इन महापुरुषों की तरह भारत भर में ऐसे कई जैन साधु हैं कि जिन्होंने प्राणीमात्र के उद्धार के लिए सर्वसंग परित्याग किया है। अपना घर-द्वार, धन-दौलत, भाई-बहन, माता-पिता, स्त्री, पुत्र पुत्रियों को छोड़ जो अपना तथा अन्य जीवों का उद्धार करने के लिए संयमी बने हैं। जिन्होंने काम, क्रोध, मान, माया, लोभ आदि बिकारों को छोड़ा है और उन पर विजय पाने की कोशिश में जो रात दिन लगे हुए हैं।

वैसे इस देश में साधु, सन्यासी तथा फकीरों की कमी नहीं, लेकिन सच्चे त्यागी पुरुष थोड़े ही मिलेंगे। आमतौर पर देखा जाता है कि बहुतेरे सन्यासी अपने पास धन संचय करते हैं, विलास का जीवन जीते हैं, जो कभी मोटरगाड़ी, पालकी तथा अन्य सवारियों में बैठते हैं। कोई तो ऐसे ढोंगी रहते हैं कि अपना पेट पालने के लिए ही सन्यासी बने होते हैं, वे लोगों को ठगकर उनसे पैसे लेते हैं, उनका आचरण भ्रष्ट होता है, उनके पास आने-जाने वाली स्त्रियों को भुलावे में डाल कर कुकर्म करते हैं।

इस पार्श्व भूमि पर जब हम जैन साधु का जीवन देखते हैं, तब हमें वह कितना उज्ज्वल, कितना पवित्र, कितना महान् दिखाई देता है। वे न तो कभी अपने पास पैसा रखते हैं, न विलास के साधन, यहाँ तक कि खाने की चीजों तक का संग्रह नहीं होता। आहार का वक्त होने पर चार घर फिरकर जो भोजन मिलेगा उसी पर काम चलाना है। किसी भी स्थान पर मठ आदि बनाकर रहना नहीं। संसार सागर में फँसे हुए मानवजाति को तारने का कार्य करते हुए उन्हें सब जगह घूमना पडता है। वह भी किसी सवारी में बैठ कर नहीं, नीचे तपती धरती हो, पथरीली भूमि हो, काँटों भरा रास्ता हो, सफर नजदीक की हो या दूर की, नंगे पैरों से चलते रहना ही उनका काम है। विषयों से दूर रहने के लिए इतने कड़क नियम हैं कि पुरुष साधु को वंदन करते हुए भी स्त्री स्पर्श नहीं कर

सकती, न साध्वी को पुरुष स्पर्श कर सकता है। जीव दया का इतना ख्याल रखा जाता है कि अपने बाल तक मशीन से नहीं, हाथ से उखाड़ कर निकाले जाते हैं।

साधु जीवन कितना कठिन होता है और अपने जीवन को किस तरह निभाने का उन्हें आदेश है, इसका नमूना 'उत्तराध्ययन' सूत्र के निम्नलिखित परिच्छेद में मिलेगा—

"साधु का कर्तव्य है कि वह विश्व के समस्त जीवों पर समभाव रक्खें। 'सत्त्वेषु मैत्री' का भाव रक्खें और जो जो कष्ट उस पर आवें उनको समभावपूर्वक सहन करें। सदा अखंड ब्रह्मचर्य तथा संयम से रहें। इन्द्रियों को अपने वश में रक्खें और पाप के व्यापार को सर्वथा त्याग कर समाधि पूर्वक भिक्षु धर्म में गमन करें।

जिस समय में जो क्रिया करनी चाहिए, वही करें। देश प्रदेश में विचरता रहे। साधु का कर्तव्य है कि प्रिय अथवा अप्रिय जो कुछ भी हो उससे तटस्थ रहे। यदि कष्ट आ पड़े तो उसकी उपेक्षा कर समभाव से उसे सह ले और यही भावना रक्खे कि जो कुछ होता है, अपने कर्मों के कारण ही होता है। इसी लिए कभी भी निरुत्साह न हो। अपनी निन्दा या प्रशंसा की तरफ वह लक्ष्य न दे।

विचक्षण साधु हमेशा राग, द्वेष तथा मोह को छोड़े। ठण्डी, गर्मी, दंशमशक, रोग आदि परिषहों को सम भाव से

सहे। जिस तरह वायु से मेरु नहीं कांपता, उसी तरह परिषहों से कांपे नहीं, न उस से भयभीत हो।"

इस तरह साधु जीवन का पालन करना तलवार की धार पर चलने के समान दुष्कर कर्म है। मन रूपी घोड़ा बड़ा ही उद्धत, भयंकर तथा दुष्ट है। वह सांसारिक विषयों में इधर उधर दौड़ता है किन्तु जैन साधु संयम की लगाम से उस घोड़े को काबू में लाते हैं।

जब पुरुष साधुओं का ही जीवन इतना कठिन है तो साध्वियों का जीवन कितना दुष्कर होता होगा? साधुओं की अपेक्षा साध्वियों को इन नियमों के पालन में कितनी कठिनाइयां हो सकती हैं, इसकी हम केवल कल्पना ही कर सकते हैं। प्रकृति ने ही स्त्री को अबला बनाया है। घर की चहारदीवारी में बन्द रहने वाली स्त्री जब साध्वी बन कर समाज की मार्गदर्शक बन जाती है तब ऐसे कठिन कार्य को निभाने की शक्ति विशेष ही होनी चाहिए। इस कार्य की महानता तब और बढ़ जाती है कि जब कोई साध्वी विशेष कार्य कर सारे समाज के लिए ललामभूत बनती है।

श्रीमती प्र. वल्लभश्री जी महाराज साहिबा एक ऐसी ही विदुषी तथा महान साध्वी थीं। दस वर्ष की अवस्था में ही दीक्षा लेकर आपने इस खडतर जीवन को अपनाया, कठिन तपस्या भी की, लेकिन आप में क्रोध का लवलेश भी नहीं था। आप महान

ज्ञानी थीं, साथ ही साथ उतनी ही नम्र। आपके भक्तगण हजारों हैं, फिर भी आप छोटे बच्चे से लेकर बूढ़े तक सभी को अपनी मधुर वाणी से उपदेश देती थीं। आप में चांद की शीतलता थी, सूरज की तरह ज्ञान का प्रकाश था। पेड़ जब फलों से लदते हैं तब झुक जाते हैं। आपका ज्ञान विशाल था, और आपने समाज की विविध दिशा में सेवा की, फिर भी आप में अहंकार का लवलेश भी नहीं था। स्वच्छ पानी की तरह आपका जीवन शुद्ध तथा पवित्र था। अग्नि की तरह उन्होंने अपना जीवन दूसरों के लिए जलाया।

उसी महान साध्वी का यह छोटा सा जीवन चरित्र है।

बाल्यकाल

राजस्थान! सूरमा देश। धर्मवीरों, कर्मवीरों, दानवीरों, रणवीरों का देश। भारतीय इतिहास के स्वर्ण पृष्ठों पर यहां के कई महान पुरुषों के तथा महान स्त्रियों के नाम अंकित हुए हैं। इसी राजस्थान में लोहावट नाम का छोटा सा कस्बा है। कस्बा है छोटा सा किन्तु धर्म संस्कारों से भरपूर। प्राचीन जिनमन्दिरों, धर्मशालाओं, पाठशालाओं से सुशोभित इसी कस्बे में पूज्य वल्लभश्रीजी का जन्म हुआ।

लोहावट में श्री. सूरजमलजी पारख नामक दानवीर श्रेष्ठी विराजमान थे। आपके करनीदानजी एवं धनराज जी दो भाई थे। चार बहिनें थीं जिनमें एक बहिन जडाव बाई ने दीक्षा ली, जो श्रीमती ज्ञानश्रीजी नाम से विख्यात हुई। सूरजमलजी पारख की धर्मपत्नी गोगाबाई थीं, इसी पुण्यशील माता की कुक्षि से वल्लभ श्री जी का जन्म हुआ। बालक तो रोजाना कई पैदा होते हैं। किन्तु महान व्यक्ति तो पुण्यशील माता-पिता के घर ही पैदा होते हैं। जगत आल्हादकारी प्रभु पार्श्वनाथ भगवान के जन्म कल्याणक के २ दिन पहले संवत १९५१ के पौष कृष्ण ७ के दिन सुबह ब्रह्म मुहूर्त में वल्लभश्रीजी का जन्म हुआ। माता को प्रसव पीड़ा बिलकुल ही मालूम नहीं हुई। आम तौर पर पुत्र को पाकर खुशी होती है, किन्तु सूरजमलजी पुत्री को पाकर भी प्रसन्न हुए। नवजात कन्या का नाम वरजुबाई रखा गया। आपके बड़े भाई का नाम जमनालाल जी था। आपकी २ बहिनें थीं। सभी प्रकार से सानन्द बचपन के ६ वर्ष बीते।

वरजुबाई बालिका तो थी, किन्तु अन्य बालिकाओं से निराली थी। जिस उम्र में सभी बालिकाएं अपना समय खेल कूद में, ऊधम मचाने में व्यतीत करती हैं, उस अवस्था में वरजुबाई क्या करती थीं? वह अपनी भुवा जडावबाई के पास धर्म का अध्ययन करती थी। उपाश्रय में साधु साध्वियों का आगमन होता तो वहीं पर रहती थी, उनकी सेवा करती और धर्म का अध्ययन करती। गांव में ब्याह-शादी हो तो बच्चों की धूम का

क्या पूछना। कहीं बरात आयी है, तो कहीं गीत गाये जा रहे हैं, तो कहीं भोजन की पंक्तियां उठ रही हैं, इन सभी बातों में बच्चों को कितना आनन्द होता है। कहीं बाजे बज रहे हों तो सब काम छोड़ कर बच्चे वहां हाजिर होते हैं किन्तु वरजुबाई ने इन कामों में कभी रस नहीं लिया। उनका तो क्रीड़ा-स्थल था जैन उपाश्रय। "होनहार बिरवान के होत चिकने पात" इस कहावत के अनुसार बचपन से ही वह बालिका सांसारिक बातों से विमुख होकर धर्म क्षेत्र की तरफ मुड़ी थी। इस कार्य में उसे इतनी रुचि थी, धार्मिक अध्ययन में कुछ गलती होने पर वह सहर्ष दण्ड स्वीकार करती।

॥ तीर्थयात्रा ॥

वरजुबाई के घर का वातावरण धार्मिक था ही। कस्बे में जब भी कभी साधु साध्वियों का आगमन होता, तो पूरा परिवार सेवा में उपस्थित होता था। जिन मन्दिरों में जाकर दर्शन पूजा का लाभ भी रोजाना लेते थे। एक बार उन्होंने सोचा-पवित्र तथा महान जैन तीर्थों की यात्रा करनी चाहिये। इस यात्रा के संघ में वरजुबाई भी शामिल थीं और भक्ति भावपूर्वक उन्होंने महान तीर्थ सिद्धगिरी, गिरनारजी, आबूजी, समेत शिखर आदि तीर्थों की यात्रा की। शत्रुंजय की वह मन्दिरों की नगरी, माउण्ट आबू की वह रमणीय, अनुपम शिल्पकला, राणकपुर का बेजोड़ स्थापत्य, घने जंगल के बीच ऊंचे पहाड़ों पर बसे हुए गिरनारजी,

समेतशिखरजी आदि तीर्थों का दर्शन कर वरजुबाई के हर्ष का पारावार न रहा। इन तीर्थों का इतिहास सुन कर बालिका के दिल पर बहुत प्रभाव पड़ा।

॥ सिंहश्रीजी महाराज साहिबा ॥

धर्म भाव में रत बालिका अब दस वर्ष की हो चुकी थी, उसी समय वहां पर श्रीमती लक्ष्मी श्रीजी एवं शांतमूर्ति सिंहश्रीजी महाराज साहिबा का आगमन हुआ। इन्हीं के पास वरजुबाई की दीक्षा हुई, अतएव इनका कुछ परिचय आवश्यक है। सिंहश्रीजी तपाचरण में और संयमी जीवन के पालन में सिंह के समान वीर थीं। किसी छोटी सी बात में भी कोई गलती नहीं होती। आपका नाम सिंहश्रीजी बिलकुल सार्थक था। जैसा नाम वैसे गुण। "ज्ञान क्रियाभ्यां मोक्षः" यह सूत्र अर्थ रूप से आपके जीवन में ओतप्रोत था।

सिंहजी का गृहस्थाश्रम का नाम था शेरूबाई। राजस्थान के फलोदी नगर में संवत १९१२ में आपका जन्म हुआ था। आपके पिता का नाम लालचन्दजी और माता का नाम अमोलक देवी था। धार्मिक श्रद्धा जिस परिवार में हो उसका असर उस परिवार के छोटे बालकों पर भी होता है, सो शेरूबाई भी धर्म प्रवृत्ति में रस लेती थीं।

राजस्थान उन दिनों में बालविवाह की प्रथा थी। शेरूबाई का विवाह भी नव वर्ष की अवस्था में ही हुआ। किन्तु

काल की गति, अल्प समय में ही आपके पति को कराल काल ने ग्रस लिया। विधवावस्था–इस से बढ़ कर भारतीय नारी के जीवन में और कौन सा दुःख हो सकता है और वह भी विवाह के अल्प समय के बाद, जिन्दगी शुरू होने के पहले ही खतम हो गई। इस प्रसंग को लेकर एक लेखक ने लिखा है—"हाय! फूल शय्या चिता हो गई, मनोवांछा व्यथा हो गई, चमन के फूल कहां मिट गये, हृदय के फूल कहां लुट गये। वह चमन ही मिट गया जिसमें बहार आने को थी। रह गया निविड़ अन्धकार, एक अनन्त हाहाकार"!

किन्तु इस महान दुःख से भी शेरूबाई डरी नहीं! इस वज्रपात से तो उस पर एक उपकार हुआ और वह यह कि संयम लेने के विचार उसके मन में आने लगे। शेरूबाई ने अपना सारा ध्यान अपने धार्मिक कार्यों की ओर केन्द्रित किया। उसी समय फलोदी में प्रभावशालिनी श्रीमती उद्योतश्रीजी म. सा. की शिष्यारत्न श्रीमती लक्ष्मीश्रीजी पधारी। लक्ष्मीश्रीजी खरतरगणाधीश पूज्य सुखसागरजी म. सा. की समुदायवर्तिनी थीं। लक्ष्मीश्रीजी के व्याख्यानों का शेरूबाई पर प्रभाव पड़ा, पूर्व बीज को सिंचन मिला, हृदय वैराग्य रंग से रंग गया। फलस्वरूप संवत १९३२ के वैशाख शु. ३ अक्षय तृतीया के दिन शेरूबाई ने लक्ष्मीश्रीजी के पास भागवती दीक्षा ग्रहण की। इस समय आप की अवस्था २० वर्ष की थी। शेरूबाई का नाम सिंहश्रीजी रखा गया, जिसे उन्होंने सार्थक कर बताया।

श्री परमपूज्या महान उपकारिणी सद्गत श्री ज्ञान श्रीजी साहिबा

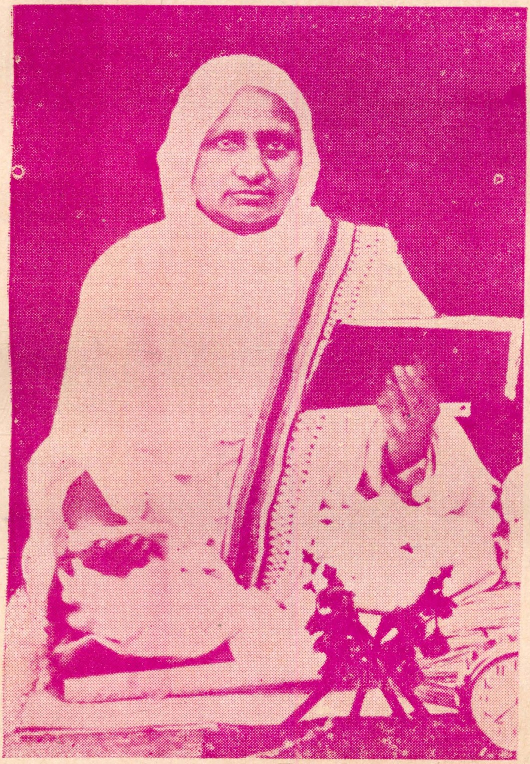

समुदाय की आप परम उपकारिणी हैं

सिंहश्रीजी के व्याख्यान बहुत प्रभावशाली होते थे। आपके व्याख्यानों का जडावबाई पर प्रभाव पड़ा और आपने दीक्षा लेने की तैयारी की। जब भुवाजी दीक्षा ले रही हैं, तब वरजुबाई कहाँ पीछे रहने वाली थी। जडावबाई ने अपनी भतीजी वरजुबाई के हृदय को वैराग्य रंग से पूरा पूरा रंग दिया था। समाज को वल्लभश्री जी जैसा महान रत्न मिला इसका बहुत-सा श्रेय जडावबाई को है। जडावबाई दीक्षा के बाद ज्ञानश्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। दीक्षा के बाद भी आप दोनों लगभग साथ ही रहीं। अपने चारित्र्यकाल में समाज और जैन संघ की महान सेवा उन्होंने की। अतः उनके जीवन का कुछ परिचय यहाँ आवश्यक है।

वैसे आपकी संक्षिप्त जीवनी स्वतंत्र पुस्तिका में प्रकाशित हुई है, यहाँ तो केवल उसकी रूपरेखा है।

जडावबाई (ज्ञानश्रीजी)

लोहावट निवासी धर्म प्रेमी सेठ मुकनचन्द जी पारख आपके पिता तथा कस्तुरबाई माता थीं। मुकनचंद जी के तीन पुत्र एवं चार पुत्रियाँ थीं। सबसे छोटी कन्या जडावकुँवर थी। यह नाम बिल्कुल यथार्थ था। बचपन से ही इस बालिका में शालीनता, धर्म श्रद्धा, विनय आदि गुण ओत-प्रोत थे। बचपन बीता और आपका विवाह लोहावट में ही श्रीमान् लक्ष्मीचंद जी चोपड़ा से हुआ। लक्ष्मीचंद जी के पास लक्ष्मी तो थी ही,

आप धर्मपरायण भी थे। ससुराल आने के बाद जडावबाई ने अपनी कुशाग्र बुद्धि, सेवा भाव, पतिव्रता धर्म इन गुणों से सबको मोह लिया। लेकिन दैव को आपका यह सुख मंजूर नहीं था, सो बारह वर्ष के विवाहित जीवन के बाद अचानक प्लेग की बीमारी से श्री लक्ष्मीचंद जी का स्वर्गवास हुआ। यह आप पर दुर्दैव की कठोर कुल्हाड़ी थी। विधवा स्त्री को घर की चहारदीवारी में बन्द होकर अपना सूना जीवन बिताना पड़ता है, लेकिन जडावबाई ने अपना जीवन सूनेपन में नहीं, समाज सेवा में बिताने का निर्णय किया।

आपमें धर्म श्रद्धा तो पहले से थी ही, पति निधन से मोह-पाश टूट गया। आपने कठोर तपश्चर्या शुरू की। एक मास क्षमण और लगातार ६० बेले किये, और हर पारणे के दिन आयंबिल करती थीं। लगातार पाँच वर्षों तक विगयों का त्याग किया। पवित्र तीर्थों की यात्रा की। प्रचुर मात्रा में दान दिया। अन्त में घर के लोगों ने जब देखा कि उनको वैराग्य भावना से हटाना कठिन है, तब उन्हें दीक्षा लेने की इजाजत मिली।

भुवाजी को तो इजाजत मिल गयी किन्तु भतीजी बरजुबाई को इजाजत नहीं मिली। उनके मन के निग्रह की अब कसौटी लगने वाली थी।

कसौटी पर

सोना जब अग्नि में तपता है तब और चमकता है। संकटों से महापुरुषों का तेज और विकसित होता है। हीरे की परीक्षा कठिन घावों से ही होती है उसी तरह वरजुबाई के संयम की लगन, होशियारी तथा धैर्यशालिता की परीक्षा इस अवसर पर हुई। भाई, भाभी तथा अन्य रिश्तेदार कोई नहीं चाहता था कि वरजुबाई दीक्षा लें। सभी की यही कोशिश कि वह इस संसार में रहें। दस वर्षीय कोमल बालिका संयम जीवन के खडतर मार्ग को अपनावे, यह बात उनकी ममता सह नहीं सकती थी। किन्तु वरजुबाई ने अन्त में इजाजत प्राप्त कर ही ली। वह इस कसौटी पर खरी उतरी। इस कसौटी का इतिहास वरजुबाई की संयम जीवन की उत्कृष्ट भावना का परिचय देता है।

जडावबाई की दीक्षा का मुहूर्त सम्वत १९६१ के मिगसर शु० ५ के शुभ दिन निश्चित किया गया। अट्ठाई महोत्सव किया गया। रोज रात को भगवान की भक्ति की भावना गायी जाने लगी। सारे गांव में आनन्द तथा भक्ति का वातावरण फैला।

वरजुबाई भी अपनी भुवा के साथ ही दीक्षा लेना चाहती थी। उस समय आपके बड़े भाई जमनालालजी मद्रास में थे।

जब आपको इसका समाचार मिला तब आप हैरान हो गये। बहिन का मोह नहीं छूट रहा था। मेरी सुकोमल, बच्ची सी बहिन दीक्षा ले, नहीं, नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। आपने दीक्षा को रोकने का तार भेज दिया। बहन के प्रति भाई के स्नेह की लोगों को कल्पना थी। गांव में अफवाह फैलने लगी, कि यदि यह दीक्षा होगी तो भाई अपघात करेगा। कोई कहता, सन्यासी बन जायगा। कई लोग अपनी कल्पनानुसार प्रवाद फैलाने लगे। अपने जमाई का क्या हाल होगा, इस डर से जमनालालजी के ससुराल के लोग इस दीक्षा को रोकने की कोशिश करने लगे। जमनालालजी की पत्नी जो लोहावट में ही थीं वह भी अपनी ओर से इसका पूरा प्रयत्न करने लगीं।

इधर जमनालाल जी के मन में हलचल मची थी। बहिन उन्हें छोड़ कर चली जावे, संयमी जीवन जैसे दुष्कर मार्ग को अपनावे, यह बात ही उन्हें सहन नहीं होती थी। दीक्षा को रोकने के तार तो भेज चुके ही थे। दीक्षा के दो दिन पहले जब वे सोये तो दिमाग उन्हीं बातों से भरा था। रात में उन्होंने सपना देखा। सपने में शासनदेव आकर कह रहे थे "वरजु संसार में नहीं रहेगी। रोकने का व्यर्थ प्रयास क्यों कर रहे हो। अच्छे काम में अन्तराय करना ठीक नहीं होगा।" और सपना खत्म हुआ। समझदार को इशारा काफी है। सुबह होते ही तार दिया "बहिन अभी बालक है।" इसका मतलब यह था कि अभी तो बालिका है, कुछ बड़ी होने पर दीक्षा देंगे। फिर

उन्होंने सोचा कि शासनदेव के सपने का क्या होगा ? अतएव फिर दूसरा तार दिया "मेरे आने के बाद दीक्षा दी जाय" किन्तु बाद में फिर सोचा कि कल का जो मुहूर्त हैं वह कैसे टाला जा सकता है। अतः फिर तार दिया कि बड़े बासा उधर हैं, योग्य लागे सो करें। ये तीनों तार रात्रि को एक के बाद एक पहुंचे। उन दिनों छोटे कस्बे में आज की तरह वितरण की व्यवस्था नहीं थी। सो तीनों तार रातभर डाकखाने में ही पड़े रहे।

इधर वरजुबाई ने अपने बड़े पिताजी करणीदान जी से दीक्षा की आज्ञा पहले ही प्राप्त कर ली थी। जब परिवार के बड़े व्यक्ति ने आज्ञा दे दी तो उसमें सभी की आज्ञा आ जाती है। सो वरजुबाई के मन में अब कोई सवाल था ही नहीं। दीक्षा के पहले कपड़े केशर से रंगे जाते हैं। उस वक्त पू. म. सा. आपकी दीक्षा के विरोध की बातें सुन कर आपके कपड़े नहीं रंग रही थीं। तब वरजुबाई ने वडिल जनों के पास जाकर कहा कि आप सभी पूज्य म. साहिबा के पास जाकर उन्हें मेरे कपड़े रंगने को कहिये। मैं दीक्षा लूंगी और अवश्य लूंगी। लोगों ने बालिका का निश्चय देख कर म. सा. को कपड़े रंगने को कहा।

कपड़े तैयार हो गये। वरघोड़े का समय आया। दीक्षा के पहले दिन वरघोडा था। वरघोडे के लिए रथ मंगाया गया था, और काफी सजावट की गई थी। छाब ले कर बरघोडे में घूमना था। छाब में दीक्षा के सभी उपकरण होते हैं। छाब लेने वाली स्त्री

चार 'मावित वाली (माता, पिता, सास, ससुर) तथा सौभाग्यवती होती है। आपकी भाभी ने सभी को कह दिया था कि कोई छाब नहीं उठावें। जो उठावें उसे पति या पुत्र की सौगंध। इस शपथ को सुन कर कोई छाब उठाने के लिए आगे नहीं आई। जब वरजुबाई ने देखा कि कोई भी छाब नहीं ले रही है, तब आपने सोचा, और कोई ले या न ले, मैं तो जरूर उठाऊंगी। ऐसा विचार कर आप ने छाब उठा ली, और रथ में बैठने के बजाय उसे ले कर पैदल ही चली। जब औरों ने यह देखा तो सभी चकित हो गये। सोचा, छाब तो उठा ली गयी है, अब क्या हर्ज है, ऐसा विचार कर, सब ने छाब ली, और आप अपनी भुवाजी के साथ रथ में बैठ गईं।

इस तरह बरघोडा समाप्त हुआ। शाम हुई, रात आई। कल दीक्षा होने वाली थी, इसी समय जमनालाल जी के ससुर को पता चला कि पोस्ट में मद्रास से तीन तार आये हैं। आधी रात का समय था फिर भी आप वरजुबाई के घर आये और कहा 'मद्रास से तार आये हैं, उन्हें पढ़े बिना दीक्षा न दी जाय।' कल होने वाली दीक्षा की खुशी में वरजुबाई को नींद कहां थी। आप यह सम्वाद सुन ही रही थीं। आपने तुरन्त वहां आ कर कहा 'मैं दीक्षा के बिना नहीं रह सकती! आप सभी मुझे क्यों अन्तराय कर रहे हैं?' इतने में आपकी बड़ी मां भी वहां आयीं और उन्होंने कहा—दीक्षा अवश्य होगी। ऐसे शुभ कार्य में अन्तराय करना ठीक नहीं। महासती के प्रभाव से सब

अच्छा ही होगा। चिन्ता न करो। सहर्ष दीक्षा में भाग लो। सब वापिस चले गये। सुबह दीक्षा का मुहूर्त था।

जब से वरजुबाई की भाभी ने तार का समाचार सुना था, तब से वह बेचैन हुई थी। उसने सोचा "वे (जमनालालजी) तो नहीं चाहते हैं और यह दीक्षा तो हो रही है। उसकी अब तक की कोशिश तो बेकार हुई थी, किन्तु उसने एक और प्रयत्न किया।

राजस्थान में रिवाज है कि दीक्षा के पहले वैरागन थाल में लापसी लेकर खड़ी रहे और सभी लोग उसके हाथ से लापसी लेकर अपने को धन्य समझें। दीक्षा स्थान पर वरघोडे में जाने से पहले यह विधि होती है!

वरजुबाई प्रातःकाल में ही नहा धोकर नये कपड़े, गहने पहन कर तैयार हुई। जब वह लापसी लेने रसोई घर में गई तो क्या देखती है, वहां तो भाभी ने ताला लगा दिया था और सबको शपथ दे रखी थी कि कोई वरजुबाई को लापसी लेने में सहायता न करें। वरजुबाई ने सोचा, यह मांगलिक शकुन किये बिना कैसे जाऊँ? किन्तु ताला तो लगा है। यह मंगल कार्य होगा भी तो कैसे? कुछ देर सोचने के बाद रास्ता सूझा। पानी भरने की कलसी पर चढ़ कर धुआँवारी तक पहुंची। किसी तरह खिड़की में तो चढ़ गई किन्तु देखा तो नीचे बड़ा चूल्हा था और वहाँ आग प्रज्वलित थी। फिर भी आपकी लगन अद्भुत थी। आप पवित्र नमस्कार मंत्र का जप कर कूदीं तो

सद्भाग्य से आग से दूर जा गिरीं। बालिका की जैसे यह अन्तिम अग्नि परीक्षा थी। इतनी हिम्मत और धैर्य विरले ही बालकों में होती है। सामान्य बालकों में इतनी हिम्मत कहाँ? अन्दर जाकर देखा तो लापसी का बर्तन भी ऊँचा रक्खा था। आपने भगोले पर भगोले रख कर रकाबी में लापसी ल.।

इस तरह लापसी तो ले ली, किन्तु बाहर कैसे निकले? इसी समय आपके चचेरे भाई पृथ्वीराजजी वहीं से जा रहे थे, सो उनकी सहायता से आप बाहर निकलीं। जिस समय आप लापसी लेकर बाहर आईं तो आपको इतना आनन्द हुआ कि जैसे कोई सम्राट पृथ्वी दिग्विजय कर आ रहा हो।

इस समय तक वरघोड़ा निकल चुका था और बहुत से व्यक्ति जडावबाई के वरघोड़े में चले गये थे। जब लोगों ने वरघोड़े में अकेली जडावबाई को देखा तो सोचा अब वरजुबाई की दीक्षा न होगी। इसी समय वरजुबाई लापसी लेकर आ गई थी। अपने घर में जो लोग थे, उन सबको लापसी बाँट कर आप वरघोड़े की तरफ दौड़ पड़ीं। इस समय वरघोड़ा दीक्षास्थल पर पहुंच चुका था। यह देख कर आपके दिल में विभिन्न विचार शुरू हुए। क्या दीक्षा शुरू हो गई? कलेजा धक-धक करने लगा। तब जोर से पुकार कर कहा—"महाराज सा. मैं आ गयी हूँ, मैं मांगलिक हूँ, मेरे बिना दीक्षा-विधि शुरू न हो। यह कहते हुए आप वहां पहुंचीं। दीक्षा-स्थान आदमियों से भरा हुआ था।

खरतर-गच्छाधीश पूज्य सुखसागर जी म. सा. के शिष्य महान तपस्वी छगनसागर जी महाराज एवं पूज्यश्री लक्ष्मीश्रीजी तथा सिंहश्रीजी म. सा. वहां पधार गये थे। इनकी ही अध्यक्षता में वह विधि होने वाली थी। विधि शुरू हो गई। जडावबाई और वरजुबाई दोनों का नया जीवन शुरू होने का वक्त आया। सावद्य व्यापार का जिसमें सर्वथा त्याग होता है तथा जीवन पर्यन्त सामायिक व्रत को जिसमें निभाना पड़ता है, वह महान दीक्षा दोनों को पूज्य छगनसागर जी महाराज के कर-कमलों द्वारा दी गई। आप दोनों सिंहश्रीजी की शिष्या घोषित हुई। जडावबाई ज्ञानश्रीजी और वरजुबाई वल्लभश्री शुभ नाम से अलंकृत हुई।

जिस स्थान पर दीक्षा होती है, उस स्थान पर उस रात रहा नहीं जाता। दीक्षा समय आर्यामंडल जाटावास में था, अतएव श्रीसंघ के साथ नूतन दीक्षित साध्वियाँ, गुरुवर्या एवं आर्या मंडल जिनेश्वर भगवान के दर्शन कर विसनावास उपाश्रय में पधारा।

दीक्षाकार्य सानन्द सम्पन्न होने पर रात को आये हुए तीनों तार पढ़े गये। उसके समाचार जानकर सभी हर्षित हुए। सभी ने वरजुबाई की हिम्मत, संयम भावना तथा भाग्य की सराहना की।

दीक्षा के बाद दो दिन लोहावट ठहर कर आर्यामंडल फलोदी वापिस आया। फलोदी में डेढ़ महीने तक निवास

रहा। तब करणीदान जी ने आकर प्रार्थना की "नूतन दीक्षितों की बड़ी दीक्षा का महोत्सव लोहावट में करने की भावना है। आप श्री पधारने का अनुग्रह करें।" उनकी विनंती स्वीकार कर आर्यमंडल ने लोहावट की ओर विहार किया। वहाँ पर संवत १९६१ में महासुदी ५ के शुभ दिन पूज्य तपस्वी छगनसागरजी म. सा. के वरद कमलों से पंचमहाव्रत प्रतिज्ञा स्वरूप बड़ी दीक्षा हुई। पूज्य म. सा. ने जो बोधपाठ दिया, उसे आपने सम्पूर्ण रूप से अपने जीवन में उतारा। जय जयकार नाद के साथ महोत्सव पूर्ण हुआ।

इस तरह दोनों का नया जीवन शुरू हुआ। अब तक वे केवल अपने परिवार की थीं, अब सभी जैन जगत की बनीं। अपनी आत्मा तथा जैन जगत के उद्धार का कार्य उन्होंने शुरू किया।

पवित्र जीवन का प्रारम्भ

शास्त्राध्ययन और शिक्षा—

प्रतिभाशाली व्यक्ति किसी भी कार्य में जल्द ही अपनी छाप डालते हैं। जब प्रतिभा के साथ वर्षों की ज्ञान-साधना हो तो पहलूदार हीरे की तरह उस व्यक्ति का तेज और निखरता

है। वल्लभश्रीजी प्रतिभाशाली तो थीं ही, साथ ही दीक्षा जीवन के शुरुआत के कुछ वर्ष आपने अखंड ज्ञान-साधना में बिताये।

दसवें वर्ष की आयु में आपकी दीक्षा हुई थी। दीक्षा के दूसरे ही वर्ष से आपने संस्कृत सीखना शुरू किया। विभिन्न धर्मग्रन्थों का भी अध्ययन शुरू किया। लगातार १०-१२ वर्ष आप धर्मशास्त्रों के अध्ययन में जुटी रहीं। वैसे तो यह ज्ञान साधना हमेशा चलती ही रही, कभी उसमें खंड नहीं हुआ, किन्तु शुरुआत के दिनों में आपने विशेष परिश्रम किया।

मानव जीवन के निर्माण और उत्थान में शास्त्राध्ययन का कितना महत्वपूर्ण स्थान है, इसका विवरण करते समय पूज्य सज्जनश्री म. सा. कहती हैं :—

—"स्वभावतः मनुष्य की वृत्तियाँ जन्म से तो अपरिमार्जित और असंस्कृत होती हैं, उसकी दशा खान से निकले हुए रत्न के सदृश होती है। जब संगतराश के हाथों से उसकी काट-छांट, सफाई हो जाती है तब उसमें चमक आती है और उसकी शोभा अपूर्व हो जाती है तथा उसका मूल्य भी कई गुणा अधिक हो जाता है। इसी प्रकार मानव वृत्तियों का भी संस्कार, परिष्कार व सुधार शिक्षा द्वारा होता है। शिक्षा के द्वारा उनके अन्तःकरण की शुद्धि हो जाती है। विचार निर्मल और उच्च बन जाते हैं, तथा योग्यायोग्य कार्य का निर्णय करने की विवेक शक्ति उत्पन्न हो जाती है। अध्ययनशील व्यक्ति की दुर्भावनाओं

का नाश हो जाता है, तथा उसके हृदय में स्नेह, सहानुभूति तथा शिष्टता आदि सद्गुण निवास करने लग जाते हैं।

शास्त्रों में नैतिक शिक्षाएँ, धार्मिक उपदेश और आदर्श कथाएँ प्रचुर परिमाण में प्राप्त होती हैं। उनका पठन संतोष, धैर्य, उदारता आदि सद्गुणों का विकास करता है।

उत्तम साहित्य सरिता का अवगाहन करने से कितनी शान्ति मिलती है? मानसिक असंतोष रूपी मल को नष्ट करने का यह अव्यर्थ उपाय है। पाठक के हृदय में आशा, विश्वास और उल्लास की उर्मियाँ उछलने लगती हैं; निराशा, सन्देह और विषाद दूर भाग जाते हैं। उत्साह का समुद्र उमड़ आता है, आलस्य नष्ट होकर स्फूर्ति आ जाती है। अध्ययनशील व्यक्ति गौरवपूर्ण विचार शक्ति युक्त हो जाता है। उसमें सत्संकल्प जागृत रहता है। वह सदैव आत्म सम्मान को प्रधानता देता है, कभी ऐसा आचरण नहीं करता जिससे उसे अपमानित होना पड़े। उसकी आत्महीनता की भावना निर्मूल हो जाती है और आत्मगौरव का भाव दृढ़ हो जाता है। इस आत्मगौरव की भावना के दृढ़ हो जाने पर मनुष्य कभी कुपथगामी या दुराचारी नहीं बन सकता। शोक में नहीं घबड़ाता और हर्ष में फूल कर कुप्पा नहीं हो जाता। मानवता का त्याग प्राणान्त कष्ट आने पर भी वह नहीं करता। उसका चरित्र पूर्ण उत्कर्ष को पहुंच जाता है। मानव से ऊँचा उठ कर देव (महा मानव) बन जाता है।"

वर्षों की अखंड ज्ञान साधना से प्र० वल्लभश्रीजी प्रखर विद्वान बनीं। आपकी वक्तृत्व कला भी निखर आई। विद्वत्ता का तेज अपने आप फैलता है। जो मूलतः कुशल वक्ता है, उसके वक्तृत्त्व के साथ गम्भीर अध्ययन की जोड़ हो तो वह व्याख्यान श्रोताओं पर अमिट प्रभाव डालता है। इतनी लम्बी साधना के बाद प्र. वल्लभश्रीजी जब व्याख्यान देने लगीं तब उनके व्याख्यानों ने लोगों को मोह लिया। किसी विद्वान साधु की तरह साध्वी का भी लोगों पर प्रभाव पड़ने लगा।

इस अध्ययन काल में आपमें सेवा भाव तथा विनयशीलता पूर्ण रूप से देखने को मिलती। आपकी गुरुवर्य्या की शिष्याओं में आप प्रथम ही बाल ब्रह्मचारिणी थीं और आपकी उम्र भी छोटी थी। अतः सब गुरुबहिनों का आप पर वात्सल्य भाव तथा कृपा भाव था।

दीक्षा के बाद संवत १९७५ तक आपके क्रमशः बीकानेर, पाली, फलोदी, ब्यावर, जयपुर, लोहावट, पालिताना, बड़ोदा, जोधपुर, बीकानेर, लोहावट, फलोदी, जोधपुर, तथा लोहावट इन स्थानों पर चातुर्मास हुए।

इन शुरुआत के दिनों में भी स्वसाधना के मार्ग पर आप उत्साह से आगे बढ़ रही थीं। उम्र छोटी थी किन्तु धर्म-श्रद्धा ओतप्रोत थी। किसी कवि ने कहा है —

"बालस्यापि रवेः पादाः पतन्त्युपरि भूभृताम।
तेजसा सह जातानां, वयः कुतोपयुज्यते ॥"

बालसूर्य का भी प्रभाव सभी जनों पर पड़ता है। जो तेजस्वी है, उन्हें वय का क्या प्रयोजन ?

आप हमेशा सोचतीं कि स्वजन सम्बन्धियों का मायाजाल तोड़ कर, अपूर्व वीर्योल्लास से इस पथ को स्वीकार किया है तो मेरी साधना में प्रतिक्षण वृद्धि कैसे होगी, इसका ही मुझे हमेशा विचार करना चाहिए। गुरुदेव के चरणों में विनयपूर्वक जीवन नैया सौंप कर तथा गुरु को सुकामू बना कर मुझे आत्म कल्याण के मार्ग में अग्रसर होना चाहिए। आपश्री ने प्रशस्त विनयभाव से निष्काम सेवा एवं साधना में रत बन कर गुरुदेव तथा गुरु-बहिनों का मन जीत लिया। आप सब के अपूर्व प्रेम का पात्र बनीं। प्राथमिक जीवन में भी सुविधा, असुविधा का विचार कभी आप के मन में नहीं आया। गुरु-प्रसन्नता में आप खुद की प्रसन्नता अनुभव करती थीं। उत्कृष्ट साधु जीवन के बारे में उपाध्यायजी यशोविजय जी म. सा. फरमाते हैं—

"श्रद्धां पुरस्कृत्य विनिर्गतो यां, तामेव सम्यक् परिपालयेद यः।
सिंहास्थितः सिंहविचार चारी, समाहितो ऽसौ न विषादमेति ॥"

जो आत्मा श्रद्धा के बल पर दीक्षा के पवित्र पथ पर आरूढ़ हो चुका है तथा उसका अच्छी तरह पालन कर रहा है, इस आचरण में जो सिंह के समान शूर है, वह आत्मा कभी दुःखी नहीं बनता है।" आपश्री का जीवन इसी प्रकार का था।

आप अपने कार्य में हमेशा मग्न रहतीं। अपना काम छोड़ कभी परनिंदा या दूसरों के दुर्गुणों का विचार नहीं करतीं।

"कार्यंत्र किं ते परदोषदृष्टया, कार्यंत्र किं ते परचिंतयात्र।
वृथा कथं खिद्यसि बालबुद्धे, कुरु स्वकार्यं त्यज सर्वमन्यत्॥"

यही आपने अपने जीवन का सिद्धांत बना लिया था।

इस तरह आप अपने जीवन में संयम को अधिकाधिक लाने के प्रयत्न में रहीं। साधु जीवन को अपनाना सरल है, साधु जीवन की विशेषताओं को अपने जीवन में पूर्ण रूप से उतारना कठिन है। काम, क्रोध, मान, माया, लोभ आदि विकारों पर काबू पाना दुष्कर है। शास्त्रों में कहा है—

"न वि मुंडिएण समणो, न ओंकारेण बंभणो।
न मुणी रण्णवासेणं, कुसचीरेण य तापसो॥"

सिर्फ मुन्डन करने से कोई साधु नहीं बनता, सिर्फ ओंकार का जाप करने से कोई ब्राह्मण नहीं बनता, जंगल में वास करना ही केवल मुनि का लक्षण नहीं है, और केवल पेड़ों की खाल पहनने से कोई तापस नहीं बनता।

समता भाव सहित हो वह साधु, ब्रह्मचर्य पाले वह ब्राह्मण, ज्ञान साधना करे वह मुनि, और तप करे वह सच्चा तापस।

अहिंसा, संयम और तप यह जैन धर्म के प्रधान अंग हैं। धर्म शास्त्रों में कहा है—

"धम्मो मंगल मुक्किठ्ठं, अहिंसा संजमो तवो।
देवा वि तं नमंसन्ति, जस्स धम्मे सया मणो ॥"

जिस धर्म में अहिंसा, संयम और तप की प्रधानता है वही धर्म, सर्वश्रेष्ठ मंगल है। जिस मनुष्य का मन उक्त धर्म में सदा संलग्न रहता है, उसे देवता भी नमस्कार करते हैं।

साधु की व्याख्या करते हुए संत कबीर ने कहा है:—

"साधु ऐसा चाहिए, जैसा सूप सुभाय।
सार सार को गहि रहे, थोथा देई उड़ाय ॥"

पूज्य प्र. वल्लभश्रीजी ने अपने जीवन में सार रूप बातों को अपनाया, अश्रेयस्कर जैसे सभी दुर्गुणों का त्याग किया और धर्माचरण में अधिकाधिक रत बनने का आप प्रयत्न करने लगीं। वे भगवान् महावीर के वचनों पर अपार श्रद्धा रख कर छः काय जीवों को अपनी आत्मा के समान मानने लगीं। अहिंसा आदि पाँच महाव्रतों का पूर्ण रूप से पालन, पाँच आश्रवों का संवरण, चार कषायों का परित्याग, सुख-दुःख को समभाव से सहना, मनोनिग्रह आदि द्वारा आप संयम मार्ग पर अग्रसर होने लगीं। आगमों में सच्चे साधु का वर्णन करते हुए फरमाया है—

"सम्मदिठ्ठी सया अमूढे, अत्थि हु नाणे तव संजमे य।
तवसा धुणइ पुराण पावकं, मण वय काय सुसंवुडे जे स भिक्खु ॥"

जो सम्यग्दर्शी है, जो कर्तव्यतत्पर है, जो ज्ञान, तप और संयम का दृढ़ श्रद्धालु है, जो मन, वचन और शरीर को पाप पथ पर जाने से रोकता है तथा जो तप के द्वारा पाप कर्मों को नष्ट कर देता है, वही साधु है।

आगे और फरमाया है—

"न य वुग्गहियं कहं कहिज्जा,
न य कुप्पे निहुइन्दिए पसंते।
संजम धुव जोग जुत्ते,
उवसंते अविहेडए जे स भिक्खू॥"

जो कलहकारी वचन नहीं कहता, जो क्रोध नहीं करता, जिसकी इन्द्रियां अचंचल है, जो प्रशान्त है, जो संयम में ध्रुवयोगी (सर्वथा तल्लीन) रहता है, जो संकट आने पर व्याकुल नहीं होता, जो कभी योग्य कर्तव्य का अनादर नहीं करता, वही श्रेष्ठ साधु है।

इस तरह धर्म-शास्त्रों में श्रेष्ठ साधु के जो लक्षण दिये गए हैं, उनका आप मनन, चिन्तन तथा पालन करतीं। समता भाव तो आपकी एक महान विशेषता थी। इन दिनों में आपने उस जीवन की नींव रखी, जिस पर आगे उत्कृष्ट संयम जीवन का यशोमंदिर खड़ा रहा। उस जीवन की ऐसी उत्कृष्ठ साधना की कि उसके सुन्दर और मीठे फल तुरन्त दिखाई देने लगे।

अहिंसा का प्रचार

"अहिंसा परमो धर्मः" जैन संस्कृति का यह एक पवित्र और प्राणभूत तत्व है। श्रमण संस्कृति में यदि कोई स्वर्ण सूत्र है तो वह यह है "जिओ और जीने दो"। जैन धर्म का इतिहास एक प्रकार से अहिंसा के विविध प्रयोगों का इतिहास है। अहिंसा का अर्थ विशद करते समय मुनिश्री विजय म. सा. कहते हैं "विचार से, आचार से और उच्चार से किसी भी व्यक्ति के प्रति अकल्याण की भावना न रखना, संसार के सब जीव सुखी रहें, सब जीव स्वस्थ रहें, सब के जीवन का कल्याण हो और संसार में कोई जीव दुखी न हो, इस प्रकार की भावना को अहिंसा कहा गया है। सब के सुख में अपना सुख समझना, यही तो अहिंसा है, यही तो परम धर्म है।

जैन तीर्थंकरों ने दुनिया को अहिंसा की महान देन दी। भगवान नेमिनाथ जीवों को अभय दान देने के लिए बारात से वापिस लौट आये। भगवान महावीर ने यज्ञयाग द्वारा की जाने वाली हिंसा का कड़ा विरोध किया और लोगों को स्नेह, सहानुभूति और सहिष्णुता की सीख दी। ज्यों ज्यों मनुष्य की आत्मा का विकास होता है, त्यों त्यों उसके हृदय में प्रेम, दया, करुणा और सेवा के भाव प्रस्फुटित होते हैं। समाज, राष्ट्र और विश्व के संरक्षण के लिए अहिंसा का विकास आवश्यक है।

किन्तु कुछ मूढ़ मनुष्य इस बात को नहीं समझते हैं। अपनी जिह्वा की लालसापूर्ति के लिए वे मांसाहार करते हैं। मनोविनोद के लिए शिकार खेलते हैं। कुछ तो धर्म के नाम पर भी हिंसा करते हैं, देवी-देवताओं के आगे बकरे, मुर्गी, भैंसे, आदि प्राणियों का बलिदान होता है। जो मांसाहार करते हैं, वे लोग द्वेष, घृणा तथा ईर्ष्या के तुरन्त शिकार हो जाते हैं। आहार का असर मनुष्य के दिल और दिमाग पर निश्चित रूप से होता है। हिंसक व्यक्ति को दूसरों के प्राण, दूसरों की यातनाएं, इनकी कुछ भी पर्वाह नहीं होती।

इन भूले भटके जीवों को यदि कोई मार्गदर्शक मिल जाय तो वे पुनः रास्ते पर आ जाते हैं। पूज्यश्री प्र. वल्लभश्री जी ने जब कुछ लोगों को बिना हिचक जीव हिंसा करते देखा तब आप का दिल पिघल उठा, और अहिंसा प्रचार को उन्होंने अपने जीवन का एक आवश्यक तथा महत्वपूर्ण कार्य बना लिया।

संवत १९७७ में आपका चातुर्मास प्रतापगढ़ में था। यहाँ जैन समाज तो व्याख्यान का लाभ लेने आता ही था, साथ में अन्य समाज के लोग भी आते थे, जिनमें वहां के दरबार के अफसर भी शामिल थे। आपश्री व्याख्यान में सदाचार, अहिंसा आदि बातों का इतने आकर्षक ढंग से वर्णन करतीं कि सुनने वालों पर उसका जबरदस्त प्रभाव पड़ता। एक दिन आप अशुद्ध खानपान पर भाषण देती थीं। आपने फरमाया—

"सभी जीव जीना चाहते हैं, मरना कोई नहीं चाहता। सभी को अपना-अपना जीव प्यारा है। हमें इतनी सी सुई चुभती है तो कितनी तकलीफ होती है, थोड़ी सी अंगार से शरीर जलने पर कितनी व्यथा होती है। फिर जिन जीवों पर छुरी चलायी जाती है, जिन्हें आग पर सेका जाता है उन पर क्या बीतती होगी? जब उनकी हत्या होती है तब उनकी दर्द और करुणा से भरी पुकार हमारे कानों पर क्यों नहीं पड़ती। उस वक्त हम बहरे बन जाते हैं। उनका डर से कांपने वाला शरीर क्या हम नहीं देखते हैं। फिर क्यों कुछ भाई मांसाहार करते है? शिकार कर प्राणियों की निर्घृण हत्या करते हैं। अहिंसा का पालन करना केवल जैनों का ही अधिकार या कर्तव्य नहीं, यह सभी मानवजाति का कर्तव्य है।"

इस व्याख्यान का सभी जनता पर अद्भुत प्रभाव पड़ा। श्रोताओं में बांसवाड़ा दरबार के काका संग्रामसिंह थे। वे इस के पहले भी आपके व्याख्यान सुन चुके थे और उनका प्रभाव उन पर था ही। तुरन्त वे खड़े हो गये और हाथ जोड़ कर कहा "गुरुदेव, मैं पापी व्यक्ति हूँ। आज तक न जाने कितने प्राणियों की हिंसा मेरे कारण हुई है। आज से मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि जीवनपर्यन्त न तो मैं कभी शिकार खेलूंगा और न कभी अशुद्ध खान-पान करूंगा। उसी तरह मैं हमेशा भगवान के मन्दिर में जा कर भगवान के दर्शन करूंगा।" इस तरह अन्य जनों ने भी अहिंसा का व्रत स्वीकार किया। सब जगह इसकी चर्चा होने लगी।

आपके अद्‌भुत प्रभावशाली व्याख्यानों के समाचार रानीवास में मायाकँवर रानी साहिबा के कानों पर आये। आपने म.सा. को रानीवास में पधारने का निमन्त्रण भेजा। वहां आप पधारीं, तब रानी साहिबा ने आपके चरणों के पास रुपयों का ढेर किया। अन्य दर्शनी साधु जब आते हैं तब उनके चरणों पर भेंट चढ़ायी जाती है, उसी तरह आपने इन्हें भी समझा। बाद में राजपुत्र तथा बड़ी रानी साहिबा चन्द्र कुंवर ने रुपये चढ़ाये। आप वहां से दूर हटीं तब आप से दूर हटने का कारण पूछा गया। आपने जवाब में कहा, "हम तो इसे सर्प समान समझते हैं, रुपये पैसों को तो हम छूते तक नहीं। यह बात सुन कर वहां उपस्थित राज परिवार के सदस्यों को बड़ा अचरज हुआ। आपश्री ने फरमाया "यह रुपया वापिस ले लीजिये।" इस पर रानी साहिबा ने कहा "अब तो यह दान हो गया; आप जिस काम में फरमायेंगी, उसमें लगा देंगे। हम इसका उपयोग नहीं करेंगे।" अन्त में आपके उपदेशानुसार उन रुपयों का घीयासा लक्ष्मीचन्दजी सा. की लायब्रेरी में पुस्तकों के लिए उपयोग किया गया।

इसके बाद आपश्री ने अहिंसा पर व्याख्यान दिया। रानी साहिबा ने हिंसा के भयंकर परिणाम सुने तो आपका दिल पिघला। परिणामस्वरूप उन्होंने तथा राज्य परिवार के अन्य सदस्यों ने अष्टमी, एकादशी, चतुर्दशी तथा अमावस्या के दिन शिकार न करने और मांसाहार न करने की प्रतिज्ञा की।

जब माता ने आपश्री के व्याख्यान का लाभ उठाया तब बेटा कहां पीछे रहने वाला था। राजकुमार रामसिंहजी ने अपने स्कूल में आपश्री का जाहिर व्याख्यान करवाया। ५ जनवरी १९२२ को आपका स्कूल में जाहिर व्याख्यान हुआ। व्याख्यान के बाद राजकुमार तथा उसके विद्यार्थी मित्रों ने तिथि के दिन शिकार न करने का व्रत लिया। साथ ही जीवन पर्यन्त कौआ, कुत्ता, कबूतर, कमेडो, चिड़िया, काबर और बिल्ली, इन सात प्राणियों का शिकार न करने का नियम लिया।

प्रतापगढ़ से विहार कर आप धमोत्तर पधारीं। यहां के ठाकुर तथा अन्य जनों ने यथाशक्ति हिंसा का प्रत्याख्यान किया।

सम्वत १९७८ में आपका चातुर्मास मन्दसौर में था। चातुर्मास में बहुत धूमधाम थी। व्याख्यान में जैन श्रावक तो आते ही थे, राज्य कर्मचारी भी आते थे। विशेषकर दरबार के उच्चाधिकारी सूबेदार रफ्तुल्लाखां को आपके व्याख्यान में विशेष रस था। आप यथासंभव व्याख्यान में आते ही थे।

मन्दसौर के पास जीरण में एक बड़ा तालाब है और वहां पर सैकड़ों लोग मछलियां मारने जाते थे। प्रति दिन हजारों मछलियां इन्सान की हिंसात्मक प्रवृत्तियों का शिकार बनतीं। पानी से निकालने के बाद तड़प २ कर मरतीं। आपश्री के कानों पर यह समाचार आये। आपश्री ने सोचा कि यदि इन मछलियों की जान न बचाऊं तो यहां चातुर्मास का क्या फायदा? दूसरे दिन

व्याख्यान में सूबेदार रक्तुल्लाखां आये थे। आपश्री ने उस समय इतना प्रभावशाली व्याख्यान दिया कि व्याख्यान समाप्त होते ही रक्तुल्लाखां खड़े हो गये। हाथ जोड़ कर कहा, "गुरुदेव, मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि जल्द से जल्द दरबार से हुक्म मंगवा कर यह हिंसा बन्द कराऊंगा। आज आप ने हमारी आंखें खोल दीं। आपकी अमृत वाणी के कारण भविष्य में उन जीवों को अभय दान मिलेगा। तुरन्त ही आप ने दरबार से हुक्म मंगवाया और वहां मछली मारने की बन्दी की। यह आज्ञा तालाब के चारों ओर पत्थर पर खुदवा कर लगा दी। साथ ही मन्दसौर के चारों ओर शिकार खेलने की मनाई की। यह मनाई का हुक्म भी पत्थर पर खुदवा कर, वे पत्थर चारों ओर लगाये गये। इस तरह हजारों जीवों का बलिदान आपश्री के प्रयत्न से बन्द हुआ।

यह कार्य हमेशा चालू ही रहता। अपने लम्बे विहार काल में हर जगह अहिंसा पालन, सदाचार तथा कुछ विशिष्ट व्रतों का नियम लेने वाले निकल ही आते। प्रभावी पुरुष का व्यक्तित्व ही विशिष्ट होता है। अपने प्रभावी वक्तृत्व से आपश्री ने हजारों जीवों को अभयदान दिलवाया और भगवान महावीर की अहिंसा का खूब डंका बजाया।

तीर्थ यात्रा

पवित्र तीर्थ स्थानों की यात्रा ! जीवन में इस से बढ़ कर कौनसा मंगल प्रसंग होता होगा। जिसने जीवन में एक बार भी इन तीर्थ स्थानों की यात्रा नहीं की, उसका जीवन अधूरा ही रहता है।

तीर्थ यात्रा से कई लाभ हैं। देश के विभिन्न भागों की अनायास यात्रा हो जाती है। वहां के लोग, रहन सहन, भाषाएं आदि का परिचय बढ़ता है। देशाटन करने से व्यक्ति चतुर बन जाता है।

जैन तीर्थों की अनुपम कलाकृति देख कर ऐसा लगता है कि इन्हें देखने के लिए ही भगवान ने आंखें दीं। माउण्ट आबू, पालिताना, राणकपूर आदि स्थानों की शिल्पकला देख कर तो हर्ष का पारावार नहीं रहता। कला का वह सुन्दर नमूना देख कर मानस मयूर नाचने लगता है। माउण्ट आबू के देलवाड़ा मंदिरों की शिल्प कला के बारे में कहा जाता है कि वह विश्व की सर्वोत्तम शिल्पकृति है। कारीगरों ने वहां पत्थरों पर इतनी बारीक नक्काशी की है कि मानों पत्थर, पत्थर नहीं, मोम है। मानव कला का कितना सुन्दर आविष्कार कर सकता है, इसका नमूना है—

जैन तीर्थ स्थान। दानवीरों के करोडों रुपयों के दान का प्रतीक है—जैन तीर्थ स्थान।

और सर्वाधिक महत्वपूर्ण है—पवित्र स्थानों की यात्रा से जीवन का पवित्रतर होना। जिन स्थानों पर तीर्थंकर विराजे, जहां की चप्पा चप्पा भूमि उनके पुनीत चरण स्पर्श से पावन हुई, उन स्थानों के दर्शन कर पाप के बन्ध छूटते हैं, पुण्य का उपार्जन होता है। रमणीय, शान्त, स्वच्छ, उदात्त भावना से परिपूर्ण जैन तीर्थ स्थानों के दर्शन कर जैन श्रावक हर्ष विभोर हो उठता है।

पूज्यश्री प्र. वल्लभश्री जी ने अपने जीवन में जैन तीर्थों की बार बार यात्रा कर अगणित लाभ उपार्जन किया। उन्होंने खुद तीर्थ स्थानों की यात्रा की, साथ ही साथ लोगों को प्रेरणा देकर उनसे बार बार यात्रा करवायीं। श्री सिद्धक्षेत्र पालिताना में तो आपने चार चातुर्मास भी किये थे। आपकी अध्यक्षता में तीर्थ यात्रा के लिए संघ निकले। इस संघ में हजारों श्रावक, श्राविकाएं शामिल होतीं। "एक पंथ, दो काज" यह कहावत तो प्रसिद्ध है। किन्तु संघ में भाग लेने वाले श्रावकों को कई लाभ पहुंचते। पवित्र तीर्थ स्थानों की यात्रा होती, आपश्री के प्रभावी व्याख्यानों के श्रवण का लाभ मिलता तथा संघ में रहने पर कुछ पवित्र नियमों का पालन, तपस्या आदि भी होती। आपस में प्रेमभावना, संघ वात्सल्य की प्रवृत्ति, जिन शासन सेवा आदि भावनाओं का उदय तथा विकास होता था।

सम्वत् १९७८ में जब आपका मन्दसौर में चातुर्मास था तब फलोदी से हस्तीमल जी गुलेछा एवं उनकी धर्मपत्नी (गुजरजी) आपकी सेवा में पधारीं और आप से प्रार्थना की= "आपश्री की अध्यक्षता में जेसलमेर का छरी पाली संघ निकालने की भावना है। सेवक पर अनुग्रह कर मारवाड़ पधारने की कृपा करें।" विनती स्वीकार कर आप फलोदी पधारीं। फाल्गुन मास में यहाँ से जेसलमेर की ओर संघ का प्रस्थान था। संघ में छरी पालने का नियम था। छरी का मतलब जिनके अन्त में री आती है, ऐसे छः नियमों का पालन। वे नियम निम्नलिखित हैं—

१. एकल आहारी—एक वक्त भोजन करना (एकाशन)।
२. सचित परिहारी—सचित भक्षण त्याग।
३. पद्चारी—पैदल, नंगे पैर यात्रा।
४. भूमि संथारी—पलंग, गादी आदि पर नहीं सोना।
५. शुद्ध समकीत धारी—सम्यक्त्व व्रत का पालन, मिथ्यात्वी देव पूजा आदि का परिहार।
६. ब्रह्मचारी—ब्रह्मचर्य का पूर्ण पालन करना।

इन नियमों के पालन से अपने जीवन को पवित्र बना कर श्रीसंघ आपश्री के साथ जेसलमेर पहुंचा।

जेसलमेर—

मरुभूमि राजस्थान का यह एक पवित्र तीर्थ स्थान है शहर के अन्दर तो सुन्दर मन्दिर हैं ही, शहर के बाहर लोद्रवपुर

में भगवान पार्श्वनाथ का सुन्दर शिल्पकला युक्त मन्दिर है। यह मन्दिर भाग्यशाली धीरू शाह भनसाली ने बनवाया था, जो आज भी उनकी कीर्ति ध्वजा फहरा रहा है। जेसलमेर में १४ जिनमंदिर हैं। साथ ही यहां आगमों का विशाल भण्डार है। ताड पत्री पर लिखे हुए आगम तथ अन्य धर्म ग्रन्थ यहां सहस्त्रों की संख्या में मौजूद है। इसके अलावा प्रातः स्मरणीय श्री जिनदत्त सूरीश्वरजी म. सा. की ८०० वर्ष पूर्व की चादर आज भी वहां सुरक्षित है। इस तरह यह एक ऐतिहासिक तीर्थ स्थान है। इस पुनीत स्थान की यात्रा कर सभी यात्री अत्यन्त प्रसन्न हुए। सभी ने भक्तिभाव से पूजा सेवा का लाभ लिया। आपश्री तथा अन्य साध्वियों ने भावभरे मन से भगवान की प्रार्थना तथा गुणगान किया। यात्रा कर चैत्र वदी में आपश्री वापिस फलोदी पधारीं।

जेसलमेर की यात्रा करने के बाद आपश्री ने श्री सिद्धक्षेत्र शत्रुंजय की यात्रा का निश्चय किया। इसके पहले भी आप एक बार वहाँ पधार चुकी थीं किन्तु एक ही बार वहां की यात्रा कर समाधान कैसे होगा? अतः सम्वत १९८२ का चातुर्मास आपने पालिताना में किया। तिवरी के बहुत से भाइयों की भी इस तीर्थ धाम की यात्रा की भावना थी, और कइयों ने तो जब तक वहां की यात्रा न होगी तब तक घी और गेहूँ न खाने की प्रतिज्ञा आपश्री के सम्मुख ली थी। आपश्री के पालिताना पधारने का समाचार सुन सभी को हर्ष हुआ। प्रतिज्ञा पूर्ण करने का समय अब आ

गया था। तिवरी से करीब ३००-४०० यात्री आये, अन्य गांवों से भी यात्री पधारे। यात्रियों की संख्या १००० तक पहुंच गयी।

सिद्धगिरि—

जैनों का महानतम तीर्थ क्षेत्र। यहीं पर प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव निन्यानवे पूर्व बार पधारे थे। यहीं पर करोड़ों मुनिराज मोक्ष पधारे। यहां की चप्पा-चप्पा भूमि उन पुनीत चरणों के स्पर्श से पुनीत बनी है। इस महान तीर्थ क्षेत्र के दर्शन कर सभी के हृदय हर्ष से भर जाय, इस में आश्चर्य ही क्या? भारत भर के दानवीर जैनों ने इस गिरिराज पर मन्दिरों की सुन्दर नगरी बसा दी है। इन मन्दिरों के निर्माण में करोड़ों रुपयों का व्यय हुआ। जैन भाइयों ने इसके निर्माण में पानी की तरह पैसा बहाया, केवल इसी उद्देश्य से कि मन्दिर सुन्दरतम बने। यहां की शिल्पकला देखते ही मन मोहित होता है। एक एक टूंक के दर्शन कर जब यात्री आगे बढ़ता है तो वह बनाने वालों को श्रद्धा भरे हृदय से धन्यवाद देता है। यात्री यहां मोहित हो जाते हैं।

"यात्रा नवाणु करिए, विमल गिरि यात्रा नवाणु करिए।
करिए तो भव दुःख हरिए, विमल गिरि यात्रा नवाणु करिए॥"

कभी इस स्तवन को गाते हुए वह गिरिराज पर चढ़ता है तो कभी:—

"जगमां तीरथ दो बड़ा, शत्रुंजय गिरिनार ।
एक गढ़ ऋषभ समोसर्या, बीजे नेमकुमार ॥"

इस गीत का गुंजन करते हुए वह आगे बढ़ता है। अन्त में जब वह दादा के दरबार में आता है तब दादा के दर्शन कर उसे यह महसूस होता है कि आज उसका जन्म सफल हुआ।

उसी महान तीर्थधाम की सभी ने भक्तिपूर्वक यात्रा की। आदिनाथ दादा की पूजा सेवा कर २-४ दिनों के बाद कुछ भाई तो घर लौटे, किन्तु करीब २५० यात्री पूरा चातुर्मास वहां रहे।

आपश्री ने अपने दीक्षाजीवन में और भी दो चातुर्मास यहाँ किये।

तीर्थ स्थानों की यात्रा की आपको इतनी लगन थी कि उसके आगे आप सभी कार्यों को छोड़ देतीं। मन्दसौर श्रीसंघ ने आपकी अध्यक्षता में माँडवगढ़ की यात्रा का संघ निकालने का निश्चय किया। आपश्री को रींगणोद, सीतामऊ आदि प्रदेशों में घूमना था। अतः आपने श्रीसंघ को कहा "हमें कुछ प्रदेशों में अभी विहार करना है। यदि श्रीसंघ रतलाम पधारे तो वहां से हम साथ हो लेंगी। श्रीसंघ तो आपका साथ चाहता था। अन्त में यही तय हुआ। जब आप श्रीसंघ का साथ देने के लिए रतलाम पधारीं तो वहां प. पूज्य विजयानन्द सूरीश्वरजी म. सा. विराजमान थे। दोपहर को आपश्री वन्दनार्थ वहां पधारीं तब आचार्यश्री शिष्यसमुदाय को भगवती सूत्र की वाचना दे रहे थे।

काफी श्रावक भी इसका लाभ ले रहे थे। आप पधारीं तो वाचना रोक कर के आचार्यश्री ने एक श्रावक के साथ सूत्र का पाना भेजा और कहा—

"तुम यहीं ठहरना, वाचना का लाभ मिलेगा।"

"गुरुदेव, वाचना का लाभ मिलता तो अच्छा ही होता, किन्तु मुझे श्रीसंघ के साथ यात्रा के लिए जाना है, सो खेद है कि मैं ठहर नहीं सकूंगी" आपश्री ने कहा।

"आप यात्रा जा रही हैं सो अच्छा ही है किन्तु यात्रा तो पीछे भी हो सकती है। अभी यह लाभ लेना तुम्हारे लिए विशेष लाभप्रद है। संघ के साथ तो बाकी आर्यामण्डल भी जा सकता है।"

इस पर आप कुछ कहें, तब तक संघ के आगेवान ने कहा कि हमारा अभिग्रह है कि यदि आपश्री हमारे साथ यात्रा में न पधारीं तो गेहूँ और घी नहीं खायेंगे। संघ का आग्रह देख कर म. सा. को आश्चर्य हुआ। किन्तु समझाने की दृष्टि से उन्होंने फिर कहा—"यह एक विदुषी साध्वी है। शासनोद्धार के अनेक कार्य करने योग्य है। इस आर्यारत्न के लिए वाचना का लाभ लेना विशेष हितकर है। इनकी विद्वत्ता, प्रभाव और आकर्षक वक्तृत्व शैली के कारण ही मैं इतना अनुरोध कर रहा हूँ। यह ज्ञान भविष्य में इनके काम आयेगा।"

किन्तु श्रावक नहीं मान रहे थे। अन्त में आपने सोचा कि जो काम हाथ में लिया, उसे पूरा करना ही चाहिए। तब आपने आचार्यश्री से कहा, "आपका फरमाना मेरे लिए श्रेयस्कर है किन्तु मैं मजबूर हूं। मन्दसौर संघ को साथ में यात्रा कराने का वचन दे चुकी हूँ, उसे टाल नहीं सकती। दूसरे दिन आपने यात्रा के लिए प्रस्थान किया।

मांडवगढ़—

भगवान श्री सुपार्श्वनाथ के मनोहारी मन्दिर से सुशोभित यह तीर्थस्थान कभी एक वैभवशाली नगर था। रानी रूपमती और बाजबहादुर की कहानी से मशहूर यह स्थान आज भी दर्शनीय है। प्राचीन काल में यहां जैनों की बस्ती बहुत बड़ी संख्या में थी और वे सभी वैभव सम्पन्न थे। इन्दौर महू से आज भी कई यात्री इस स्थान की सैर करने आते हैं। जैनों के लिए तो इस रमणीय स्थान के दर्शन के साथ साथ सातवें तीर्थंकर भगवान श्री सुपार्श्वनाथ के दर्शन का तथा पूजा सेवा का महान लाभ मिलता है।

पूज्य श्री प्र० वल्लभश्री जी के साथ करीब २०० श्रावक श्राविकाओं का संघ था। व्याख्यान, धर्म-चर्चा आदि में समय व्यतीत होता था। शुभ यात्रा सानन्द सम्पन्न हुई। मांडवगढ़ का रमणीय स्थान तथा भगवान श्री सुपार्श्वनाथ की मनोहर मूर्ति के दर्शन कर सभी अति प्रसन्न हुए। उल्लास के साथ यात्रा कर

श्रीसंघ मंदसौर लौटा। आपने इन्दौर की तरफ विहार किया और इन्दौर, उज्जैन, मक्षीजी आदि स्थानों की यात्रा की।

इनके अलावा श्री राणकपुर तथा उसकी पंचतीर्थी, नाकोडा पार्श्वनाथ आदि पवित्र स्थानों की भी आपने यात्रा की।

राणकपुर—

भारत के प्रसिद्ध जैनतीर्थों में राणकपुर का भी समावेश होता है। यहाँ पर पंद्रहवीं सदी में शेठ धनाशाह ने १५ करोड़ रुपये खर्च कर 'त्रैलोक्य दीपक प्रासाद' नामक मन्दिर बनवाया। यह मन्दिर स्थापत्य कला का बेजोड़ नमूना है। मन्दिर का निर्माण कार्य संवत १४३४ में शुरू हुआ, वह ६५ वर्ष तक चला। मन्दिर में १४४४ विशाल स्तम्भ हैं, जिन पर सुन्दर कलाकुसर की गयी है। मूलनायकजी भ० ऋषभदेव की चौमुखजी प्रतिमा है। राणकपुर, नाडोल, नाडलाई, घाणेराव तथा वरकाणा गोडवाड की प्रसिद्ध पंचतीर्थी है। चरितनायिका ने संवत २००६ में इन सभी तीर्थों की यात्रा की।

इस तरह आपश्री ने श्री सिद्ध क्षेत्र पालिताना, मांडवगढ़, जैसलमेर, राणकपुर, केशरियाजी आदि पवित्र स्थानों की यात्रा कर अपने जीवन को धन्य बनाया। जगह जगह श्रावकों को प्रेरणा देकर आपश्री ने यात्रा के संघ निकाले। महापुरुष अच्छे कार्य खुद करते हैं, उसी तरह दूसरों से भी करवाते हैं। इसी में उनकी महानता है।

समाज की महान सेवा

महापुरुष जब अवतार लेते हैं तो अनेकों पर उपकार करते हैं। वास्तविक इन उपकारों के कारण ही वह आत्मा महान कहलाती है। प्र० वल्लभश्रीजी ने अपने जीवन काल में विविध अंगों से समाज की महान सेवा की।

महापुरुष जब परसेवा में लगे रहते हैं तब सामान्य व्यक्ति अपने व्यक्तिगत स्वार्थ में फँसा रहता है। जिन्दगी में सुख चैन से रहना सभी चाहते हैं किन्तु सच्चा सुख तथा आनन्द किसमें है, इसका पता बहुत कम लोगों को है। बहुत से लोग सुख का केन्द्र स्थान पैसा मानते हैं। किन्तु यदि यह सच होता, तो कोई अमीर आदमी कभी किसी प्रकार दुःखी नहीं होता, न कभी बूढ़ा होता, न कभी मरता। उसे आधि, उपाधि, व्याधि किसी से भी तकलीफ नहीं होती। परन्तु हम देख रहे हैं कि ऐसा नहीं होता। एक गरीब व्यक्ति भी सुखी बन सकता है और कई अमीर भी दुःखी हैं। यदि पैसा ही सुख का साधन होता तो सभी गरीब व्यक्ति अत्यन्त दुःखी होते।

इस वास्ते समझने की बात यह है कि सुख का साधन पैसा न होकर समाधान तथा महत्कार्य की प्रेरणा है। हमारी

जिन्दगी हम सफल बनायेंगे, जीवन में कुछ अच्छे काम करेंगे, यह प्रेरणा, यह महत्वाकांक्षा हरेक के जीवन में होनी चाहिए। आहार, निद्रा, मैथुन आदि क्रियाएँ तो पशु भी करते हैं तो फिर इन्सान और जानवर में फर्क ही क्या रहा। इन क्रियाओं में जीवन यापन करने वालों के लिए :

सन्त कबीर ने कहा है—

"रात गँवाई सोय करी, दिवस गँवायो खाय।
हीरा जनम अमोल था, कौड़ी बदले जाय ॥"

यदि जीवन में देश, धर्म तथा समाज, इनके लिए कुछ काम न किया और केवल अपना ही स्वार्थ देखने में जिन्दगी पूर्ण कर दी, तो कौन ऐसे व्यक्ति का नाम याद रखेगा। उसकी जिन्दगी का मूल्य ही क्या है?

अपने शुभ कर्म के उदय से जिन्हें धन सम्पत्ति की प्राप्ति हुई है, वे यदि उसमें से कुछ हिस्सा समाज कार्य के लिए खर्च करें, तो उन्होंने अपने धन का वास्तव में सदुपयोग किया, कहा जायेगा।

'हस्तस्य भूषणं दानं।'

हाथ का भूषण है दान। किन्तु यह बात सभी भाइयों की समझ में नहीं आती है। लोभी क्या दान करेंगे? किन्तु सद्-

भाग्य से यदि किसी महापुरुष से उनका साक्षात्कार हुआ तो उनकी जीवन दृष्टि ही बदल जाती है। जो पहले से ही उदार हृदय थे, उनको अपने धन व्यय के लिए योग्य मार्ग मिल जाता है। यह मार्ग दर्शन कोई सामान्य व्यक्ति नहीं कर सकता। सामान्य व्यक्ति का उतना प्रभाव भी नहीं पड़ता। किन्तु जिन्होंने अपने जीवन को समाज कार्य में लगाया है, दुर्गुणों को छोड़ सद्गुणों का आसरा लिया है, उत्कृष्ट संयम जीवन पर जो अग्रगामी हैं, ऐसे महान साधु तथा साध्वी के वचन का जनमानस पर तुरन्त असर होता है।

प्र. वल्लभश्रीजी ने अनेक जनों को प्रेरणा देकर अच्छे कार्य करवाये।

'विद्या नरस्य भूषणं।'

इस बात को उन्होंने अच्छी तरह पहचान लिया था। वे स्वतः आजीवन सरस्वती की सेवा में मग्न थीं। साथ ही साथ अनेकों को प्रेरणा देकर उन्होंने जगह जगह स्कूल तथा धार्मिक पाठशालाएँ बनवायीं। वे हमेशा कहतीं 'विद्या धनं सर्व धनं प्रधानं।' सब धनों में विद्या धन प्रधान है। राजा की पूजा केवल अपने ही देश में होगी, किन्तु विद्वान सभी जगह पूजा जाता है। लेकिन यह विद्या दिखावे की नहीं, सच्ची हो।

'सा विद्या, या विमुक्तये।'

जो विद्या मुक्ति की ओर ले जायेगी, जिससे इन्सान इन्सानियत सीखेगा, उसके हृदय के भाव उच्च होंगे, वह सु-संस्कृत बनेगा, वही सच्ची विद्या। आपने इसी प्रकार की विद्या का प्रचार किया। आपके उपदेश से जगह जगह स्कूल तथा धार्मिक पाठशालाएं बनीं।

जब आप खीचन में थीं, तब वहां आपने स्कूल के लिए जगह की कमी देखी। आपके सदुपदेश से श्री सेठ हजारीमलजी कोठारी की धर्मपत्नी केशरबाई ने 'श्री महावीर मिडिल स्कूल' के लिए भवन बनवा दिया, जिसका नाम 'केशर भवन' रखा गया।

ओशिया तीर्थ में स्थित श्री वर्धमान जैन विद्यालय की तरफ हमेशा आपकी कृपादृष्टि थी। आपकी प्रेरणा से मुर्शीदाबाद निवासी श्री राजा विजयसिंहजी बहादुर की मातुश्री श्रीमती सुगनकुमारी बाई ने ७००० रुपयों का दान इस विद्यालय को दिया। धमतरी निवासी श्री कंवरलालजी दुगड़ ने ५००) के स्टील के बर्तन भेंट किये, तथा श्री जमनालालजी दुगड़ ने १००० रुपये देकर उसके ब्याज द्वारा प्रति वर्ष एक दिन उसमें से भोजन देने की व्यवस्था कर स्वामिवात्सल्य का लाभ उठाया।

गंभीरा (गुजरात) में एक धार्मिक पाठशाला चलती थी। किन्तु संस्था के पास खर्चा चलाने के लिए स्थायी फण्ड न होने से उसके बन्द होने का खतरा पैदा हुआ। जब आपने यह परि-

स्थिति देखो, तो सभी भाइयों को विद्या का महत्व समझा कर स्थायी फण्ड निर्माण करने की प्रेरणा दी। आज भी वह पाठशाला अच्छी तरह चल रही है और कई बालक-बालिकाएं उससे लाभ उठा रहे हैं।

जैन समाज में और विशेषतः मारवाड़ी जैन समाज में उन दिनों स्त्री शिक्षा का प्रायः अभाव था। जब लड़कों को पढ़ाने की आवश्यकता महसूस नहीं होती थी, तो लड़कियों की तरफ कौन ध्यान देवे? इस तरह माताओं के अशिक्षित रहने के कारण ही मारवाड़ी समाज पिछड़ा रहा। आपको यह बात हमेशा खलती थी, और आप हमेशा स्त्री शिक्षा का प्रचार करतीं। लोहावट जाटावास में आपके उपदेश से चन्दा किया गया और कन्या पाठशाला का निर्माण हुआ। इस पाठशाला का उद्घाटन वीरपुत्र श्री जिनआनन्द सागरजी सूरीश्वरजी म. सा. के करकमलों द्वारा कराया और पाठशाला का नाम 'उद्योत कन्या पाठशाला' रखा गया। इस पाठशाला में बालिकाएं धार्मिक एवं व्यावहारिक शिक्षा प्राप्त करती हैं। यहाँ की कुछ बालिकाओं ने उत्कृष्ट संयम मार्ग को अपनाया। साध्वीजी विद्वानश्रीजी, मनोहरश्रीजी, चरणप्रभाश्रीजी, दिव्यप्रभाश्रीजी की पढ़ाई यहीं पर हुई थी।

पुस्तक प्रकाशन—

विद्या प्रचार के लिए जिस तरह शालाओं का निर्माण आवश्यक है, उसी तरह अच्छी किताबों का निर्माण भी आवश्यक

है। ख़ास तौर पर जैनियों ने धार्मिक पुस्तकों के प्रकाशन की ओर बहुत कम ध्यान दिया है। आपने इस कमी की पूर्ति कराने के लिए विभिन्न उपयोगी तथा सुन्दर धार्मिक पुस्तकें लिख कर तथा लिखवाकर उनका प्रकाशन करवाया। आपश्री की प्रेरणा से निम्न-लिखित पुस्तकें प्रकाशित हुई :—

(१) वैराग्यशतक—मूलकर्ता
संस्कृत छाया एवं हिन्दी अनुवादकर्त्री—
प्र. वल्लभश्रीजी म.
प्रकाशक—छोगमलजी गोधुलालजी सेठिया, तलोदा।

(२) संबोध सत्तरी—मूलकर्ता-श्री रत्नशेखर सूरि
संस्कृत छाया एवं हिन्दी अनुवादिका—
प्र. वल्लभश्रीजी म.।

(३) पंचप्रतिक्रमण सार्थ-प्रकाशक-फलोधी निवासी श्री नेमीचंद जी दुगड़ की धर्मपत्नी कोलाबाई
(वर्तमान--हेमश्रीजी)।

(४) स्नात्र पूजा तथा दादा साहेब की पूजा-संग्रह – देवचन्द्रजी कृत तथा रामऋद्धि सागर कृत।
प्रकाशक-भीवराजजी देवीचन्दजी, तिवरी।

(५) चैत्य वंदन भाष्य सार्थ—हिन्दी अर्थ—प्रतापमल जी सेठिया, मंदसौर।
प्रकाशक—मेघराजजी बुरंकिया, तलोदा।

(६) गुरुवंदन भाष्य तथा पच्चक्खाण भाष्य (सार्थ) :—
हिंदी अर्थ-प्रतापमलजी सेठिया, मंदसौर।
प्रकाशक—जीवराजजी मिश्रीलालजी नाहटा,
शहादा तथा भीकमचन्दजी खीवसरा, बड़ोदा।

(७) राइदेवसी प्रतिक्रमण (मूलसूत्र)—
प्रकाशक—भीवराजजी देवीचन्दजी, तिवरी।

(८) पैंतीस बोल सार्थ (द्रव्यानुयोग प्रवेशिका) :—
प्रकाशक-भेरूदानजी कोठारी, बीकानेर।

(९) दादा साहब की पूजा—(जिन हरिसागर सूरि कृत)
प्रकाशक—धुलिया श्रीसंघ।

(१०) गृहस्थ धर्म—लेखक चन्दनमलजी नागोरी, छोटी सादड़ी।
प्रकाशक—महावीर स्वामी मन्दिर ट्रस्टी, मुंबई।

(११) श्रावक धर्म अणुव्रत—लेखक चन्दनमलजी नागोरी, छोटी सादड़ी।
प्रकाशक—मंगलभाई लक्ष्मीचन्द।

(१२) मानव धर्म (दो संस्करण) लेखक-चन्दनमल जी नागोरी,
प्रकाशक—संपतलालजी सोहनलालजी गुलेच्छा, कटंगी।

(१३) संस्कृत चैत्य वन्दन स्तुति—
प्रकाशक—मंगलभाई लक्ष्मीचंद।

(१४) पंचप्रतिक्रमण सूत्रः—प्रकाशक—लोहावट श्रीसंघ।

(१५) स्तवन सज्झाय संग्रह—संग्राहिका—मनोहरश्रीजी
प्रकाशक—हस्तीमलजी डाकलिया, मुंगेली
तथा सोवनराजजी चोपड़ा, तलोदा।

(१६) श्री ज्ञानश्रीजी म. सा. जीवन चरित्रः—लेखक-मांगीलालजी
मुणोत वकील, जोधपुर एवं
सुभाषित रत्न संग्रह-संग्राहिका—कुसुमश्रीजी।
प्रकाशक—खेतमलजी पारख, नांदगांव।

(१७) दोहा संग्रहः—संग्राहिका—कुसुमश्रीजी
प्रकाशक—गेंदीलालजी घुटनलालजी बैराठी, जयपुर।

(१८) वीश स्थानक विधिः—प्रकाशक-वल्लभ समाज, बड़ोदा।

(१९) ज्ञानपंचमी विधिः-प्रकाशक-हीरालालजी नाहटा, शहादा।

(२०) चैत्य वंदन स्तुति संग्रह :—संग्राहिका—हेमश्रीजी
प्रकाशक—जमनालालजी दुगड़, धमतरी।

इस तरह धार्मिक दृष्टया अत्यन्त उपयुक्त पुस्तकों का प्रकाशन आपकी प्रेरणा से हुआ।

जिस तरह विद्या प्रचार के लिए आपने कार्य किया, उसी तरह अन्य धर्म कार्यों के लिए भी आपश्री ने कइयों को प्रेरणा दी। आपश्री हमेशा फरमातीं "यदि कोई धनी आदमी अपने

धन का उपयोग केवल अपने लिए करे तो उसमें कौनसा बड़प्पन है ? अपने लिए तो सभी जीते हैं। विशेषता तो उसमें है कि धनी व्यक्ति अपने धन का सदुपयोग अच्छे कार्य में करे, दूसरों के लिए करें। अपने लिए आलीशान भवन बनाना, उसे अच्छी तरह सजाना आदि कार्य कोई भी सम्पन्न व्यक्ति कर सकता है। शादी व्याह में हजारों रुपये खर्चने वाले भी हैं, किन्तु जो व्यक्ति समाज के धर्म कार्य के लिए उपाश्रय बनावे, जीर्ण मन्दिरों का उद्धार करे वही अपने धन का सदुपयोग करता है।" आपकी वाणी का लोगों पर ऐसा प्रभाव पड़ता कि लोग तुरन्त बड़े से बड़े कार्य के लिए तैयार हो जाते।

फलोदी निवासी सेठ हस्तीमलजी गुलेछा की धर्मपत्नी विमलबाई (जो गुजरजी नाम से विख्यात है) आपकी परम भक्त थी। आपकी प्रेरणा से गुजरजी बाई ने फलोदी में सम्वत १९९२ में विशाल धर्मशाला बनवा कर श्रीसंघ को समर्पण की।

फलोदी और लोहावट के बीच में १६ मील का फासला है। साधु साध्वियों के लिए इतना लम्बा विहार करना दुष्कर कार्य है। मार्ग में कोई विश्राम स्थान नहीं था। इस कमी को दूर करने के लिए आपके उपदेश से लक्ष्मीलालजी गुलेछा की धर्मपत्नी ने लोहावट और फलोदी के बीच छीला गांव में एक धर्मशाला बनवायी। इन्हीं जड़ावबाई ने आगे चल कर आपके पास दीक्षा अंगिकार की, जिनका नाम हुशियारश्रीजी था।

श्री सिद्धक्षेत्र 'पालिताना' जैनियों का पवित्रतम तीर्थस्थान है। हजारों यात्री प्रतिवर्ष यहां पर आते हैं। विशेषकर चैत्र शु० १५, वैशाख शु० ३ तथा कार्तिक शु० १५, इन दिनों में यहां पर इतनी भीड़ होती है कि यात्रियों को ठहरने के लिए जगह नहीं मिलती। यद्यपि यहां पर अन्य धर्मशालाएं थीं, फिर भी वे पूरी नहीं पड़ती थीं। इस कमी को दूर करने के लिए आपश्री के सदुपदेश से सूरत निवासी प्रेमचन्द भाई कल्याणचन्द भाई ने वहां पर एक विशाल धर्मशाला बनवाई, जो कल्याण भवन के नाम से प्रसिद्ध है।

लोहावट बिसनाबास में सतीदानजी लुणिया ने आपकी प्रेरणा से धर्मशाला बनवाई तथा लोहावट जाटावास में स्थानीय धर्मशाला में एक विशाल हॉल बनवाया गया।

बीकानेर में क्षमा कल्याणजी म. सा. का उपाश्रय जीर्ण हो चुका था। आपश्री ने स्थानीय जैन संघ को उपदेश देकर उसका जीर्णोद्धार करवाया।

बडोदा में उपाश्रय बहुत ही छोटा था। साधु साध्वियों को चातुर्मास निवास में तथा व्याख्यानादि धार्मिक कार्यों के लिए जगह की बहुत कमी थी। आपके सदुपदेश से प्रेरित होकर श्री. मूलचन्दजी पारख ने नया बाजार में स्थित एक विशाल भवन उपाश्रय के लिए श्रीसंघ को समर्पण किया। इस भवन के कारण सबको सुविधा रहती है।

जिस तरह आपश्री ने प्रयत्न कर धर्मशाला बनाने के लिए भविजनों को प्रेरित किया, उसी तरह मन्दिरों के जीर्णोद्धार भी करवाये, प्रतिष्ठा महोत्सव, उद्यापन आदि कार्य भी आपकी अध्यक्षता में हुए।

बड़ोदा में श्री नेमिनाथजी भगवान का मन्दिर जीर्ण हो गया था। आपश्री से प्रेरणा लेकर जीर्णोद्धार का कार्य शुरू हुआ। अनेक दानवीरों के सहयोग से कार्य सम्पन्न हुआ तथा प्रतिष्ठा महोत्सव भी धूमधाम से हुआ।

पादरा में श्री जिनदत्त सूरि म० सा० की दादाबाड़ी में छत्री की जगह बहुत छोटी थी। पूजा वगैरा अन्य स्थान पर पढ़ानी पड़ती। आपश्री की प्रेरणा से वहाँ बड़ी जगह बनाई गई।

तपस्या तथा उद्यापन—

जीवन में सुख-दुःख क्यों हैं? कुछ लोग भगवान को सुख तथा दुःख देने वाला मानते हैं। किन्तु यदि भगवान की मर्जी पर दुनिया चलती हो तो इस दुनिया में इतना दुःख क्यों है? करुणा हृदय भगवान दुनिया में दुःख, रोग, शोक क्यों बिखेर देगा? वास्तविक बात यह है कि दुःख का कारण भगवान न होकर हमारे कर्म हैं। अनादि काल से आत्मा आठ कर्म रूपी बंधन से युक्त है और इन्हीं कर्मों के परिणाम हमें भोगने पड़ते हैं। आत्मा कर्म-बंधन से छुटकारा कर मुक्ति प्राप्त कर ले, इसके

लिए सर्वोत्तम साधन तपाराधना है। जैसे सुवर्ण को मिट्टी से अलग करने के लिए अग्नि असाधारण साधन है, वैसे ही आत्मा को कर्म से पृथक करने के लिए तप रूप अग्नि परम साधन है। भगवान महावीर ने १२॥ वर्ष तक अखंड तप साधना की। कर्मों से घोर युद्ध कर अन्त में केवल—ज्ञान संपदा प्राप्त की। वैसे ही जो भव्यात्मा त्रिकरण योग से यथाशक्ति तप करता है, वह क्रमशः अनन्त सुखों का भोक्ता बनता है।

श्री सोमप्रभाचार्य ने 'सूक्त मुक्तावलि' काव्य में कहा है—

यस्माद्विघ्नपरंपरा विघटते, दास्यं सुराः कुर्वते।
कामः शाम्यति दाम्यतींद्रियगणः, कल्याणमुत्सर्पति॥
उन्मीलन्ति महर्द्धयः कलयति, ध्वंसं चयः कर्मणां।
स्वाधीनं त्रिदिवं शिवं च भवति, श्लाघ्यं तपस्तन्न किम्॥८२॥

अर्थः—जिस तप से कष्ट की परम्परा नाश को पाती है, देवता दास बनते हैं, काम विकार शान्त होता है, इन्द्रियों का समूह दमित होता है, कल्याण विस्तीर्ण होता है, बड़ी बड़ी ऋद्धियाँ विकसित होतीं हैं और ज्ञानावरणीयादि कर्म समूह का नाश होता है, स्वर्ग और अन्त में मोक्ष की प्राप्ति होती है, वह क्या प्रशंसा करने योग्य नहीं? तप वास्तव में कल्प वृक्ष है।"

इन तपस्याओं में जो महान तपस्याएँ होती हैं, उनकी जब सकुशलतापूर्वक समाप्ति होती है तो उस खुशी में महोत्सव

किया जाता है। ज्ञान पंचमी तथा वीशस्थानक आदि तपस्या की निर्विघ्न पूर्णाहुति के आनन्द में उद्यापन महोत्सव किया जाता है। जिस तरह भव्य मन्दिर बन जाने पर भी, जब तक उसका शिखर नहीं बनता, तब तक वह पूर्ण नहीं होता तथा उसकी शोभा भी नहीं बढ़ती, उसी तरह तपस्या के महोत्सव के बिना तपस्या का पूर्ण फल भी नहीं मिलता।

तपस्या के महोत्सव से देवगुरुधर्म की भक्ति होती है। दूसरे लोगों पर भी तपस्या का प्रभाव पड़ता है तथा वे भी तपाराधन के लिए तैयार होते हैं। अन्य दर्शनी लोगों पर भी इस का प्रभाव पड़ता है। तप की महिमा बढ़ती है तथा जिनशासन की प्रभावना होती है। इसमें प्रभुपूजा, अट्ठाई महोत्सव, रात्रि-जागरण, वरघोडा आदि धर्मक्रियाएं होती हैं। पूजा के उपयुक्त, साधुओं के उपयुक्त एवं ज्ञान के उपकरण रखे जाते हैं। साधर्मिक भक्ति के लिए श्रावकोपयोगी चीजें रख कर वे महोत्सव के बाद वितरित की जाती हैं। उद्यापन करने वाला व्यक्ति इसमें यथाशक्ति लाभ ले सकता है। कोई एक वस्तु भी दे सकता है, तो कोई लाखों रुपयों का भी सद्व्यय कर सकता है।

आपके सदुपदेश से तो छोटी-मोटी तपस्याएं कितनी हुईं इनकी गिनती नहीं। कुछ प्रमुख तपस्याओं के उद्यापन निम्न-लिखित हैं —

फलोदी निवासी श्री नेमीचन्द जी दुगड़ की धर्मपत्नी

कोलाबाई ने आपके उपदेश से मासक्षमण की तपस्या कर ज्ञान-पंचमी का उद्यापन बड़े समारोहपूर्वक किया। आगे चल कर उन्होंने आपके पास दीक्षा अंगीकार की और आपका नाम हेमश्रीजी है।

तिवरी के जुगराजजी ओस्तवाल की धर्मपत्नी जेठीबाई ने आपके सदुपदेश से मासक्षमण की तपस्या की तथा ज्ञानपंचमी का उद्यापन कर विपुल द्रव्य धर्मकार्य में खर्च किया।

बीकानेर निवासी सूरजमलजी की धर्मपत्नी चम्पाबाई ने नवपदजी का उद्यापन आपकी अध्यक्षता में कर लक्ष्मी का सद्व्यय किया।

इनके अलावा आपकी साध्वी शिष्याएँ हमेशा कठिन तपस्या करती रहती हैं। कई श्रावक श्राविकाओं ने भी विभिन्न तपस्याएँ आपकी प्रेरणा से की हैं।

जिस तरह इन विभिन्न कार्यों के लिए आप उपदेश देती थीं, उसी तरह गरीब लोगों को अन्नदान कराने की भी आप प्रेरणा देती थीं। संवत २००० में आप पालिताना चातुर्मास में थीं। वहाँ पर आपके सदुपदेश से हर रोज दोपहर को गरीबों को दाल रोटी दी जाती थी। उन दिनों वहां पर अकाल पड़ा था और गरीब जनता को भूखा रहना पड़ता था। इस अन्नदान के कारण उन सैकड़ों गरीबों को अन्न मिलता। पालिताना नरेश

छोटी सादड़ी प्रवर्तिनी पद के समारोह का दृश्य (१)

ने जब यह कार्य देखा तब इसमें योगदान देने वाले भक्तजनों की आपने भूरि भूरि प्रशंसा की। आपने कहा—"यह पुण्य कार्य कर आप अनन्त गुणा पुण्योपार्जन कर रहे हैं, क्योंकि भूखे को रोटी देने के समान कोई पुण्य कार्य नहीं है।

ऊपर निर्दिष्ट विशिष्ट घटनाओं के अलावा आपश्री ने जीवन में अन्य कई छोटे बड़े समाज सेवा के कार्य किये हैं। इस पुस्तक में उन सभी का जिक्र करना असम्भव है। उसके लिए तो विशाल ग्रंथराज की आवश्यकता होगी। जिसने अपने जीवन का उद्देश्य ही आत्म-कल्याण और समाज सेवा बनाया हो, उसके जीवन में तो कदम कदम पर परोपकार के कृत्य नजर आयेंगे।

धन्य है वह महान साध्वी जिन्होंने समाज पर इतना महान उपकार किया।

प्रवर्तिनी पद

परिवार, समाज और राष्ट्र आदि में एक मुख्य अधिकारी नेता की आवश्यकता हमेशा रहती है। नेता के बिना संस्था, संघ या परिवार का काम चलना मुश्किल है। नेता नहीं तो कारोबार चलावे कौन? हर कोई अपनी मनमानी नहीं कर सकते।

उससे संस्था, संघ टूट जायगा। जब तक कोई मार्गदर्शक नहीं, तब तक अन्य जनता किस रास्ते से जावें या हर कोई अपने अपने अलग अलग रास्ते बनावें ? ऐसा रहा तो सब निरंकुश बन जायेंगे। उनके भावी जीवन का मार्गदर्शन कोई नहीं कर सकेगा।

जैन साधु तथा साध्वी संस्था के जटिल नियम तथा कठोर जीवन को देखते हुए यह स्पष्ट है कि यहां नेता के बिना काम नहीं चलेगा। जिस तरह साधुओं में 'आचार्य' उस साधु समूह के नेता होते हैं, उसी तरह साध्वियों में 'प्रवर्तिनी' उस साध्वी समूह की नेत्री मानी जाती है। प्रवर्तिनी की योग्यता, सम्मान सभी एक आचार्य की तरह होता है।

प्रवर्तिनी को खुद संयम जीवन पर अग्रसर होते हुए अपने सभी समुदाय का ध्यान रखना पड़ता है। साध्वियों के सभी चातुर्मास निश्चित कराना, उनकी विविध प्रवृत्तियों की जानकारी रखना, उन्हें मार्गदर्शन करना, समाज कल्याण के कार्य चलाना आदि कई जिम्मेदारियाँ प्रवर्तिनी को संभालनी पड़ती हैं। यह कोई केवल शोभा का पद नहीं है। समाज कल्याण तथा धर्म प्रचार की मुख्य जिम्मेदारी उन पर आ पड़ती है।

अर्थात इस पद के लिए सुयोग्य व्यक्ति का चुनाव होने पर ही कार्य अच्छा होगा। जो साध्वी ज्ञान सम्पन्न, क्रिया संपन्न, गुण सम्पन्न, क्षमा की सागर तथा सतत स्वाध्याय में रत हो वही इस पद की अधिकारिणी हो सकती है। जिसने जिनशासन की

अपूर्व सेवा कर उसकी कीर्ति बढ़ाई हो, वही इस पद को पा सकती है। साधु जीवन में कभी कभी कठिन प्रसंगों का सामना करना पड़ता है। कहीं धूप है तो कहीं छाया है। जो इस धूप-छाया से विचलित न हो, प्रशंसा से न फूले, अपमान से दुःखी न हो, अच्छा आहार मिलने पर जो प्रसन्न न होवे तथा निराहार रहना पड़े तो दुःख न माने, किसी समय कहीं से कडुवे-मीठे, भले-बुरे तथा मान-अपमान की लहरें आ टकरावें तो डरे नहीं किन्तु गम्भीरता, धीरज तथा सहनशीलता के साथ उन्हें झेल सके और पचा सके वही इस पद को ठीक तरह संभाल सकती है। प्रवर्तिनी का वर्णन करते हुए धर्म शास्त्रों में लिखा है।

"गीतार्था कुलजाऽभ्यस्ता सत्क्रिया परिणामीकी।
गंभीरोभयतो- वृद्धा, स्मृताऽऽर्यापि प्रवर्तिनी॥"

जो उत्सर्ग एवं अपवाद मार्ग की जानकर हो, जिसका अच्छे कुल में जन्म हुआ हो, जिनका अध्ययन विशाल हो, जो सद्नुष्ठान में सतत प्रवृत्तिवान हो, जिनका दीक्षा पर्याय काफी लंबा हो, जिन्हें गुरु परंपरा का अनुभव हो, तथा जो गंभीर हो वही प्रवर्तिनी पद की अधिकारिणी हो सकती है।

प्रवर्तिनी को माता की तरह सभी साध्वियों की देख भाल करनी पड़ती है, गुरु होने के नाते मार्ग दर्शन करना पड़ता है, श्रावक श्राविकाओं को धर्म कार्य में प्रेरित कर समाजोद्धार का ध्यान रखना पड़ता है। यहाँ कोई लेन देन की प्रीत नहीं है।

'सवी जीव करू शासनरसी'

की भावना लेकर जो अपने जीवन पथ पर अग्रसर है वही इस पद को सुशोभित कर सकती है। प्रवर्तिनी के मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं:—

सारणा—शिष्य समुदाय की सार संभाल करें।

वाचना—वाचना दें, अध्ययन करावें।

चोयणा—ज्ञान दर्शन आराधनादि में प्रेरणा करें।

पडिचोयणा—आराधनादि पठन पाठन में बार बार उत्तेजन दें।

इस प्रकार प्रवर्तिनी को धर्म सम्बन्धी कई कार्यों की देख भाल करनी पड़ती है।

किसी पद के लिए सुयोग्य व्यक्ति मिलने से उस पद का सम्मान तथा महत्त्व बढ़ता है। पं० जवाहर लाल नेहरू जैसे महान नेता द्वारा प्रधान मंत्री पद भूषित करने से इस पद का इतना महत्त्व बढ़ गया कि इस देश का भावी प्रधान मंत्री कौन, यह एक समस्या बन गई है। उसी तरह प्रवर्तिनी पद पर कोई सुयोग्य साध्वी अधिष्ठित हो तो उस पद की भी शान बढ़ती है।

संवत २०१० में तत्त्ववेत्ती, प्रवर्तिनी प्रेमश्रीजी म. सा का अचानक स्वर्गवास होने के कारण यह पद खाली था। समुदाय

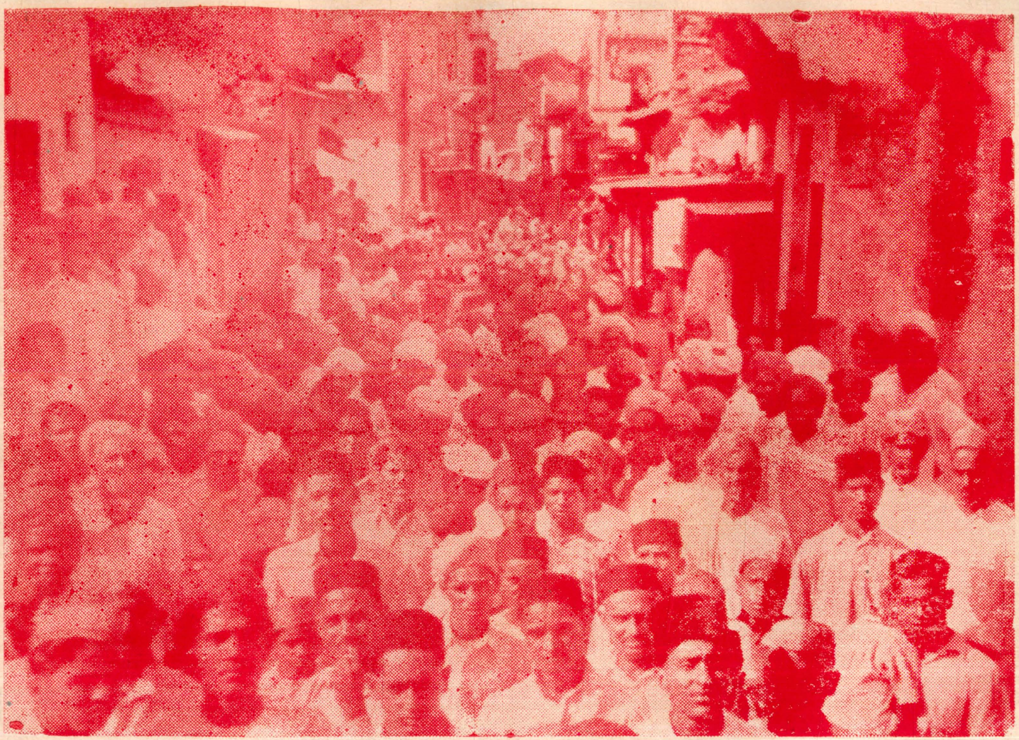

छोटो सादड़ी प्रवर्तिनी पद के समारोह का दृश्य (२)

में आपही ज्येष्ठ थीं, साथ ही साथ अत्यन्त सुयोग्य भी थीं। आपका शास्त्रों का प्रगाढ़ अध्ययन, प्रभावी व्याख्यान शैली, जिन शासन सेवा के अनेक कार्य, इनका सब पर प्रभाव पड़ा था। आपके उपदेश से कई साध्वियाँ दीक्षित होकर आत्मोद्धार तथा समाज कल्याण के कार्य में रत थीं। उस समय आप छोटी सादड़ी में विराजमान थीं। वहाँ के श्रीसंघ को गणाधीश वीर पुत्र श्री जिन आनंद सागर सूरीश्वर जी का आज्ञापत्र आया कि शरद पूर्णिमा (आश्विन शुक्ल १५) के शुभदिन आपको प्रवर्तिनी पद पर अधिष्ठित कर चादर ओढ़ाई जाय।

जब श्रीसंघ ने यह पत्र पढ़ा तो सभी हर्ष विभोर हुए। श्रीसंघ तो इस अवसर पर बड़ा महोत्सव करना चाहता था किन्तु समय थोड़ा ही था, फिर भी उत्साह की लहर सब तरफ फैल गयी। उस दिन वरघोड़ा, पूजा, रात्रि जागरण, आर्यामंडल तथा संघ में आयंबिल की तपस्या होकर विधिपूर्वक आपको इस पद पर अधिष्ठित किया गया। यह सब विधि यहाँ के विद्वान श्रावक सेठ चन्दनमलजी नागोरीजी ने करवायी।

ज्ञानश्रीजी म. सा.—

पू. वल्लभश्रीजी को प्रवर्तिनी पद का यह जो सम्मान मिला उसके योग्य उन्हें बनाने में पू. ज्ञानश्रीजी म. सा. का बड़ा हाथ था। यह आप ही की प्रेरणा तथा शिक्षा का परिणाम था कि पू. वल्लभश्रीजी के हाथों इतने महान कार्य हुए। जब तक

ज्ञानश्रीजी जीवित थीं तब तक लगभग सभी चातुर्मास आप दोनों ने साथ ही किए। ३४ चातुर्मासों में से केवल २ ही चातुर्मास अलग हुए थे। ज्ञानश्रीजी ने वल्लभश्रीजी की उज्ज्वल आत्मा को शुरू से ही पहचान लिया था और उसका विकास कराने में आप जुटी रहीं। जीवन में खुद का नाम कैसे हो इसके बजाय वल्लभश्रीजी का कीर्तिसौरभ कैसे फैले इसका ही उन्हें ध्यान रहता था।

जब आपने दीक्षा ली तब आपकी आयु तैंतीस वर्ष की थी। इस अवस्था में बीच के कई वर्षों के व्यवधान के बाद विद्याध्ययन करना असंभव तो नहीं लेकिन कठिन जरूर है। फिर भी आपने थोड़े ही समय में व्याकरण, न्याय, काव्य, कोष, छंद का ज्ञान हासिल किया। यहाँ तक कि ५६ वर्ष की अवस्था में जब आपके मन में श्रीमद् देवचन्द्रजी म. सा. के ग्रंथों के अध्ययन की इच्छा हुई तब बिना गुजराती सीखे केवल मनः प्रेरणा से ही आपने उनका अध्ययन किया।

आपने ३५ वर्षों के चारित्र जीवन में बहुत लंबा विहार किया। राजस्थान, मध्यभारत तथा गुजरात के कई शहरों में तथा गाँवों में पर्यटन कर, हजारों की संख्या की परिषदों में धर्मोपदेश देकर धर्म का प्रचार किया। अनेक पवित्र तीर्थस्थानों के दर्शन किए।

पू. वल्लभश्रीजी द्वारा जो भी महान कार्य आपके जीवन समय में हुए उन सभी में आपश्री की प्रेरणा तथा सहयोग था।

आपका जीवन अत्यंत पवित्र था। रात के वक्त सब के सो जाने पर आप ध्यान लगा कर बैठतीं और आत्म चिंतन करतीं। इतने महान कार्य करने पर भी आपको कभी अहंभाव छुआ तक नहीं। हमेशा आत्मनिंदा तथा परगुणप्रशंसा करतीं। आपको अनुभव ज्ञान ऐसा था कि आप फरमातीं उसी तरह वह बात भविष्य में घटती थीं। सच्चे भविष्यवेत्ता की तरह आपके वचन सत्य सिद्ध होते थे।

वृद्धावस्था के कारण आपको अंतिम तीन चातुर्मास फलोदी में करने पड़े। इन अंतिम तीन वर्षो में आपने पाँचों विगयों का त्याग किया था। आपका मरण समाधिमरण था। मृत्यु के कुछ ही दिन पहले आपने सपने में एक ऐसा अलौकिक भवन देखा जो स्वर्गलोक के बिना अन्य कहीं नहीं हो सकता। उसमें आपने प्रवेश किया किन्तु बाद में ढूंढ़ने पर भी आपको बाहर आने का रास्ता न मिला और आप अन्दर ही रह गयीं, मानो यह आपके आगामी जीवन की पूर्व सूचना ही थी। यह सपना आपने सभी को बताया भी था।

संवत १९९६ में वैशाख अमावस को आपने आदिश्वर भगवान के मन्दिर में जो वीशस्थानक पूजा पढ़ी गयी, वह सुनी। उसके विनयपद को सुनकर आपको अत्यन्त आनन्द हुआ। उसी शाम को आपके शरीर को लकवा हो गया और वैशाख सुदी ११ को सुबह ५ बजे इस देह का त्याग कर आप स्वर्गधाम

पधारीं । आपश्री के स्वर्गारोहण के वक्त एकदम प्रकाश हुआ, वह वहां पर के उपस्थित लोगों ने तो देखा ही, लेकिन ब्यावर में आपकी गुरु बहिन प्रेमश्री जी म० सा० ने भी देखा और एकदम आपके मुँह से शब्द निकले कि आज मेरा 'रत्न' चला गया ।

आपके अन्तिम दिनों में चरित-नायिका ने आपकी तन मन पूर्वक सेवा की तथा सतत सूत्र श्रवण कराया । आपके स्वर्गवास से पू० वल्लभश्रीजी ने महसूस किया कि आज मेरा छत्र चला गया । ऐसे वत्सल मार्ग दर्शक का अभाव किसे नहीं खलेगा, किन्तु आपने मन को मजबूत कर ठीक तरह शिष्य समुदाय की बागडोर संभाली और इस तरह यश फैलाया कि आपको प्रवर्तिनी पद से सुशोभित किया गया ।

महाराष्ट्र में पदार्पण

संवत २०११ में आपश्री का महाराष्ट्र में शुभागमन हुआ । अपने साध्वी जीवन के ५० वर्ष का कालावधि आपने मुख्यतः राजस्थान, मध्य-भारत तथा गुजरात में बिताया था । महाराष्ट्र

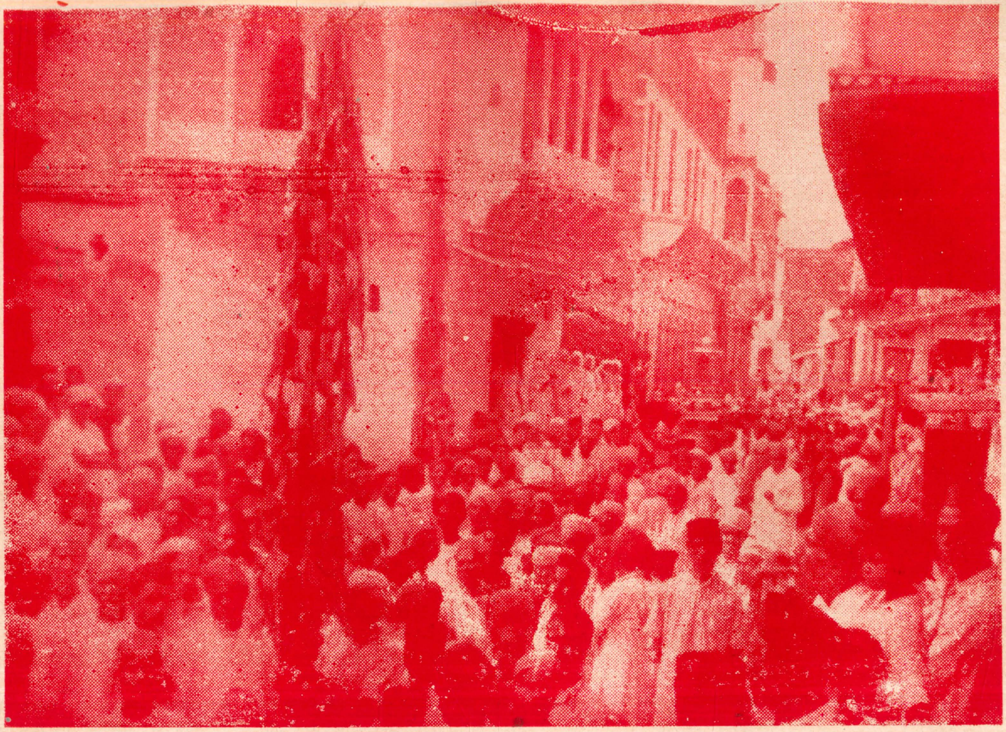

छोटी सादड़ी प्रवर्तिनी पद के समारोह का दृश्य (३)

की जनता आपश्री के सहवास से अभी तक वंचित थी। खानदेश तथा बम्बई के श्रावक आपके दर्शन के लिए कभी से उत्सुक थे। अमलनेर के श्री सेठ खेतमलजी कोठारी आपकी अध्यक्षता में मासक्षमण की तपस्या करना चाहते थे तथा तीर्थयात्रा का संघ निकालना चाहते थे। सबकी भावना देख कर संवत २०१० का चातुर्मास छोटी सादड़ी कर आप महाराष्ट्र में पधारीं। सबकी चिरकांक्षित मनीषा आपके आगमन से पूर्ण हुई।

महाराष्ट्र में आपका ७ वर्ष निवास रहा। इनमें से संवत २०११ का चातुर्मास शहादा तथा संवत २०१२ का चातुर्मास धुलिया में हुआ। शेष सभी चातुर्मास अमलनेर में हुए। धुलिया से जब आप अमलनेर पधारीं तब वह आपकी जिन्दगी का अन्तिम विहार था। आपकी तबियत पिछले कुछ दिनों से खराब थी। ब्लडप्रेशर तथा डायबिटीस का विकार था। वह दिन-ब-दिन बढ़ता ही गया। इस वास्ते अभी और विहार करने की भावना होते हुए भी आप कहीं जा न सकीं। इतने लम्बे दीक्षा जीवन में इसके पहले सिर्फ एक वार आप एक ही जगह एकसाथ दो वर्ष विराजी थीं। बड़ोदा में शिष्या की आँख का ऑपरेशन कराने के लिए आपको उस वक्त दूसरा भी चातुर्मास वहाँ करना पड़ा। वरना आप तो सदैव दूर दूर विचर कर अधिकाधिक शासन सेवा करना चाहती थीं, किन्तु शरीर साथ नहीं देता था, इसका आपको अत्यधिक दुःख था। आप हमेशा फरमातीं—"मेरी भावना अभी कितने ही शासनसेवाकार्य करने की है,

किन्तु यह शरीर मेरा बैरी हुआ।" ये शब्द उनकी हार्दिक वेदना प्रकट करते थे।

आपका शरीर दिनोंदिन क्षीण होता जा रहा था, शरीर से चला नहीं जाता था किन्तु फिर भी आपकी विहार करने की भावना थी। उधर बड़ोदा का संघ अपने शहर में स्थिरावास कराना चाहता था, इधर अमलनेर का संघ आपको कहीं और जाने नहीं दे रहा था। फिर भी आजमाइश के लिए अमलनेर में २ वर्ष बिताने के बाद आपने विहार किया किन्तु आधे मील तक जाने से ही आपको अत्यधिक तकलीफ हुई और आप वापिस लौटीं।

अमलनेर में स्थिरावास—

जब आपके लिए कहीं विहार करना बिल्कुल असम्भव हो गया तब आचार्यदेव से स्थिरावास की इजाजत मांगी गयी। आप अमलनेर में ही ठहरेंगी यह वार्ता सुन सभी जन अत्यन्त हर्षित हुए। पुण्यशाली महात्मा का अपने यहां विराजना भाग्य की बात है। गुणवानों का, पुण्य पुरुषों का सहवास कितना लाभकारी होता है, इसका वर्णन करते हुए शास्त्रकार कहते हैं:—

'हरति कुमतिं भिन्ते मोहं करोति विवेकितां,
वितरति रतिं सूते नीतिं तनोति गुणावलिम्।
प्रथयति यशो धत्ते धर्मं व्यपोहाति दुर्गतिं,
जनयति नृणां किं नाभिष्टं गुणोत्तम संगमः॥'

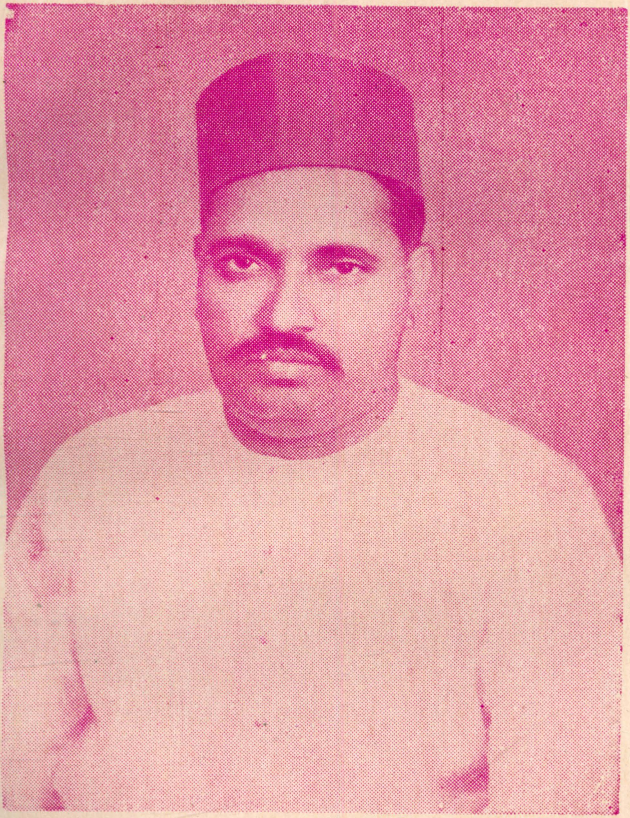

परमभक्त श्रीमान खेतमलजी कोठारी साहब

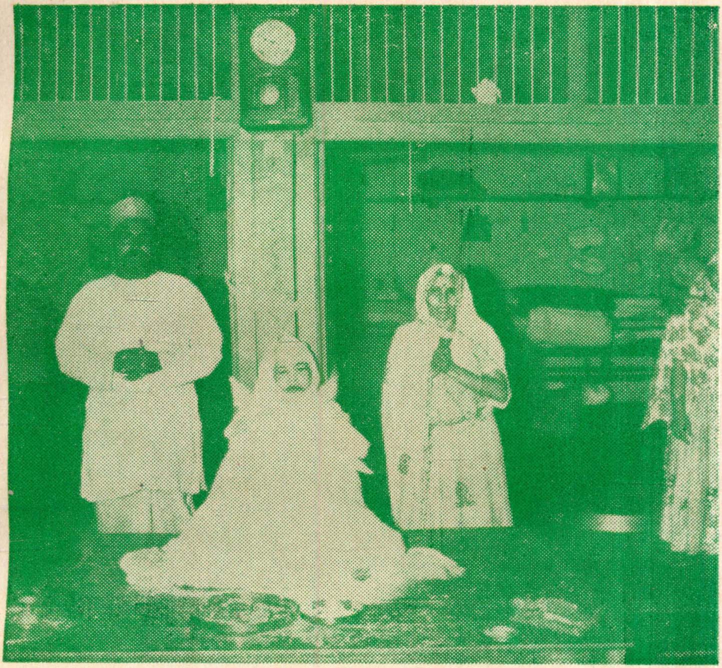

परम भक्त शेठ खेतमलजी कोठारी अपनी धर्म पत्नी के साथ

गुणी जनों के संग से कितने कितने इष्ट कार्य होते हैं ? उनके समागम से कुमति दूर होती है, अज्ञान नष्ट होता है, तत्त्व और अतत्त्व का ज्ञान होता है, सन्तोष प्राप्ति होती है, नीति उत्पन्न होती है, गुण समूह की वृद्धि होती है, यश फैलता है, धर्मधारणा होकर दुर्गति का नाश होता है।

इतना लाभकारी संग कौन नहीं चाहेगा ? इसलिए जब आपका स्थिरावास अमलनेर में निश्चित हुआ तो श्रीसंघ में हर्ष की लहर फैल गयी। यहाँ पर श्री. खेतमलजी कोठारी ने अनेक धार्मिक कार्य किये तथा आपकी भी खूब सेवा की।

श्री खेतमलजी कोठारी—

संवत २०१२ में आप पू० वल्लभश्रीजी म० सा० की निश्रा में मासक्षमण की तपस्या करना चाहते थे किन्तु आपश्री धुलिया विराजमान थीं। आपश्री की आँखों में मोतीबिन्दु बढ़ गया था, जिसका ऑपरेशन यहाँ पर डॉ० हरडे ने किया। उक्त कारण से खेतमलजी की प्रार्थना पर आपश्री अमलनेर नहीं पधार सकीं, किन्तु प्रवीणश्रीजी आदि चार ठाणे भेज दिये। उस चातुर्मास में खेतमलजी, उनकी धर्मपत्नी जेठीबाई, बड़े भाई सुखलालजी तथा बहन लुणीबाई चारों ने मासक्षमण की तपस्या की। अमलनेर में इस वर्ष तपस्या की धूम मची थी। श्री कंवरलालजी पारख ने १६ उपवास की तपस्या कर गांव-नवकारसी की। अन्य भी १६, ८ पंचरंगी आदि कई तपस्याएँ

हुईं। इस समय यहाँ पर दो अट्ठाई महोत्सव हुए, मन्दिर में हर रात्रि को भावना गायी जाती थी, भव्य वरघोड़ा निकाला गया तथा खूब अच्छी तरह से शासन प्रभावना हुई।

सम्वत २०१६ में खेतमलजी ने अमलनेर की पंचतीर्थी शिरसाला, बेटावद, पारोला, बहादुरपुर और कलमसरा का संघ निकाला। पू. वल्लभश्रीजी का शरीर अस्वस्थ होने से वे खुद इस संघ में शामिल न हो सकीं, किन्तु अपने स्थान पर जिनश्रीजी आदि साध्वियों को भेजा था। छरी का पालन करते हुए खूब धूमधाम से यह यात्रा सम्पन्न हुई।

अमलनेर की जिनदत्तसूरि दादाबाड़ी की जो दिन दूनी, रात चौगुनी तरक्की हो रही है, उसमें प्र. पूज्यश्रीजी वल्लभश्रीजी की प्रेरणा से खेतमलजी ने बहुत कार्य किया है। श्री रतनचन्दजी शिगवी भी तन-मन से इसकी देखभाल करते हैं।

प्र. पू. वल्लभश्री म. सा. के अमलनेर स्थिरावास के कारण यहां की धर्म प्रवृत्तियों में एकदम बाढ़-सी आई। मध्यप्रदेश, राजस्थान, गुजरात, वम्बई, मद्रास आदि दूर दूर के स्थानों से भक्तगण दर्शनार्थ आने लगे। शुरू शुरू में तो यहां के श्रावकों के घर पर उनके भोजनादि की व्यवस्था होती थी, किन्तु बाद में सब को सुविधा रहे, इस दृष्टि से बारह मास यहां चौका चालू किया। इस चौके के व्यय को वहन करने में स्थानीय श्रावकों की तरह बाहर के श्रावकों में भी होड़ लगी। सम्वत २०१४ में

परम पूज्या सदगत प्रवर्तिनीजी श्री वल्लभ श्रीजी साहिबा

शिष्या परिवार सहित

पूज्यश्री ने यहां स्थिरावास किया और सम्वत २०१५ के वसन्त-पंचमी के दिन यहां पर स्वामि वात्सल्य चौके की शुरुआत हुई। सम्वत २०१६ में चातुर्माससह छह महीने का लाभ नांदगांव निवासी भिवराजजी कानमलजी के सुपुत्र खेतमलजी पारख ने लिया। सम्वत २०१८ के चातुर्मास में बालोद निवासी चतुर्भुजजी भंवरीलालजी (जिनश्रीजी के संसारी भाई) ने स्वामि वात्सल्य का पूरे चार महीने लाभ लिया। अमलनेर का संघ तो मनाई कर रहा था, किन्तु आपने कहा कि पूज्यश्री का हमारे यहां पदार्पण हमारे भाग्य में नहीं था। कम से कम यह लाभ तो लेने दीजिए। आपने केवल धन का व्यय किया, सो नहीं। आप चार महीने सभी परिवार के साथ साधर्मिक त्रविस निमित्त पूज्यश्री की सेवा में रहे। धन से लाभ लेने वाले तो कई मिलेंगे, किन्तु एक व्यापारी अपना कार्य छोड़ कर चार महीने गुरु सेवा में रहे, यह विशेष है। आप तो हमेशा कहते कि आगामी चातुर्मास भी मैं यहीं रहूँगा, किन्तु उस समय क्या मालूम था कि अल्प समय में ही निष्ठुर काल हमारे महारत्न को उठा ले जायेगा।

पूज्यश्री जहां विराजतीं, वहां पर खर्च का बोझा होने के बदले वृद्धि ही होती। आपश्री के अमलनेर निवास में दादावाड़ी का स्वरूप बदलता ही गया। इस दादावाड़ी का बीज बोया था खरतरगच्छीय उपाध्यायजी सुखसागरजी म. सा. ने और उसे वृक्ष रूप बनाया पूज्यश्री वल्लभश्रीजी म. सा. ने। सम्वत २०१७ में यहां पर धर्म कार्य के उपयुक्त तथा बाहर के मेहमानों के निवास

के लिए योग्य स्थान बनाने की श्रीसंघ की इच्छा हुई। यह विचार जब आपके सम्मुख रखा गया, तब आपने तुरन्त उसके लिए कइयों को प्रेरणा दी। आप से प्रेरणा लेकर खेतिया निवासी सुगालचन्दजी रावलमलजी बाफणा ने एक कमरे के लिए १०००) रु० तथा अमलनेर निवासी धनराजजी मुणोत ने अपने स्वर्गीय पुत्र लक्ष्मीचन्दजी के स्मरणार्थ १०००) रु० भेंट किये। रायपुर निवासी जवरीलालजी नाहटा की मातुश्री ने ५००) रु० दिए। खेतमलजी के व्याही लोहावट निवासी विजयलालजी पुखराजजी पारख ने अपने सुपुत्र शान्तिलालजी के शुभ विवाह के उपलक्ष में १०००) रु० दिए। इसके अलावा अन्य भक्तों का दान तथा स्थानीय संघ की लगन से तुरन्त तीन कमरे तथा पूरे जगह को कम्पाउन्ड बनाया गया। श्री सुखलालजी खेतमलजी कोठारी ने पानी की टाकी बनवायी।

इसके अलावा श्री वासू पूज्य भगवान के मन्दिर में धमतरी निवासी श्री जमनालालजी दुगड़ ने, हर रोज स्नात्र पूजा के लिए उपयुक्त बने, इसलिए श्री शान्तिनाथ भगवान की प्रतिमा, गौतम स्वामी की मूर्ति, श्री सिद्धचक्रजी का गट्टाजी एवं अष्टमांगलिक सभी चांदी के बनवा कर भेंट किये। अन्य भक्तों ने चांदी के दीपक (फानस), कलश एवं अन्य उपयुक्त साहित्य भेंट किया। स्थानीय बहनों ने ज्ञान भण्डार के लिए चार आलमारियां बनवायीं। इसी तरह दादावाड़ी की वृद्धि होती रही।

शरीर के अस्वास्थ्य के कारण यद्यपि आपको यहीं स्थिरावास में रहना पड़ा, फिर भी आप अपनी शिष्याओं को चातुर्मासार्थ जगह जगह भेजती थीं। आप हमेशा कहतीं कि हमने संसार त्याग कर जब इस पवित्र जीवन को अपनाया है, तब इस पवित्र जीवन का सन्देश चारों ओर फैलाना हमारा कर्तव्य है। यदि हम चारों ओर विहार न करेंगे तो जिनेश्वर भगवान का सन्देश जनता में कैसे फैलेगा ? यही बात ध्यान में रख कर इस काल में आपने शिष्याओं को चातुर्मास के लिए विभिन्न स्थानों पर भेजा।

सम्वत २०१२ में जब आप धुलिया थीं, तब गुप्तिश्रीजी आदि ३ ठाणा बड़ौदे में तथा प्रवीणश्रीजी आदि ४ ठाणा अमलनेर में चातुर्मास के लिए थीं। सम्वत २०१३ में आपश्री अमलनेर विराजीं तब हेमश्रीजी आदि चार को बम्बई तथा प्रवीण श्रीजी आदि तीन साध्वियों को खेतिया भेजा। सम्वत २०१४ में प्रवीणश्रीजी आदि को वेटावद और समताश्रीजी आदि को बंबई भेजा। गुप्तिश्रीजी आदि ३ साध्वियों को शहादा भेजा।

सम्वत २०१५ में प्रवीणश्रीजी आदि ५ साध्वियां बम्बई तथा समताश्रीजी, कुसुमश्रीजी आदि ४ साध्वियों को बडोदा भेजा। सम्वत २०१६ में समताश्रीजी आदि ४ साध्वियों को अहमदाबाद भेजा। सम्वत २०१७ में गुप्तिश्रीजी, हेमश्रीजी आदि ६ साध्वियां धमतरी और समताश्रीजी आदि ४ ने पालिताना में चातुर्मास किया। सम्वत २०१८ में यद्यपि आपका

स्वास्थ्य ठीक नहीं था, फिर भी बम्बई संघ के आग्रह से समताश्री जी, कुसुमश्रीजी आदि को बम्बई भेजा। इस तरह आपकी शिष्याएं चारों ओर घूम जिनशासन प्रभावना करती थीं।

सम्वत २०१६ में सिद्धगिरि पालिताना में श्री जिनदत्तसूरी सेवा संघ का द्वितीय अधिवेशन होने वाला था। उसके पहले पूज्य उपाध्याय कवीन्द्र सागरजी म. सा. दादासाहब की प्रतिष्ठा के लिए उहाणू बन्दर थे, तब आपश्री ने पत्र भेज कर प्रार्थना की "शरीर स्वास्थ्य के अभाव से आपका दर्शन मेरे लिए दुर्लभ सा बन गया है। यदि आप कृपा करके इस तरफ पधारें तो मेरी यह भावना सफल बनेगी।" आपश्री के प्रति गुरुदेव का अनुग्रह विशेष था। आपको बड़ी बहिन के समान मानते थे। अतः आप सूरत का रास्ता छोड़ खानदेश में पधारे। आपके आगमन से अमलनेर श्री संघ में हर्ष की लहर फैली। पन्द्रह दिन व्याख्यानादि की धूम रही। इसी समय साध्वी निपुणाश्रीजी तथा राजेश श्रीजी की बड़ी दीक्षा आपके शुभ हाथों से हुई। पूज्यश्री वल्लभश्रीजी को आपके दर्शन से अत्यन्त आनन्द हुआ। उस समय आपका स्वास्थ्य बहुत ही बिगड़ गया था, फिर भी आप व्याख्यान स्वाध्याय आदि में भाग लेती थीं। पन्द्रह दिन के बाद उपाध्याय जी ने उग्र विचार कर पालिताना की ओर प्रस्थान किया।

इस तरह आपके जीवन के अन्तिम छः वर्ष अमलनेर में व्यतीत हुए। अमलनेर का यह महान भाग्य कि एक महात्मा का यहां छः वर्ष निवास रहा।

• • •

महाप्रस्थान

यह शरीर तो जड़ है। जन्म, जरा, मरण का चक्र इसे लगा हुआ है। सामान्य व्यक्ति बीमारी में धीरज खो देता है, आर्तध्यान करता है, दूसरों को तकलीफ देता है किन्तु धन्य वे महान आत्माएँ कि जिन्हें शरीर पर किंचित भी मोह नहीं। महात्मा के महात्म्य की प्रयिती केवल सुनने या पढ़ने से नहीं होती। वह तो प्रत्यक्ष अनुभव से, सहवास से ही होती है।

छह वर्ष तक लगातार पू० वल्लभश्री बीमार रहीं। यहाँ के डॉ. सेन तथा लेडी डॉक्टर ने आपकी काफी सेवा की। स्थानीय संघ विशेषतः खेतमलजी कोठारी ने आपकी खूब सेवा की। सभी उपाय किये किन्तु काल के आगे किसका वश है? यदि होता तो दुनिया का स्वरूप कुछ अलग ही होता... खैर।

संवत २०१२ में आपकी आँख का ऑपरेशन धुलिया में हुआ। उसके बाद आपकी आँखें बिल्कुल ठीक हुईं। यहाँ तक कि आखिर तक आप छोटे से छोटे अक्षर भी पढ़ सकती थीं। इसके बाद संवत २०१५ में आपके पीठ के भाग में एक गांठ हुई। गांठ की वजह से बहुत दर्द होने लगा, तब उसका ऑपरेशन किया गया। ऑपरेशन के बाद काफी आराम हुआ। इस समय

डॉ. सेन तथा लेडी डॉक्टर फुजरहुसेन ने पूज्यश्री की जो सेवा की उसके लिए बड़ोदा निवासी त्रिभुवनभाई एवं रतिभाई एवं अमलनेर श्रीसंघ ने दोनों डॉक्टरों को मान-पत्र देकर आपके कार्य की प्रशंसा की।

श्रावण मास में जिस तरह धूप छाया का खेल चलता है, कभी बारिश की बूँदों की रिमझिम तो कभी कड़ी धूप। उसी तरह आपका स्वास्थ्य कभी ठीक होता तो फिर तबियत बिगड़ जाती। मानों स्वर्गलोक में आप जैसे पुण्यात्मा की जरूरत पड़ गयी सो डॉक्टरों के प्रयत्नों के बावजूद भी आपका स्वास्थ्य दिन-ब-दिन गिरता ही गया।

इतनी आपको शारीरिक तकलीफ हुई किन्तु कभी आप चिढ़ी नहीं, न कभी क्रोध किया, न किसी को किसी तरह की तकलीफ दी। बाहर से आने जाने वालों का ताँता लगा रहता, बच्चे ऊधम मचाते किन्तु, 'चुप रहो, बातें न करो' ऐसा भी आपने कभी कहा नहीं। मुख पर सदा प्रसन्नता रहती। चेहरे को देख कर देखने वाला यह मुश्किल से समझ सके कि आपका स्वास्थ्य ठीक नहीं। आपकी धैर्य शक्ति को देख कर डॉक्टर को भी अचरज होता। डॉक्टर कहते कि हमारी समझ में नहीं आ रहा है कि यह शरीर कैसे चल रहा है। इसका वास्तव कारण तो आपका ब्रह्मचर्य एवं योग बल ही है। सामान्य व्यक्ति तो इस अवस्था में १५ दिन भी टिक नहीं सकता। उस पर यह शान्ति देख कर तो सभी को आश्चर्य होता।

आपके लिए इलाज तो काफी हुए किन्तु व्याधियां भी आपका साथ नहीं छोड़ना चाहती थीं, मानो महान आत्मा का सहवास उन्हें अत्यन्त प्रिय हुआ हो। अन्त में आखरी तीन महीने इलाज बन्द कर दिया गया। आखरी एक वर्ष तक आप अनाज नहीं ले सकीं, फिर भी मुख पर प्रसन्नता थी। २०१८ सम्वत्सरी का प्रतिक्रमण आपने श्री संघ के साथ किया। बाद में स्वास्थ्य गिरता ही गया। मिगसर शु० १० की रात्रि में आप यकायक बेहोश हुईं, तेज बुखार आया। उपचार के बाद कुछ ठीक हुआ।

अन्तिम दिनों में इस अवस्था में भी आप हमेशा आत्म-चिन्तन में मग्न थीं। कभी पूछा गया कि तबियत कैसी है तो कहतीं—मैं तो बिलकुल ठीक हूँ। यह तो शरीर का स्वभाव ही है। कुछ ठीक लगता तो खुद साध्वियों को वाचन करवातीं।

सोऽहं का ध्यान तो निरन्तर चलता ही रहता। आपने इन दिनों में ६। लाख नवकार का जाप, १। लाख सिद्धचक्रजी का जाप, १। लाख अजपा जाप तथा १। लाख असिअउसाय का जाप किया। आत्म चिन्तन में आप सदा मग्न रहतीं।

अरिहन्त तारा बारणे आवुं बारंबार।
चित्त लागे चूकूं नहीं उतारो भवपार॥

यह आपकी सदा की पंक्ति थी। इसके साथ साथ :—

जे में जीव विराधिया, सेव्या पाप अढार।
भगवन्त तारी साक्षीए, बारम्बार धिक्कार॥

यह पंक्तियाँ तथा :—

नवपद ध्याइए, सदा सुख पाइए।
नवपदजी में गुण घणा, कहता नावे पार।
चिन्ता चूरे, वांछित पूरे, उतारे भवपार॥

यह पंक्तियाँ तथा :—

अरिहंत सिद्ध साहू, पारका न पाऊ।
ध्यान धरू' तेरा, कर्म काट मेरा॥

इस प्रकार की काव्य-पंक्तियाँ आप मन ही मन जपती रहती थीं। जब आपकी तबियत ज्यादा बिगड़ती तब बाकी बातचीत बिल्कुल बन्द हो जाती, यहां तक कि किसी का नाम पूछा तब भी नहीं बताती। किन्तु सामायिक, प्रतिक्रमण का आदेश जरूर देती। साध्वियों के स्वाध्याय में कोई भूल हुई तो तुरन्त बताती।

माघ वदी ११ के दिन आपने सभी आर्यामण्डल को अपने पास बुलाया। इस समय सभी शिष्याएं आपकी सेवा में मौजूद थीं। गुप्तिश्रीजी आदि दूर मध्यप्रदेश में होने से आपके पास पहुंच न सकीं थीं। साथ ही प्रधानश्रीजी आदि ३ ठाणा फलोदी में स्थानापन्न होने से नहीं आ सकी थीं। आपने सभी शिष्याओं के मस्तक पर से वात्सल्य भाव से हाथ फेर कर सभी को मधुर वचनों से अन्तिम शिक्षा दी। आपने कहा—

"तुमने जिस उद्देश्य से सांसारिक सुखों को त्याग कर इस महान जीवन को अपनाया है, उसको सफल बनाने का हमेशा प्रयत्न करना। ज्ञान, ध्यान और शास्त्र सेवा के द्वारा जीवन का खूब विकास करना। दो घण्टा मौन और स्वाध्याय अवश्य ही करना। जैसे अभी तक प्रेमभाव से रही हो, वैसे ही हमेशा रहना, और प्रेमभाव में उत्तरोत्तर वृद्धि करना। आज तक तुम मेरी आज्ञा का पालन करती आई हो, वैसे ही मेरे स्थान पर प्रधानश्रीजी एवं जिनश्रीजी को समझना। इनकी आज्ञा का पालन करना और पवित्र संयम जीवन के पालन में एकनिष्ठ रहना।"

इन वचनों को सुनते हुए सभी के नेत्र भर आये। आर्या-मण्डल ने कहा—"गुरुदेव, आप आज यह क्या फरमा रही हैं?" पूज्यश्री ने कहा—"जीवन का क्या भरोसा, आज मैं तुम्हें आखिरी शिक्षा और हार्दिक आशीर्वाद देती हूँ।" यह आपका आखिरी, लगातार भाषण था। इसके बाद आप कभी इतना बोल नहीं सकीं। दिन में मुश्किल से दो चार शब्द बोलतीं।

आपको जीवन के अन्त का भास पहले से ही हुआ था। वैसे तो स्वास्थ्य पिछले ४-६ वर्षों से ठीक नहीं था, किन्तु अबकी बार आपने स्वर्गवास का नजदीक आना देख लिया हो। साध्वी श्री रंजनाश्री दो वर्ष से वर्षी तप कर रही थीं। आपने पूज्यश्री से पूछा कि क्या आप मेरा पारणा करायेंगी तो आपने 'नहीं' कहा।

श्री परमानन्द बोरा की सुपुत्री मधु बहन आपके पास दीक्षा लेना चाहती थी। अर्ज करने पर आपने कहा कि दीक्षा वैशाख में होगी, फिर पूछा कि क्या आपके हाथों से होगी? तो आपने 'नहीं' कहा। वैशाख के पहले ही इस लोक को आप छोड़ने वाली थीं, यह आपने पहले से ही जान लिया था। फाल्गुन शु० ८ को खेतमलजी को कहीं बाहर जाना था। पूछने पर आपने उन्हें कहा, कि जाओ किन्तु ५ दिन में वापिस आ जाना। फाल्गुन शु॥ १३ को आपने उन्हें वापिस बुलाया था। जीवन के अन्तिम दिन का पता आपश्री को लग गया था, इसमें क्या शक?

फाल्गुण शु॥ १३ शाम को आपको एकदम बुखार चढ़ गया। कालरात्रि वैसे ही चिन्ता में बीती। सुबह आपने सभी शिष्याओं के मस्तक पर हाथ फेरा और सभी को प्यार से थपथपाया। सुबह आठ बजे आपको 'आप स्वभावमां हे अवधु सदा मगन रहना' यह भजन सुनाते थे। उसी समय [illegible] वंदनार्थ आये। तब पूछा कि म० सा० आत्मा कैसी है? आपश्री ने फरमाया 'अजर, अमर है।' इसके बाद उपरोक्त भजन की कुछ कड़ियां आपने दुहरायी। इसके बाद आपकी वाचा लगभग बन्द सी हो गयी।

इस समय सबके मुख पर चिन्ता छा रही थी। आराधना तथा नवकार मंत्र का स्मरण सतत चला था। शाम को ४ बजे पू० चन्द्रमुनिजी तथा पू० अमृतविजयजी पधारे। उन्होंने नवकार

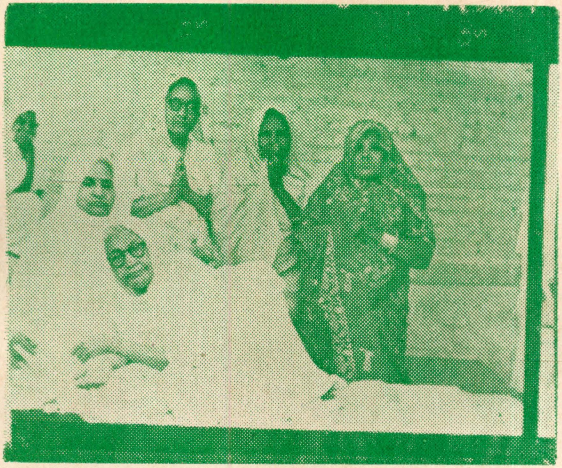

अस्वस्थता में जिन श्रीजी की गोद में लेटी हुई आपश्री

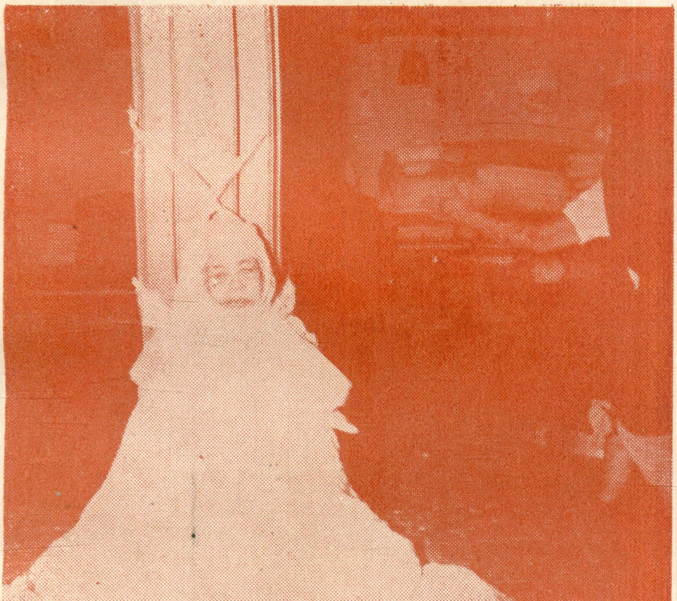

दादावाडी में विराजमान पार्थिव शरीर

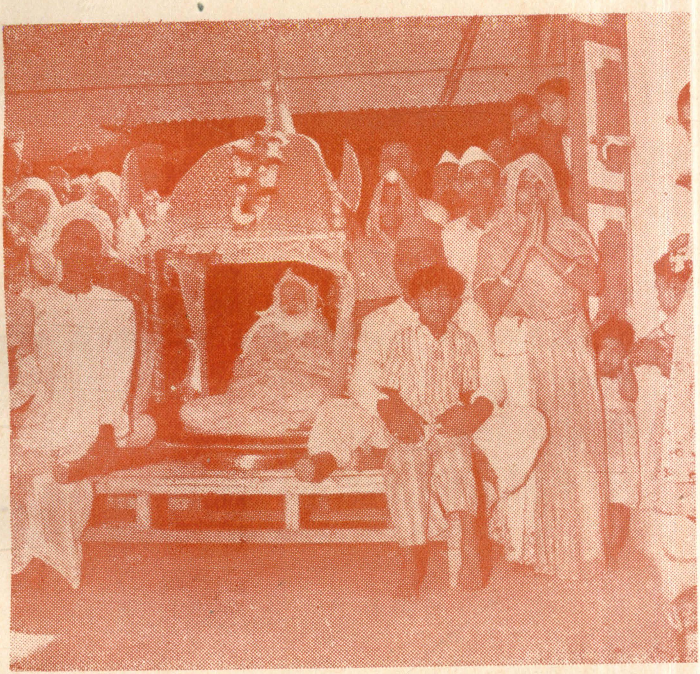

श्री दादावाड़ी में विमान में विराजमान

मंत्र सुनाया। आपश्री भी मन में नवकार का उच्चारण करतीं। 'पढमं हवई मंगलं' इस पद का अस्फुट उच्चारण भी आपने किया। मुनिश्री ने फरमाया कि आप अच्छी हो जावें तो सिद्ध-गिरि की यात्रा करना। आपके मुख से सिर्फ हकार निकला। इस समय दादावाड़ी श्रावक श्राविकाओं से भरी हुई थी। बाद में मुनिश्री उपाश्रय पधारे और आपके सामने जिनश्रीजी आयीं। आपश्री ने दो दिन के बाद नेत्र खोल कर सभी पर वात्सल्य दृष्टि डाली। जिनश्रीजी ने आपको चार शरण, नवकार मंत्र सुनाया, भवचरिम प्रत्याख्यान करवाया तथा अपनी ओर से एवं सभी साध्वियों की ओर से क्षमा याचना की।

और वह भीषण क्षण भी आ पहुंचा। यह लेखनी क्या उसका भी वर्णन करेगी? हृदय कंपायमान हो रहा है, लिखते हुए हाथ कांप रहा है किन्तु हाय! यदि उसे टाला जा सकता तो दुःख काहे का? घड़ी ने टन टन ५ ठोके सुनाये और आपने नेत्र बन्द किये सो सदा के लिए।

फाल्गुन शु॥ १४ दि. २०-३-६२ को शाम को ५ बजे इस नश्वर देह का त्याग कर आप स्वर्गवासी हुईं।

इस अन्तिम समय मुख पर इतना अलौकिक तेज था कि देखने वाला विश्वास भी नहीं कर सके कि इस शरीर में अब प्राण नहीं रहे। डॉक्टर को भी देख कर अचम्भा हुआ। मुख

पर शान्ति और संतोष की भावना थी। वाकई यह पंडित मरण था, समाधिमरण था, जिसे हर कोई चाहता है।

आपके स्वर्गवास का समाचार सारे नगर में विद्युत की तरह फैल गया। दूर-दूर के शहरों में भी तार तथा टेलीफोन द्वारा समाचार भेजे गये। करीब २०० तार तथा टेलीफोन भेजे गये।

इधर श्रीसंघ एकत्रित हुआ। आपके अचेतन देह को स्नान, विलेपन, वस्त्रपरिधानादि करके पाटे पर विराजमान किया। रात भर दादावाड़ी में भजनी मण्डली तथा अन्य जनता ने भजन किया, स्तवन गीत गाये। जैन जैनेतर जनता की दर्शनार्थ भीड़ लगी थी। बिजली की जगमगाहट थी, मानो वह दीपावली की सी रात थी। रात भर शव विमान बनाने का कार्य चला। मखमल तथा जरी के कपड़ों से उसे सजाया गया।

होली का दिन। आज अमलनेर तथा आस-पास के कई स्थानों का बाजार बन्द था। नन्दुरबार, खेतिया, तलोदा, सारंगखेड़ा, शहादा, बेटावद, धुलियां, धरणगांव, मुंबई, मलकापुर, दोंडाईचा, चोपड़ा, चालीसगांव, जलगांव आदि स्थानों से शोकमग्न हृदय से अन्तिम संस्कार के लिए भक्तगण आये। हजारों की तादाद में जनता एकत्र हुई।

सुबह ९ बजे शव विमान में बैठाने के लिए देह को उठाया। पाटे से शव विमान करीब ५० फीट की दूरी पर था। देह को वहां ले जाते समय एक अपूर्व चमत्कार हुआ। कुछ दूर

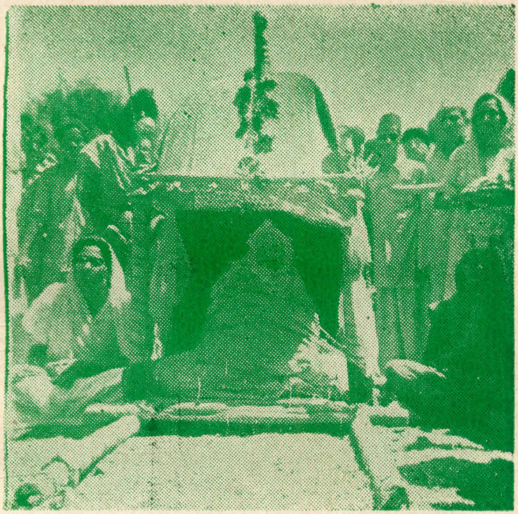

वर्णेश्वर में स्थापित विमान

४

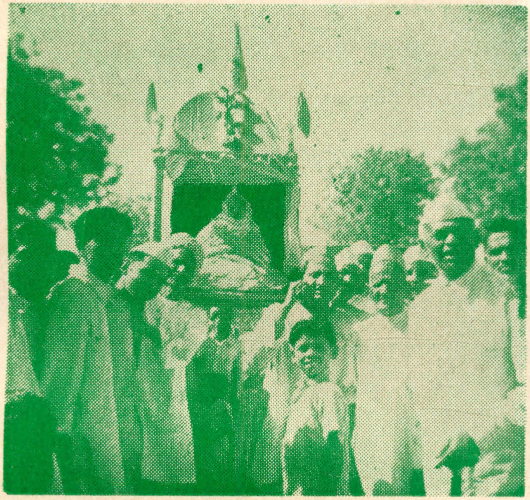

श्री जिनदत्त सूरिजी म. की दादावाडी से निकलती हुई अंतिम यात्रा

५

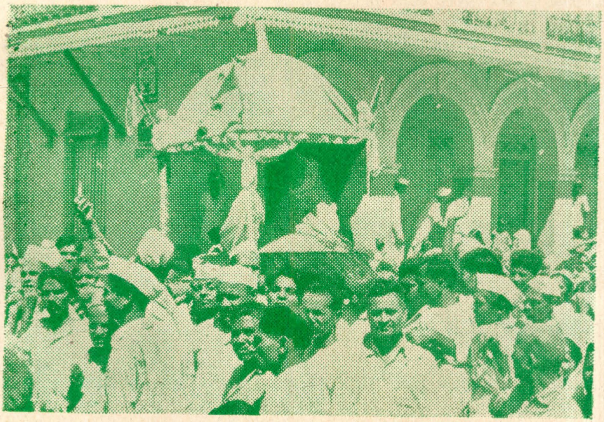

अंतिम यात्रा

ले जाने के पश्चात, जब मन्दिर के पृष्ठ भाग की दीवार के समीप से आपका शरीर ले जा रहे थे, तब वहां पर एकदम जल-वृष्टि हुई, और आगे जाने के बाद एक बूंद भी नहीं गिरी। विशेष आश्चर्य तो यह कि जल वर्षा से न तो पाट गीला था, न वस्त्र, न शरीर। उसी थोड़े से स्थान पर कैसे और कहां से जल बरसा यह एक चमत्कार है। मन्दिर के समीप से मृत शरीर को ले जाने से उसे पवित्र करने के लिए ही यह चमत्कार हुआ हो, फिर तो ज्ञानी गम्य है।

६॥ बजे शव यात्रा आरम्भ हुई। आगे दो बैंड, पीछे २-३ भजनी मण्डलियां, लेजिम और हजारों जनता के मध्य वह सुन्दर विमान, इस तरह यह यात्रा अमलनेर के प्रमुख मार्गों से जाने लगी। "जय जय नन्दा, जय जय भद्दा" के नारे आसमान में गूंजने लगे। गुलाल इतना उड़ाया गया कि सब रास्ते, सब आदमी लाल लाल हो गये। आकाश में भी लालिमा छा गई, मानो संध्या हो गई हो। जगह जगह शव यात्रा के फोटो लिए गये। पुष्प वृष्टि की गई। सैकड़ो रुपये उछाले गये।

जब यह यात्रा जैन स्थानक के पास से गुजर रही थी तो स्थानकवासी मुनि जनकविजयजी ने रथी को ठहरा कर आपको श्रद्धांजलि अर्पित की। बाद में जब यह यात्रा भगवान पार्श्वनाथ के मन्दिर के समीप आयी तो वहाँ पू० चन्द्रविजयजी म० सा० ने श्रद्धांजलि अर्पित की। अमलनेर के प्रमुख मार्गों

से होती हुई यह यात्रा दोपहर के एक बजे वर्णेश्वर की पुनीत भूमि पर आयी। जैन जैनेतर, पुरुष-स्त्रियाँ, आबाल वृद्ध सहस्रों का जमाव उस चिलचिलाती धूप में वहां जमा था। चन्दन, नारियल की चिता रची जाने लगी। इधर प्रोफेसर कान्तिलालजी चोरडिया, बम्बई निवासी प्रतापमलजी सेठिया, रतिलाल भाई आदि ने आपश्री के गुणों का वर्णन कर श्रद्धांजलि अर्पित की।

इसके बाद संघवी खेतमलजी ने लाउड स्पीकर पर जाहिर किया कि म० सा० के संसारी अवस्था के भतीजे गेनमलजी पारख यहां पर उपस्थित हैं। अग्नि संस्कार का लाभ उन्हें दिया जाय। सौभाग्य से गेनमलजी पारख मद्रास से दस दिन पूर्व ही आपश्री की सेवा में पधारे थे। इन अन्तिम दिनों में आपने आपश्री की तन, मन, धन से खूब सेवा की। आपकी बहन पिछले तीन महीनों से यहीं पर थीं। इस शवयात्रा का खर्चा श्रीसंघ ने किया किन्तु शव विमान और अग्नि संस्कार का खर्च आपने ही किया था।

उसी समय एक दूसरी भी घोषणा की गयी कि पूज्यश्री के स्मारक स्वरूप एक विशाल भवन (ज्ञान वल्लभ विहार) श्री जिनदत्त सूरि म० दादाबाड़ी में बनेगा। उसके लिए जिसे जो रकम देनी है, यहां जाहिर करें। यह घोषणा सुनते ही निम्न-लिखित आंकड़े तुरन्त जाहिर हुए :—

४१०१ श्री सेठ सुखलालजी खेतमलजी कोठारी, अमलनेर
१००१ ,, लक्ष्मीलालजी जीवराजजी नाहटा, शाहदा

६.

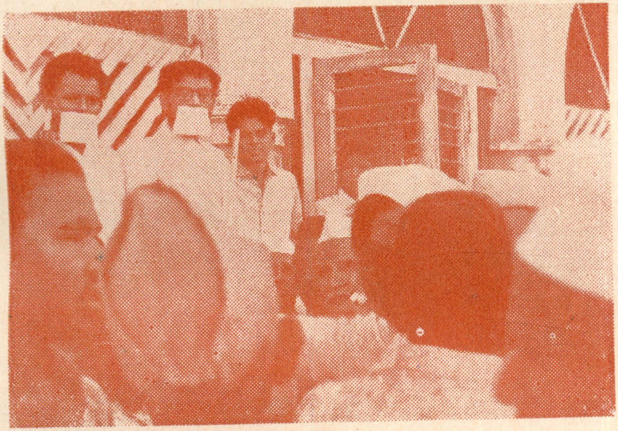

अंतिम यात्रा का जुलूस स्थानक आगे श्रीजनक मुनिजी म. श्रद्धाँजलि देते हुए

७

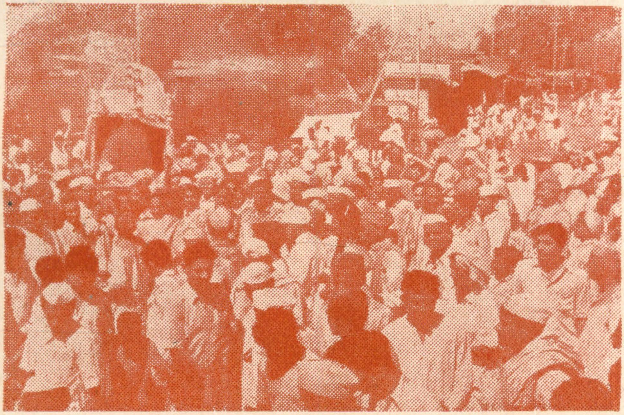

अंतिम यात्रा का जुलूस बाजार में

८

सदर बाजार में विमान यात्रा पार्श्वनाथ जी के मन्दिर के आगे
पू. चन्द्रविजयजी म. ने श्रद्धांजलि अर्पण की

९

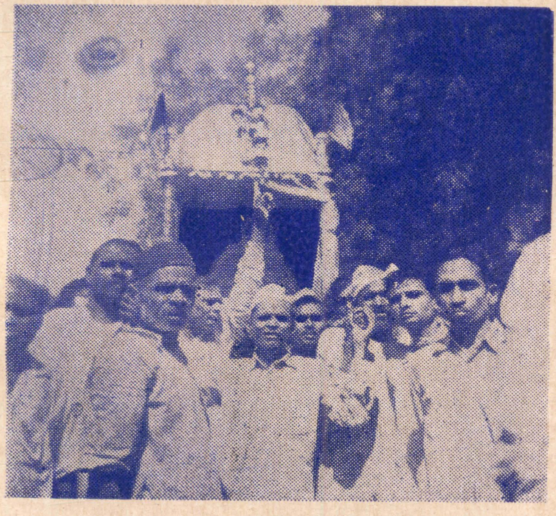

अंतिम यात्रा का वर्णेश्वर में प्रवेश

१००१ श्री सेठ रतिलाल छोटालाल शाह, बम्बई
१००१ ,, त्रिभुवन मोहनलाल शाह, बड़ोदा
५०१ ,, गेनमलजी पारख (महाराजश्री के भतीजे), मद्रास
५०१ ,, पूनमचन्दजी भीमराजजी टाँटिया, खेतिया
५०१ ,, अमृतलाल वनमालीदास, पादरा

इसके बाद अन्य सज्जनों ने भी इस कार्य के लिए भक्तिपूर्वक लाभ लिया है, उनकी सूची अन्त में दी है।

इधर चिता रचने का कार्य पूर्ण होते ही आपके पार्थिव शरीर को रथीसह चिता पर रखा गया और नारियल, घृत, चन्दन आदि से श्री गेनमलजी पारख ने अग्नि संस्कार किया। आग की लपटें उठीं और थोड़ी देर में वह देह भस्मीभूत हो गयी। सबके चेहरे पर खिन्नता थी, दुःखित अन्तःकरण से सबने आपको विदाई दी। इस समय काफी धूप हो गयी थी, सुबह से किसी ने अन्न नहीं लिया था। यह देख कर एक भाई ने अपनी मोटरों से सभी भाई बहनों को बाजार में पहुंचा दिया। पू० जिनश्रीजी के पास मंगलिक, शांतिपाठ सुन सब अपने अपने घर गये। बाहर के मेहमानों के लिए भोजन की व्यवस्था की गई थी।

दूसरे दिन दादावाड़ी में पू० श्री चन्द्रविजयजी म० सा० की अध्यक्षता में शोक सभा हुई। पू० श्री जनकमुनिजी, रिखबदास भाई, प्रोफेसर कांतिलाल जी चोरडिया, पंडित श्रीराम उपासनी, रतिभाई, प्रतापमलजी सेठिया, खेतमलजी कोठारी, मणीभाई

आदि वक्ताओं ने आपश्री के आदर्श जीवन पर प्रकाश डालते हुए श्रद्धांजलि अर्पित की। विदुषी साध्वी कुसुमश्री जी ने आपको श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए शिरछत्र की शीतल छाया से वंचित होने का दुःख व्यक्त किया। इसके बाद अमृतविजयजी ने अपना १४ की रात के अंतिम प्रहर में देखा हुआ, सपना सुनाया।

रात को महाराज के सपनों में एक दिव्य विभूति आयी। उसके तेज एवं दिव्य रूप को देख कर आप अचम्भे में पड़े।

आपने पूछा—तुम कौन हो?

"क्या आप मुझे भूल गये?"

"मैं तुम्हें पहिचान नहीं पा रहा हूँ?"

"कल ही तो आपने मुझे त्याग, पचक्खाण कराये एवं सिद्धगिरि की यात्रा करने को कहा था। मैं वही जीव हूँ और अब सिद्धाचल की यात्रा को जा रहा हूँ। आज चोमासे की बड़ी पूनम होने से दर्शन करने आया हूँ।"

"अभी तुम कहाँ से आये हो?"

"मैं दूसरे देवलोक में देव हूँ और वहां से आया हूँ।"

सच है। आपश्री जैसी पुण्यात्मा देवलोक में नहीं तो और कहां जायेगी। उक्त वार्तालाप से ज्ञात होता है कि स्वर्गवास के पश्चात आपकी आत्मा देवलोक में गयी है। फिर वास्तविकता तो ज्ञानी जानते हैं।

इस स्वप्नकथन के बाद पूज्य चंद्रविजय जी म. सा. ने आपकी मधुरता, ज्ञानगांभीर्य, कर्तव्य परायणता, विनय आदि गुणों की प्रशंसा कर श्रद्धांजलि अर्पित की। बाद में सब ने दो मिनट मौन रह कर नवकार का स्मरण किया। अंत में आपश्री की शिष्याओं ने विरह गहुंली सुनायी और सभा विसर्जित हुई।

आपके स्वर्गवास के निमित्त अट्ठाई महोत्सव करने का निश्चित हुआ और चैत्रवदी ६ से महोत्सव शुरू हुआ। बम्बई से गवैये तथा मेड़तारोड की मंडली बुलायी गई थी। अच्छे ठाट बाट से पूजा भावना होती थी। बाद में रथयात्रा का शानदार वरघोड़ा निकला, शांतिस्नात्र आदि धर्मकृत्य अच्छी तरह से संपन्न हुए।

अमलनेर के अलावा जोधपुर, फलोदी, लोहावट, मद्रास, बीकानेर तथा राजनांदगांव आदि स्थानों पर भी आपके स्वर्गवास निमित्त अट्ठाई महोत्सव हुए। बड़ोदा, रायपुर, धमतरी, दुर्ग, पादरा, गंभीरा तथा बम्बई आदि स्थानों पर बड़ी पूजाएं पढ़ी गयीं। जगह जगह देववंदन तथा शोक सभाएं हुईं।

जब से आपश्री बीमार थीं, तब से आपके स्वास्थ्य की कामना से जगह जगह तपस्या होती थी, बाद में आपके भक्ति निमित्त भी चारों ओर तपस्या की धूम मची। अमलनेर, जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, मंदसौर, छोटी सादड़ी, बूढा गांव, मद्रास, राजनांदगांव, धमतरी, दुर्ग, कवर्धा, रायपुर, बालोद, धरणगांव, जलगांव, गंभीरा आदि स्थानों पर आर्यामंडल एवं श्री संघ में आपके भक्ति

निमित्त २५३२ उपवास, ४०८२ आयंबिल, १६५८ नीवी, ४०६० एकासना, ३६३२ बियासना, ४६६१६ सामायिक, १३ करोड़ ५ लाख नवकार का जाप, २० हजार पांचसौ सैंतालीस दिन का ब्रह्मचर्य पालन, दो बड़ी पूजा, ५६३१ स्नात्रपूजा हुई। अमलनेर में आर्यामंडल ने ८३ लाख गाथाओं का स्वाध्याय किया। इस के अलावा मलकापुर, पादरा, फलोदी, मुंबई आदि स्थानों पर भी बहुतसी तपस्या हुई है। कई जगह सामुदायिक आयंबिल की तपस्या हुई। धमतरी, अमलनेर तथा अन्य स्थानों पर गरीबों को भोजन दिया गया।

जहां पर पूज्यश्रीजी का अग्निसंस्कार हुआ, वहां पर समाधि स्थान बनाया गया है। इस में मुंगेली निवासी स्व. सुरजमल जी राखेचा की धर्मपत्नी भीखीबाई ने पूज्यश्रीजी की चरण पादुकाएं स्थापन की है।

पूज्यश्री चली गईं। हजारों भक्तों के हृदय दुःखित कर आपश्री ने विदाई ली। बाल्यकाल से आपका जीवन आदर्श था। पवित्र संयम जीवन को अपनाकर अनेक प्रकार से शासनोद्धार का कार्य करते हुए वह पुनीत आत्मा सदा के लिए दूर चली गई।

आपका नाम वल्लभश्री था, आप जगवल्लभ होकर सिधार गईं।

उस महान आत्मा को कोटिशः वंदन।

वर्णेश्वर में आपका समाधि स्थान, साथमें रतनलालजी शिंगवी तथा जवरीलालजी

दिव्य विभूति

दुनिया में लाखों आदमी जन्म लेते हैं और मरते हैं किन्तु सभी का नाम नहीं होता। उनकी कोई खबर भी नहीं लेता। किन्तु कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं कि जब तक वे जीवित हैं तब तक हजारों लोग उनके दर्शन के लिए लालायित हो उठते हैं और मृत्यु के बाद भी वे अमर बन जाते हैं। उनके यश, कीर्ति का सौरभ उनके बाद भी महकता रहता है। इसका भी कुछ कारण होता है। कुछ ऐसे विशिष्ट गुण हैं कि जिन के कारण वे लोगों में माने जाते हैं, पूजे जाते हैं।

पूज्य वल्लभश्रीजी भी ऐसी दिव्य विभूति थीं। आपकी महानता का एक कारण बाल ब्रह्मचारिणी की अवस्था से ही संयम जीवन को अपना कर ४८ वर्ष उसकी उत्कृष्ट साधना थी किन्तु केवल इसी गुण के कारण उनका इतना प्रभाव नहीं था। वैसे साध्वियां भी बहुतसी हैं किन्तु सभी का इतना प्रभाव नहीं होता। पूज्यश्री का प्रभाव किसी आचार्य के प्रभाव से कम नहीं था। वे जहां भी रहतीं, दूर दूर से भक्तगण उनके दर्शन के लिए आते। अपने जीवन में जो महान कार्य उन्होंने किए, वे भी उनके कुछ विशिष्ट गुणों के कारण हुए।

उन सभी गुणों का यथायोग्य वर्णन करने की क्षमता मुझ में नहीं है। और कुछ बातें ऐसी होती हैं कि वे केवल अनुभव से, सहवास से ही जानी जा सकती हैं। लिख कर या पढ़ कर उसका अनुभव नहीं होता है। फिर भी उन कुछ विशेष गुणों का वर्णन करने का मैं प्रयत्न कर रहा हूँ।

१ मधुरता, वात्सल्यभाव–

आपके जिस गुण के कारण मैं अत्यंत प्रभावित हुआ, वह गुण था उनका वात्सल्यभाव। मुझे भारत के विभिन्न भागों में हजारों मील की यात्रा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, कई प्रकार के व्यक्तियों के संपर्क में मैं आया हूँ किन्तु इतनी वात्सल्यमयी मूर्ति मैंने कहीं और नहीं देखी। हृदय में वात्सल्य, आंखों में प्रेम भाव और मुंह में शहद सी मीठी वाणी, तथा जगत कल्याण की भावना, इनके कारण जो भी आपके सहवास में आता, आपका भक्त बन जाता। मैं जब भी उनके दर्शनार्थ जाता 'प्रोफेसर सा. आप आया' इतने ही वचन आप कहतीं किन्तु उनके वचनों में इतनी मिठास रहती कि मुझे लगता जैसे मेरी माँ ने मुझे पुकारा हो। छोटे बच्चे भी आपकी वात्सल्यभरी बातें सुन कर अत्यंत प्रसन्न होते थे। छोटी लड़कियां जब आपके पास आतीं, तो आप उन्हें प्यार से थपथपातीं। शुरू में अपने व्यस्त जीवन में और बाद में शारीरिक अस्वस्थता की स्थिति में भी संपर्क में आने वाले सभी से वात्सल्य भरी बातें करना आप नहीं भूलतीं, सभी की पूछताछ करतीं।

आपकी शिष्याएं आपको मां के स्थान पर मानती हों तो उसमें कुछ भी अचरज नहीं। इतना वात्सल्य, इतना उत्कृष्ट मार्गदर्शन पाकर ऐसे गुरु की शिष्या बनने का भाग्य प्राप्त हुआ इसलिए वे अपने भाग्य की सराहना करती हैं।

पूज्यश्री के पास यह आदर और प्रेम की भावना सबके लिए थी। चाहे छोटा हो या बड़ा, चाहे बच्चा हो या बूढ़ा, चाहे अमीर हो या गरीब, सब आपके लिए समान थे। आपकी इस भावना का एक उदाहरण देता हूँ।

दादावाड़ी में दामू नाम का एक नौकर काम करता था। वह नंबर एक का कामचोर था, सभी उस से नाराज थे किन्तु पूज्यश्री कभी नाराज नहीं हुईं। साध्वियां उसे 'दामू' कह कर पुकारतीं तो आपश्री फरमातीं, दामूजी कहो, दामू ऐसे तुच्छ नाम से क्यों पुकारती हो?

२ वक्तृत्व–

आपका वक्तृत्व अत्यंत प्रभावी था। इसी प्रभावी वाक्प्रवाह के कारण कई अजैन भाइयों ने आपके पास अहिंसा की प्रतिज्ञा ली। इनमें कुछ राजा तथा राजपरिवार के सदस्य भी थे। कई स्थानों पर आपके प्रभावी व्याख्यान के कारण ही अच्छे कार्य के लिए हजारों रुपयों का दान लोगों ने दिया। आपके व्याख्यानों में हमेशा हजारों की भीड़ रहती और सभी जन आपका व्याख्यान श्रवण कर अपने को धन्य धन्य मानकर विदाई

लेने। आपके वक्तृत्व का कितना प्रभाव पड़ता था इसका एक उदाहरण प्रस्तुत है।

यह घटना संवत १९८३ की सुरत चातुर्मास की है। उन दिनों सिद्धगिरी की यात्रा बंद थी, उसका विचार करने के लिए सुरत में सेठ नगीनदास कपूरचंदजी के हाल में सभा का आयोजन किया गया था। अध्यक्ष पू. पद्ममुनि जी थे, साथ में अन्य मुनिराज भी विराजमान थे। आप वहां पर पधारीं तब नगर सेठ ने आपसे पूछा कि क्या आप भाषण देंगी ? तो आपश्री ने कहा 'संघ की इच्छा'। फिर उन्होंने पूछा-व्याख्यान दे सकती हैं न ? तो उत्तर मिला-'गुरुकृपा'। यह उत्तर पाकर वक्ताओं की सूची में आपका नाम लिखा गया। बाद में जब भाषण के लिए आपका नाम लिया गया तब कुछ पुराण मतवादी लोगों ने कहा-इस सभा में साध्वी को बोलने का अधिकार नहीं है। किसी ने पूछा क्यों ? तो उत्तर मिला कि वैसा कायदा नहीं है। तब नगर सेठ एवं अन्य विचारकों ने कहा कि कायदा रहेगा तुम्हारे उपाश्रय में, यहां पर साध्वी तो क्या, कोई श्राविका भी बोल सकती है। इस पर अध्यक्ष महोदय का मत पूछा गया और आपने पूज्य श्री को भाषण देने के लिए कहा। आपके लिए सिर्फ १५ मिनट का समय था। हाल में करीब ५००० लोग थे और वह पूरा भर गया था। आपने भाषण शुरू किया और सभी लोग जादू के पुतले से स्तब्ध बन गये। जब १५ मिनट की अवधि हुई, तो आप भाषण बंद करने लगीं तब सभी ने एक स्वर से कहा कि भाषण चालू

रखिए। आप ४५ मिनट तक बोलती रहीं और पूरा हाल प्राण कानों में लाकर आपका भाषण सुन रहा था। आपका भाषण पूरा होने पर लोगों ने महसूस किया कि आज उन्होंने कोई अद्‌भुत वाणी का श्रवण किया है।

३. विद्वत्ता–

यह वक्तृत्व आपकी सुंदर शैली एवं गहन अध्ययन के कारण से ही था। संयम जीवन के प्रारम्भिक दिनों में तो आपने ज्ञान प्राप्ति के लिए अनवरत अध्यवसाय किया ही, जीवन पर्यन्त आप सदा अध्ययन करती रहीं। आपने सिद्धान्त कौमुदी, लघु-वृत्ति, काव्य, न्याय, व्याकरण, छंद्‌शास्त्र, अलंकार आदि का अध्ययन किया था। लगभग सभी सूत्रों की टीका का मनन पूर्वक वाचन किया था। द्रव्यानुयोग में भी द्रव्यगुण पर्याय का रास, अध्यात्म सार, आगम सार, नयचक्र सार, देवचंद्रजी की एवं आनंद-घन जी की चोविसी आदि का आपका ज्ञान गहरा था।

जिस तरह आप खुद अध्ययनशील थीं, शिष्याओं से भी खूब अध्ययन करवातीं। आप खुद शिष्याओं को यथा संभव पढ़ातीं। आप कहतीं कि किसी अन्य पंडित के पास से लिया हुआ ज्ञान बाहर के दूध के समान है और गुरु से लिया हुआ ज्ञान मां के दूध के समान है।

४. विनय सरलता–

इतना यश प्राप्त करने पर भी कभी आपको अहंभाव ने छूआ तक नहीं। कभी अपने मुंह से, अपने किसी कार्य का

बखान नहीं किया। उस पर सरलता इतनी कि छोटे बड़े सभी आपके पास निःशंक भावना से जावें। कठोर वचन का प्रयोग तो जीवन में कभी भी नहीं किया। अपने वचनों से या कार्य से कभी किसी का दिल न दुखे, इसका उन्हें हमेशा ध्यान रहता था। कोई किसी बात का विरोध करता तो भी आपके हृदय में उसके प्रति अपनेपनकी भावना रहती। कोई कहता कि इन्होंने तो अमुक बात में विरोध किया था तो आप कहतीं, "ऐसी बातें मन में रखना ठीक नहीं।" सच है-संत कबीर ने कहा है :-

"जो तोको कांटा बुवै, ताही बोव तू फूल।
तोही फूल के फूल है, वाको है तिरशूल॥"

जो तेरे लिए कांटे या दुःख बोयेगा, उसके लिए भी तू फूल बो दे, उसे सुख दे। अंत में तेरे हाथ में फूल आयेंगे और उसके हाथ में कांटे।

५. समाज कल्याण की भावना-

आपके मन में अहर्निश यह विचार रहता कि मैं समाज-कल्याण के कार्य में किस प्रकार सहयोग दूं। आपका हर कार्य समाज की भलाई के लिए था। यदि कहीं पर संघ में आपस में फूट होती, झगड़े होते तो आप तुरंत मिटाने की कोशिश करतीं। टूटे हुए दिलों को अपनी मीठी वाणी के मरहम से जोड़ देतीं। कुछ लोग अपना महत्त्व बढ़ाने के लिए झगड़े लगा देते हैं, आप उनको मिटा देती थीं। क्योंकि आपश्री को अपना नहीं,

समाज का खयाल था। परोपकारी महात्मा दूसरों की भलाई में ही रात दिन लगे रहते हैं। एक कवि ने कहा है :--

"वृक्ष कबहु नहीं फल भखै, नदी न संचै नीर।
परमारथ के कारणे, साधुन धरा शरीर ॥"

वृक्ष कभी अपने फल खुद नहीं खाते हैं, न नदी अपने लिए कभी पानी का संचय करती है, उसी तरह साधु का शरीर भी परमार्थ के लिए होता है।

६ भविष्यवाणी–

आपकी मृत्यु के कुछ दिन पहले ही आपने श्री खेतमल जी कोठारी से कहा था कि दो परवाना आया, रुक्का नहीं आया, पाटा बिछाना। गणिजी महाराज तथा प्रमोद श्रीजी आयेंगे। इसके कुछ दिन बाद ही आचार्य कवींद्र सागर सूरीश्वरजी का स्वर्गवास हुआ और उनके पाट पर गणिजी हेमेंद्र सागरजी विराजमान हुए। उसी तरह आपके बाद श्री प्रमोद श्रीजी म. सा. प्रवर्तिनी पद पर विराजमान हुईं। आपको भविष्य काल की जानकारी पहले से ही होती थी, इसका यह सबूत ही है। आप अपनी तबियत के कारण अपने लिए कुछ कहतीं तो विशेष आश्चर्य नहीं था। किन्तु आचार्य कवींद्रसागर सूरि तो बीमार तक नहीं थे। अचानक हार्ट-फेल से आपका स्वर्गवास हुआ था। उनके लिए भी आपने भविष्यवाणी कह दी थी।

आपकी भविष्यवाणी सच होने की अन्य घटनाएं भी घटी हैं।

७. वचन सिद्धि–

कुछ विशिष्ट प्रसंग पर आप जो वचन कहतीं, वे सिद्ध हो जाते। जब आप जोधपुर में थीं, तो आपके भक्त मांगीमल जी मुणोत एल. एल. बी. के परीक्षा में फेल होने के समाचार आये। जब वे उदास मुख से आपके पास पहुंचे तो आपश्री ने कहा "आपके पेपर की जांच करवाओ, आप पास हो जायेंगे।" आपश्री के कथनानुसार जब वापिस जांच करवायी, तब उनके परीक्षा में उत्तीर्ण होने का नतीजा घोषित हुआ।

ऐसा ही दूसरा प्रसंग है।

निपुणा श्रीजी की दीक्षा के समय धुलिया में आपके भाई रोहित कुमार आये थे। उस समय उनकी चार्टर्ड अकाउंटेंट (सी. ए.) की परीक्षा का परिणाम घोषित हुआ। उस में आप अनुत्तीर्ण हुए थे। आपश्री ने इनको अपना पेपर जांच कराने के लिए कहा और अन्त में मालूम हुआ कि आप उत्तीर्ण हो गये हैं।

८. प्राभाविकता–

आपश्री का प्रभाव अनोखा था। आप जहां भी विराजतीं, वहां पर वृद्धि होती रहती। जंगल होता तो भी मंगल बन जाता। आपके वासक्षेप का प्रभाव इतना था कि कई बीमारों की बीमारी आपके वासक्षेप से दूर हुई। दूर दूर से लोग आपके वासक्षेप के वास्ते आते रहते थे। अमलनेर में आप छह साल विराजीं,

इस समय में यहां पर अतिवृष्टि, अनावृष्टि, उपद्रव आदि कुछ भी नहीं हुआ।

यहां पर यह नहीं समझना चाहिए कि आप कोई जादूमंत्र पढ़ती थीं। यह तो आपके उज्ज्वल और पवित्र जीवन का प्रभाव था कि आपके कारण सभी जगह मंगल होता था।

९. आत्म जागृति–

आप सदा अप्रमत्त भाव से विचरतीं। बीमारी की अवस्था में भी कभी धर्मध्यान और आत्म चिंतन में खंडन नहीं हुआ। सोऽहं का जाप निरंतर चलता रहता था।

अस्तु आपके गुणों का कहां तक वर्णन करें। क्या सागर की गहराई नापी जा सकती है? क्या सूर्य का तेज नापा जा सकता है? उसी तरह आपके गुणों का वर्णन करना मेरी शक्ति के बाहर है। यहां पर तो कुछ दिग्दर्शन मात्र है।

आपश्री का जीवन त्याग, तप, शील, उदारता, सरलता, सौजन्य आदि गुणों से ओतप्रोत था। किसी साधक के उत्कृष्ट संयम जीवन के लिए आवश्यक सभी गुण आपमें ओतप्रोत थे। उन गुणों से प्रेरणा लेकर यदि हम अपने जीवन को कुछ सुधारें, उनके बताये हुए मार्ग पर चलें तो हमारा भी आध्यात्मिक उत्थान और आत्मकल्याण होगा।

आपके जीवन चरित्र का यह आखरी परिच्छेद है। आपने उत्कृष्ट संयम जीवन द्वारा इहलोक तथा परलोक दोनों को उत्कृष्ट बनाया। दशवैकालिक सूत्र में फरमाया है।

"तवो गुण पहाणस्स, उज्जुमइखंति संजम रयस्स।
परिसह जिणंतस्स, सुलहा सुगइतारिसगस्स ॥"

जिस में तपगुण की प्रधानता है, जो सरल बुद्धि, शांति, क्षमा आदि गुणों से युक्त है, जो विषय वासना से मुक्त होकर अपने संयम गुण में लीन हुआ है तथा जिसने परिग्रहों को जीता है, उस महान साधु के लिए सद्गति सहज है।

ॐ शांति, शांति, शांति।

शिष्या परिवार

प्राणीमात्र के पीछे जीवन चक्र लगा है। सुख दुःखों को भोगते हुए, उसे जन्म, जरा, मृत्यु के चक्र में घूमना पड़ता है। जीवन में भी कई प्रकार के दुखोंः को सहना पड़ता है। इन दुःखों से छुटकारा पाने के लिए तथा अपने जीवनोद्धार के लिए जिनेश्वर भगवान ने उत्कृष्ट मार्ग बताया है। इस मार्ग पर तो श्रावक श्राविकाएं भी चल सकती हैं, किन्तु अपना आत्मोद्धार करना हो तो संयमी जीवन के बिना अन्य मार्ग नहीं।

किन्तु मोहवश मानव इस संसार के माया जाल में मग्न है, जब वे किसी महापुरुष के संपर्क में आते हैं तब उनमें जो विचारक हैं, वे अपना आत्मोध्दार करने के लिए तत्पर बन जाते हैं।

पूज्यश्री ज्ञानश्रीजी और पूज्यश्री वल्लभ श्रीजी ने अपनी प्रभावी वाणी से कई भव्य आत्माओं का उध्दार कर उन्हें संयम जीवन के उत्कृष्ट मार्ग पर आरूढ़ किया। इन दोनों के पास कुल मिलाकर २७ दीक्षाएं हुई। इनमें से श्री अनोप श्रीजी, श्री प्रधान श्रीजी, श्री चंदन श्रीजी, श्री कमल श्रीजी, श्री सुमति श्रीजी, श्री विजय श्रीजी, श्री बुद्धि श्रीजी, श्रीमणि श्रीजी, श्री गुप्ति श्रीजी, श्री संपत श्रीजी, श्री गुणवान श्रीजी, श्री सुबोध श्रीजी, तथा श्री विद्वान श्रीजी, पू. ज्ञानश्रीजी म. सा. की शिष्याएं हुई और श्री जिन श्रीजी, श्री हेम श्रीजी, श्री प्रवीण श्रीजी, श्री समता श्रीजी, श्री अशोक श्रीजी, श्री हुशियार श्रीजी, श्री कुसुम श्रीजी, श्री चंद्रप्रभा श्रीजी, श्री रंजना श्रीजी, श्री कमलप्रभा श्रीजी, श्री निपुणा श्रीजी, श्री कीर्तिप्रभा श्रीजी, श्री तरुणप्रभा श्रीजी, तथा श्री राजेश श्रीजी पूज्य श्री वल्लभ श्री म. सा. की शिष्याएं हुई। श्री मनोहर श्रीजी, श्री चरणप्रभा श्रीजी, तथा श्री विपुल श्रीजी, ज्ञान श्रीजी तथा वल्लभ श्रीजी म. सा. की प्रशिष्याएं हैं।

आपके शिष्या परिवार का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :-

१. स्व. अनोप श्रीजी-

स्वर्गवासी, जानकारी उपलब्ध नहीं।

२. श्री प्रधान श्रीजी–

फलोधी निवासी स्व. घेवरचंद जी लुंकड की धर्मपत्नी जडाव बाई ने भागवती दीक्षा स्वीकृत की। प्रधान श्रीजी नाम रखा गया। आप स्वाध्यायरत हैं तथा आपने मासक्षमण, वीशस्थानक आदि तपाराधन किया है।

३. श्री चंदन श्रीजी–

पांचला निवासी बहन फलोदी में दीक्षा लेकर चंदन श्रीजी नाम से अलंकृत हुई। आपका वैयावच्चगुण असाधारण है। आपने मासक्षमण, दो वर्षी तप, वीशस्थानक आदि तप किया है। अब भी तपस्या करती रहती हैं।

४. स्व. कमल श्रीजी–

लोहावट निवासी सुरजमल जी पारख की सुपुत्री कमलाबाई भागवती दीक्षा स्वीकृत कर कमल श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। आप अभ्यास में बहुत प्रयत्नशीला थीं। आपका स्वर्गवास हो गया है।

५. स्व. सुमति श्रीजी–

बीकानेर निवासी लाधुबाई दीक्षा लेकर सुमति श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। अध्ययनशीलता और वैयावच्च आपके विशिष्ट गुण थे। आप स्वर्गवासी हुई हैं।

६. स्व. विजय श्रीजी–

पाली की एक बहन दीक्षा लेकर विजय श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। आप स्वर्गवासी हुई हैं।

७. स्व. बुद्धि श्रीजी–

आप जयपुर की रहने वाली थीं और आपकी दीक्षा बीकानेर में हुई। 'यथा नाम तथा गुण' इस कहावत के अनुसार आप बुद्धिमती थीं, मिलनसार स्वभाव की थीं। दीक्षा के बाद थोड़े समय में ही आपका स्वर्गवास हो गया। शासन सेवा का लाभ न ले सकीं किन्तु स्वसाधना अच्छी कर ली।

८. स्व. मणि श्रीजी–

स्वर्गवासी, जानकारी उपलब्ध नहीं है।

९. श्री गुप्ति श्रीजी–

लोहावट निवासी किसनलाल जी कानूंगा की धर्मपत्नी जमना बाई दीक्षा स्वीकृत कर गुप्ति श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। आपने मासक्षमण, वीशस्थानक आदि तप किया है। आप स्वाध्याय पाठ करती रहती हैं।

१०. श्री संपत श्रीजी–

स्व. चुनीलालजी कोठारी की धर्मपत्नी केशर बाई दीक्षा स्वीकृत कर संपत श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। आपने मासक्षमण, सोलह उपवास आदि तपस्या की है। आपका कंठस्थ ज्ञान अच्छा है।

११. स्व. गुणवान श्रीजी–

लोहावट निवासी छोगमल जी शेठिया की सुपुत्री गट्टा बाई

भागवती दीक्षा लेकर गुणवान श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। आपका स्वर्गवास हुआ है।

१२. स्व. सुबोध श्रीजी–

मंदसौर निवासी गुलाबचंद जी की धर्मपत्नी सौ. प्यारी दीक्षा लेकर सुबोध श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। आपने अच्छी चारित्राराधना की थी। आपका स्वर्गवास हुआ है।

१३. श्री जिन श्रीजी–

आप वल्लभ श्रीजी की प्रथम शिष्या हैं। आपका संक्षिप्त जीवन चरित्र अंतमें दिया गया है।

१४. श्री हेम श्रीजी–

फलोधी निवासी स्व. नेमिचंदजी दुगड की धर्मपत्नी कोला बाई ने संवत् १९८१ में जेष्ठ शु० ५ के शुभ दिन महोत्सव के साथ भागवती प्रव्रज्या ग्रहण की। आप हेम श्रीजी शुभ नाम से अलंकृत हुईं। अमीरी के लाड कोड़ में पली हुई थीं फिर भी दीक्षा जीवन में वेयावच्च तथा तपाराधन में अग्रसर हैं। मासक्षमण, वीशस्थानक आदि तपस्याएं की हैं और अब भी तपसाधना करती हैं। आपने प्रकरणादि ज्ञान प्राप्त किया है।

१५. श्री प्रवीण श्रीजी–

पादरा निवासी चुनीलाल जी मकाती की सुपुत्री मणी बहन सं. १९८३ में माघ कृष्ण ५ के दिन महोत्सव के साथ

भागवती दीक्षा स्वीकृत कर प्रवीण श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। पूज्य श्री सिंह श्रीजी म. सा. के समुदाय में गुजरात की यह प्रथम दीक्षा थी। गृहस्थी अवस्था में ही आध्यात्मिक ज्ञान अच्छा हासिल किया था। बाद में भी व्याकरण, काव्य एवं द्रव्यानुयोग के विषय में नामानुसार प्रवीणता प्राप्त की है। अनेक विध छोटी तपस्या के साथ मासक्षमण, वीशस्थानक आदि बड़ी तपस्या भी की है। अब भी तपसाधना करती रहतीं हैं। आपकी जिज्ञासावृत्ति, चरित्र रमणता सराहनीय है। आपका वक्तृत्व प्रभावी है।

१६. श्री समता श्रीजी–

पादरा निवासी लल्लू भाई चुन्निलाल की सुपुत्री समु बहन संवत १९८४ में मार्गशीर्ष शु० ३ के दिन महोत्सव के साथ दीक्षा ग्रहण कर समता श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। मासक्षमण, वीशस्थानक आदि तपसाधना की है। संस्कृत, प्रकरणादि का आपने अभ्यास किया है।

१७. श्री अशोक श्रीजी–

कुमेटा निवासी स्व. दलसुख भाई की धर्मपत्नी मणि बहन संवत १९८४ में पौष कृष्ण ६ के शुभ दिन भागवती दीक्षा ग्रहण कर अशोक श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। आप सेवाभावी हैं और आपने मासक्षमण, वीशस्थानक, २४ तीर्थंकर की ओली आदि तप किया है।

१८. स्व. हुशियार श्रीजी–

फलोदी निवासी स्व. लक्ष्मीलाल जी गुलेच्छा की धर्मपत्नी जडाव बाई संवत १९८९ में वैशाख शु० ३ के शुभ दिन भागवती दीक्षा ग्रहण कर हुशियार श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। आपके अप्रमत्तभाव, गुरुविनय आदि गुण सराहनीय थे। आपने वर्षीतप, वीशस्थानक तप किया था। आपका स्वर्गवास हुआ है।

१९. श्री मनोहर श्रीजी–

लोहावट निवासी रावतमल जी राखेचा की सुपुत्री पार्वती बाई ने संवत १९९१ में माघ शु० १३ के दिन दीक्षा ग्रहण की। मनोहर श्रीजी नाम दिया गया। आपने व्याकरण, काव्य, सार्थ प्रकरण आदि अध्ययन किया है। आपका वक्तृत्व प्रभावी है। आपने दो वर्षीतप, तीन अट्ठाइयां आदि तप किया है।

२०. श्री विद्वान श्रीजी–

लोहावट निवासी संपतलाल जी पारख की सुपुत्री बाल ब्रह्मचारिणी बिदामी कंवरने संवत १९९२ में आषाढ़ शु० ३ के दिन दीक्षा ग्रहण की। विद्वान श्रीजी नाम दिया गया। आपने व्याकरण, काव्य, सार्थ प्रकरणादि अध्ययन किया है। साथ ही मासक्षमण, वीशस्थानक, कल्याणक, पखवासा, पांच अट्ठाइयां आदि तपस्या की हैं। आप अच्छा व्याख्यान देती हैं।

२१. श्री कुसुम श्रीजी–

पादरा निवासी सोमाभाई अमृतलाल की सुपुत्री बाल ब्रह्मचारिणी पद्मावती संवत १९९९ में वैशाख शु० ७ के दिन भागवती दीक्षा स्वीकृत कर कुसुम श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। आपने घर में ही लघुवृत्ति व्याकरण, सार्थ प्रकरण ग्रंथ, इनका तथा आध्यात्मिक ज्ञान हासिल किया था। पादरा श्री संघ ने आपको मान पत्र देकर आपकी वैराग्य भावना का अनुमोदन किया था। आप जिज्ञासु वृत्ति की तथा प्रवृत्तिशील स्वभाव की हैं। आपका सूत्रज्ञान भी अच्छा है। आपने १६ उपवास, अट्ठाइ, कल्याणक आदि तपसाधना की है। आपका वक्तृत्व प्रभावी है।

२२. श्री चंद्रप्रभा श्रीजी–

गंभीरा निवासी मंगलदास माणेक लाल की सुपुत्री बाल ब्रह्मचारिणी कंचनकुमारी संवत १९९९ में फाल्गुण शु० ३ के दिन जंबूसर में भागवती दीक्षा ग्रहण कर चंद्रप्रभा श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। आपने मासक्षमण, अट्ठाई, ज्ञान पंचमी आदि तपसाधना की है। आप अच्छा व्याख्यान देती हैं। व्याकरण, काव्य, सार्थ प्रकरणादि ज्ञान प्राप्त किया है।

२३. श्री रंजना श्रीजी–

पादरा निवासी प्रेमचंद भाई के सुपुत्र चंदु भाई की धर्मपत्नी, सौ. सविता बहन संवत २००० में फाल्गुण शु० ८ के

दिन पालीताना में दीक्षा ग्रहण कर रंजना श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। आपने सार्थ प्रकरणादि तथा संस्कृत का अध्ययन किया है। साथ ही मासक्षमण, दो वर्षीतप, वीशस्थानक, कर्मसूदन तप, कल्याणक आदि तपस्या की है। अभी तपसाधना करती रहती हैं।

२४. श्री कमलप्रभा श्रीजी–

बड़ोदा निवासी त्रिभुवन भाई मोहनलाल की सुपुत्री बाल ब्रह्मचारिणी कंचन कुमारी संवत २००१ में वैशाख शु० ६ के दिन दीक्षा ग्रहण कर कमलप्रभा श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। आपके कुटुंबी जनों ने पालीताना में आकर दीक्षा महोत्सव किया। आपने व्याकरण, काव्य, सार्थ प्रकरण आदि अध्ययन किया है। आपका स्तवन, सज्झा यों का कंठस्थ ज्ञान अच्छा है। आपने सोलह उपवास, अठ्ठाई, वीशस्थानक, कल्याणक आदि तप किया है। आप अच्छा व्याख्यान देती हैं

२५. श्री चरणप्रभा श्रीजी–

लोहावट निवासी आसकरण जी गुलेच्छा की सुपुत्री वरजु बाई संवत २००९ में मार्गशीर्ष शु० ११ के दिन दीक्षा ग्रहण कर चरणप्रभा श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। आप सेवाभावी हैं।

२६. श्री निपुणा श्रीजी–

पादरा निवासी सोमाभाई अमृतलाल की सुपुत्री बाल-ब्रह्मचारिणी हंसा कुमारी संवत २०१२ में आषाढ़ शु० १३ के शुभ

दिन भागवती दीक्षा ग्रहण कर निपुणा श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। आपके परिवार ने धुलिया आकर दीक्षा महोत्सव किया। धुलिया में प्रथम दीक्षा प्रसंग होने से संघ में बहुत ही उत्साह था। आपने न्याय, अलंकार, छंद तथा धर्मशास्त्रों का अच्छा अध्ययन किया है। आप मृदुभाषी एवं सेवाभावी हैं।

२७. श्री कीर्तिप्रभा श्रीजी—

सूरत निवासी बाबू भाई मलजी झवेरी की सुपुत्री बाल-ब्रह्मचारिणी कुसुम कुमारी संवत २०१३ के फाल्गुण व० ६ के दिन बम्बई में दीक्षा ग्रहण कर कीर्तिप्रभा श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। आपने संस्कृत का अच्छा अध्ययन किया है। साथ ही कल्याणक, वीशस्थानक, अट्ठाई आदि तपस्या भी की है।

२८. श्रीतरुणप्रभा श्रीजी—

बाबू भाई जवेरी की दूसरी पुत्री बाल ब्रह्मचारिणी जयाकुमारी भी अपनी बहिन के साथ बम्बई में दीक्षा ग्रहण कर तरुणप्रभा श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं। आपने संस्कृत तथा सार्थप्रकरण आदि अध्ययन किया है। कल्याणक, वीशस्थानक, अट्ठाई आदि तपस्या भी की है।

२९. श्री राजेश श्रीजी—

गंभीरा निवासी शंकरलाल हिम्मतलाल की सुपुत्री बाल-ब्रह्मचारिणी शारदा कुमारी संवत २०१४ में फाल्गुण वदी ६ के

दिन दीक्षा ग्रहण कर राजेश श्रीजी नाम से अलंकृत हुई । कुटुंबीजनोंने अमलनेर में आकर दीक्षा महोत्सव किया । आपने संस्कृत, सार्थ प्रकरण आदि अध्ययन किया है । सोलह उपवास, नौ उपवास, अट्ठाई, वीशस्थानक आदि तपस्या की हैं और तप साधना करती रहती हैं ।

३०. श्री विपुल श्रीजी–

बम्बई निवासी परमानंद वोरा की सुपुत्री बाल ब्रह्मचारिणी मधुकांता बहन ने संवत २०१९ में अक्षयतृतीया के शुभ दिन अमलनेर में पूज्य श्री जिन श्रीजी म. सा. के वरद हाथों से दीक्षा ग्रहण की । विपुल श्रीजी नाम दिया गया । आपकी पूज्य श्री वल्लभ श्रीजी म. सा. के हाथों से दीक्षा लेने की तीव्र भावना थी किन्तु दैवयोग से यह इच्छा पूर्ण होने के पहिले ही पूज्य श्रीजी का स्वर्गवास हुआ । आपका मूल पाठ कंठस्थ ज्ञान अच्छा है । अभी व्याकरण पढ़ रही हैं ।

इस तरह यह पूज्यश्री ज्ञान श्रीजी तथा पूज्य श्री वल्लभ श्रीजी म. सा. का शिष्य परिवार है । आपश्री जैसी वत्सला, ज्ञानी तथा प्रभावी गुरुवर्य्या पानेका सौभाग्य इन शिष्याओं को प्राप्त हुआ । इस लिए उनके भाग्यकी सराहना करनी चाहिए । गुरुवर्य्या के आदर्श जीवन को सामने रखकर शिष्याएं भी अपनी उज्ज्वल समाज सेवा से गुरुवर्य्या का नाम रोशन करेगी, यही शुभ कामना ।

परमशिष्या

पू. जिन श्रीजी म. सा.

पूज्यश्री वल्लभश्रीजी म. सा. का यह चरित्र लिखने की प्रेरणा मुझे पूज्य जिनश्रीजी ने दी। गुरुभक्ति का असाधारण नमूना देखना हो तो आपके रूप में देखने को मिलता है। पूज्य श्रीजी की आप प्रथम शिष्या थीं, सभी शिष्याओं में ज्येष्ठ होने के नाते पूज्यश्री के बाद इनकी नेत्री भी आप हैं। अतः आपका संक्षिप्त जीवन परिचय देना यहां आवश्यक है।

जोधपुर से १८ मील की दूरी पर तिवरी नामक एक कस्बा है। यहां पर भूगर्भ से निकला हुआ शिखर युक्त जिनालय है। यहीं पर धर्मप्रेमी लाधुरामजी बुरड निवास करते थे। इनकी धर्मपत्नी धुडीबाई भी धर्मपरायण एवं सुशील थीं। इनकी पवित्र कुक्षी से सं. १९५७ के आश्विन मास में जेठीबाई का जन्म हुआ। उस समय के रिवाज मुताबिक कुछ व्यावहारिक शिक्षा देकर १४ साल की उम्र में आपका विवाह श्रीयुत् कपूरचंदजी श्रीश्रीमाल के सुपुत्र श्री राजमलजी के साथ हुआ। ससुराल में सासुजी नहीं होने से आप ही बड़ी थीं। अतः छोटी अवस्था में ही गार्हस्थ जीवन का बोझ आपके कंधों पर पड़ा जिसे आपने कुशलता से निभाया। अपनी विनयशीलता तथा वात्सल्यपूर्ण स्नेह से सभी को आपने मोह

लिया। किन्तु विवाह के डेढ़ वर्ष बाद ही आप पर वैधव्य की कठोर कुल्हाडी का वार हुआ। यह महादारुण दुःख था। पति निधन का दुःख और उस समय के विधवाओं का वह दारुण, घर की चहार दीवारी में बन्द सूना जीवन। किन्तु कभी बुरी बातों से भी अच्छी बातें निकलती हैं। निबिड अंधकार में भी कहीं प्रकाश की किरण मिल सकती है। आपके जीवन में भी ऐसा हुआ।

संवत १९७६ में फलोदी से जोधपुर जाते समय पूज्य ज्ञान श्रीजी म. सा. तथा पूज्य वल्लभश्रीजी म. सा. वहां पधारीं। मानो इनका पुण्य ही उन्हें वहां खींच लाया। शाम को आप अपनी बहन के साथ म. सा. के दर्शनार्थ आई। दो घन्टे गुरुवर्य्या ने बोधामृत का पान कराया। ज्ञानांजन से नेत्र खोल दिये। सत्संग का प्रभाव वास्तव में अनोखा है। उसी समय आपके मन में वैराग्य भावनाका उदय हुआ। दूसरे दिन गुरुवर्य्या ने जोधपुर की ओर प्रस्थान किया।

जब चातुर्मास नजदीक आया तब तिवरी का श्रीसंघ चातुर्मास की विनती करने जोधपुर आया। छह साल से प्रार्थना हो रही थी। अंत में इस वर्ष तिवरी वालों की प्रार्थना स्वीकृत हुई। चातुर्मास में धर्माराधन तथा शासन प्रभावना अच्छी हुई। तपस्या, अध्ययन, व्याख्यान श्रवण आदि में संघ उत्साह से भाग ले रहा था। इधर जेठीबाई भी आपके सानिध्य में ज्ञान ध्यान में विशेष

रत बनीं। वात्सल्यभरी वैराग्यमय गुरुवाणी से हृदय की वैराग्य भावना को सिंचन मिला। आपने गुरुवर्य्या से उद्धार की प्रार्थना की। आपश्री ने तब आपको संयम जीवन की कठिनता अनेक प्रकार से समझाई। अनादि वासना पर जय प्राप्त करने का एवं आत्मबल मजबूत बनाने का उपदेश दिया। आपश्री ने कहा, "यह मार्ग शूरवीरों का है, इस वास्ते प्रथम आत्मा को शूरवीर बनाना अत्यंत आवश्यक है। जब आपने गुरुवर्य्या के यह निस्पृह वचन सुने तब आप भी संयम जीवन अपनाने का निश्चय कर चुकीं और चातुर्मास पश्चात आपने वडिल जनों के पास दीक्षा की आज्ञा मांगी। ससुराल पक्ष के लोग स्थानकवासी थे। इस लिए तथा मोहवश आज्ञा मिलने में कुछ तकलीफ जरूर हुई किन्तु आपका निश्चय देखकर आखिर सबने संमति दी।

संवत १९७६ के मिंगसर सुदी ५ के शुभ दिन शुभ मुहूर्त पर महोत्सव के साथ आपकी दीक्षा संपन्न हुई और आप जिन-श्रीजी नाम से अलंकृत हुईं तथा पू. वल्लभ श्रीजी की प्रथम शिष्या घोषित हुई।

दीक्षा के प्रारम्भिक जीवन में आपने आवश्यक सूत्रों एवं प्रकरण ग्रंथों का अध्ययन थोड़े समय में किया। बाद में संस्कृत लघुवृत्ति व्याकरण, काव्य, छंद, अलंकार आदि का अध्ययन किया। अध्ययन में लगन होने से तथा तेज बुद्धि के कारण जल्दी ही आपका ज्ञान विकसित हुआ। आपने धार्मिक सूत्रों का भी अध्ययन किया।

संयम जीवन के पालन में आप सतत जागृत हैं। निरासक्ति, इंद्रिय दमन, इच्छा नियंत्रण आपके असाधारण गुण हैं। शुरू से ही समुदाय में आपने अनेक कार्यों की जिम्मेदारी संभाल ली। पूज्यश्री ज्ञान श्रीजी म. सा. के विद्यमान अवस्था में ही आप समुदाय में सब की देखभाल करना, जरूरतों का विचार करना आदि अनेक अभ्यंतर कार्य संभालने लगी थीं। क्योंकि पूज्य श्री प्र. वल्लभ श्रीजी म. सा. पढ़ना, पढ़ाना, व्याख्यान, तत्त्वचर्चादि कार्यों में व्यस्त रहती थीं। पूज्यश्री वल्लभ श्रीजी के पास जीवन भर आपका स्थान मंत्री की तरह था। समुदाय में सभी गुरुबहनें भी, प्रत्येक कार्य में आपकी सलाह लेना आवश्यक मानती हैं। आपका अनुभव ज्ञान अच्छा है, जैसा फरमाती हैं, वैसा ही होता है।

गुरुसेवा को आपने अपने जीवन का सर्वस्व बना लिया था। जहां भी आप जातीं वहां पूज्यश्री और आपको देखकर भ. महावीर और गौतमस्वामी की उपमा दी जाती। गुरुदेव का वात्सल्य एवं शिष्य का विनय यह दो तत्त्व ऐसे हैं कि गुरु शिष्य दोनों के सम्बन्ध को निर्मल करते हैं। जिन श्रीजी गुरु आज्ञा में रह कर जीवन साधना में आगे बढ़ रही थीं। ४४ वर्ष के दीर्घ दीक्षा समय में अनुकूल या प्रतिकूल यह प्रश्न कभी आपके सामने नहीं रहा। आप विनय, वैयावच्च में ऐसी लीन बन गयीं कि आपकी निष्काम सेवा वृत्ति ने गुरु के हृदय में विशिष्ट स्थान प्राप्त कर लिया। गुरु के हृदय में शिष्य का स्थान बने तो ऐसे शिष्य को महान भाग्यशाली ही कहना चाहिए। गुरु कृपा बिना की

हुई साधना सुगंधरहित पुष्प जैसी है, यह आपकी हमेशा की भावना रही। आपके जीवन का सिद्धान्त इस तरह रहा है कि:-

१) ध्यानमूलं गुरोर्मूर्ति-गुरुमूर्ति का ध्यान करना।

२) पूजामूलं गुरोः पदौ-गुरुचरण की पूजा करना।

३) मंत्रमूलं गुरोर्वाक्यं-गुरुवाक्य को (आज्ञा को) मंत्रवत मानना।

४) मोक्षमूलं गुरोः कृपा-गुरु कृपा से ही मोक्ष की सिद्धि।

यह गुरुकृपा प्राप्त करने में आप पूर्णतः सफल बनीं। बड़ों के साथ विनय एवं आदर भावना तथा छोटी गुरुबहिनों के साथ वात्सल्यपूर्ण व्यवहार से आप सबकी प्रेमपात्र बनीं। आप मित-भाषी हैं और सुचारु रूप से पूज्यश्री के बाद समुदाय का संचालन कर रही हैं। पूज्यश्री के स्मारक की जो विभिन्न योजनाएं बन रही हैं, उनमें मुख्य प्रेरणा आपही की है।

आपके नेतृत्त्व में अधिकाधिक शासन प्रभावना होवें, यही प्रार्थना।

चातुर्मास सूची

पूज्यश्री प्र. वल्लभश्रीजी म. सा. ने अपने ५७ वर्षों के साध्वी जीवन में भारत के विभिन्न स्थानों पर जो चातुर्मास व्यतीत किये उनकी सूची निम्नलिखित है :—

संवत	स्थान	
१९६२	बीकानेर	(राजस्थान)
१९६३	पाली	,,
१९६४	फलोदी	,,
१९६५	ब्यावर (नयासर)	,,
१९६६	जयपुर	,,
१९६७	लोहावट (जाटावास)	,,
१९६८	पालिताना	सौराष्ट्र
१९६९	बडोदा	गुजरात
१९७०	जोधपुर	राजस्थान
१९७१	बीकानेर	,,
१९७२	लोहावट (जाटावास)	,,
१९७३	फलोदी	,,
१९७४	जोधपुर	,,
१९७५	लोहावट (विसनावास)	,,
१९७६	तिवरी	,,

संवत	स्थान	
१९७७	प्रतापगढ़	राजस्थान
१९७८	मंदसौर	,,
१९७९	तिवरी	,,
१९८०	फलोदी	,,
१९८१	लोहावट (विसनावास)	,,
१९८२	पालिताना	सौराष्ट्र
१९८३	सूरत	गुजरात
१९८४	पादरा	,,
१९८५	अहमदाबाद	,,
१९८६	पालिताना	सौराष्ट्र
१९८७	बीकानेर	राजस्थान
१९८८	जोधपुर	,,
१९८९	लोहावट (जाटावास)	,,
१९९०	खीचन	,,
१९९१	लोहावट	,,
१९९२	खीचन	,,
१९९३	फलोदी	,,
१९९४	,,	,,
१९९५	,,	,,
१९९६	खीचन	,,
१९९७	गढ सिवाणा	,,

संवत	स्थान	
१९९८	पादरा	गुजरात
१९९९	गंभीरा	,,
२०००	पालिताना	सौराष्ट्र
२००१	सुरत	गुजरात
२००२	बडोदा	,,
२००३	,,	,,
२००४	जोधपुर (महामन्दिर)	राजस्थान
२००५	लोहावट	,,
२००६	बीकानेर	,,
२००७	फलोदी	,,
२००८	मोकलसर	,,
२००९	खीमेल	,,
२०१०	छोटी सादडी	,,
२०११	शाहदा	खानदेश
२०१२	धुलिया	,,
२०१३	अमलनेर	,,
२०१४	,,	,,
२०१५	,,	,,
२०१६	,,	,,
२०१७	,,	,,
२०१८	,,	,,

॥ॐ॥ जिन श्री कृत गहुं.

॥गुरु विरह गहूंली ॥

(राग)

*** शुं करे विचार तारे आप जवुं के काल. ***

क्यों छोड़ चले गुरुवर, हा. हमे अकेले छोड़ गये ।
भूल गये गुरुवर, इस मोह भरी दुनिया सबे ॥टेर॥
राजस्थान लोहावट नगरे, पारक गोत्र सुधाम ।
पिता सुरजमल मात गोगादेवी, वरजु कुमारी शुभ नाम ॥१॥
उगणीसे एकावन जन्में, इगसठ दीक्षा सार ।
दो हजार दश छोटी सादड़ी, प्रवर्तिनी पद धार ॥२॥
मरुधर गुर्जर देश मालवा, सौराष्ट्र पावन कीना ।
रायराणा प्रति बोध गुरुवर, शासन रसिये कीना ॥३॥
निर्मल ज्ञान ध्यान रस भीना, संयम गुण अविकारा ।
वचन अखंड अमोघ प्रचारा, वर्षे अविछिन्न धारा ॥४॥
वाद विवाद और राग द्वेष से, दूर निरन्तर रहते ।
गुणी जनों को देख सदा ही, अनुमोदन नित्य करते ॥५॥
जी जी करते जीभ सूकती, प्यार अति दिल धरते ।
अंतः समय सहु को ही विसारी, स्वर्ग सिधारे हर्षे ॥६॥
शान्त सुधारस करुणासागर, उपशम भाव से भरिया ।
प्रयाण समय निजचरण अंगुठे, अमीरस झरणा झरिया ॥७॥
दो हजार अठार फागुण सुद. चवदश मंगलवार ।

अमलनेर श्री संघ सकल में, छाया शोक अपार ॥८॥
उसी रात को तीन सुपन से, निज दिव्य स्थान बतलाया ।
सिद्धगिरि की यात्रा करके, जिन मंदिर में आया ॥९॥
मरी उपद्रव निकट न आवे, स्मरण से सुख पावें ।
ज्ञान वल्लभ गुरु चरण कमल में, जिन सादर शीष नमावे ॥१०॥

द्रव्य दाताओं की सूची

४१०१) सुखलालजी खेतमलजी कोठारी, अमलनेर
१५०१) खेतमलजी पारख की धर्मपत्नी, नांदगांव
१००१) कुंदनमलजी संपतलालजी पारख, धमतरी
१००१) कँवरलालजी जेठमलजी दुग्गड़, धमतरी
१००१) जमनालाल जी दुग्गड़, धमतरी
१००१) जीवराजजी मिश्रीलालजी नाहटा, शायदा
१००१) त्रिभुवन भाई की धर्मपत्नी मणी बहिन, बड़ौदा
१००१) विजय कुमार रतीभाई, बड़ौदा
७५१) पूनमचंदजी गुलाबचंदजी गोलेछा, बम्बई
७५१) जीवराजजी अगर चंदजी गोलेछा, बम्बई
७५१) हजारीमल जी रेखचंदजी पारख, बम्बई
७५१) हीराचंदजी जुगराजजी पारख, बम्बई
७५१) तनसुखदासजी लछमणदास जी पारख, बम्बई

५०१) गेंदमलजी गुलाबचंदजी पारख, मद्रास

५०१) भोमराज जी सिद्धराज जी टांटिया, खेतिया

५०१) शेषमलजी भटेवा, मद्रास

५०१) अमृतलाल वनमालीदास, बम्बई

२५१) मंगलभाई मणीभाई, बड़ौदा

२०१) जेठीबाई ओस्तवाल, तिवरी

२०१) नाथी बाई कोचर, फलौदी

२०१) विरदीचंदजी, जैतारण

१५१) नरसिंह भाई जमनादास भाई, गंभीरा

१०१) पन्नालालजी धनराजजी छाजेड़, बेटावद

१०१) प्रतापमल जी सेठिया, मंदसौर

१५१) नेमीचंदजी पन्नालाल जी बैद, पटना

१०१) भँवरलालजी गोलेछा की धर्मपत्नी जतन बाई, रायपुर

२०१) वाघमलजी प्रेमराज जी सेठिया, धमतरी

२०१) पृथ्वीराज जी मेघराज जी पारख, धमतरी

छोटी सादड़ी (मेवाड़) में संवत २०१० में चातुर्मास था
तब
धर्म ध्यान तप-जप विशेष हुवा जिसकी यादी।

१६	११	१०	९	८	७	६	५	४	३	२
१	३	२	१०	२१	१	२	३५	११	२००	३००

प्रोसेशन ६, अट्ठाई उत्सव ३, पौषध ५००, अक्षयनिधितप २१, चतुर्थ व्रत ५, रात्रि जागरण ११,

जब आप अमलनेर में व्याधिग्रस्त थीं तब कल्याण हेतु वेदनीय क्षय के लिये तपस्या की गई।

उपवास	आयंबिल	नीवी	एकासणा	बियासना
१३१	२०८	३३	२१२	१६१

सामायिक	नवकारमंत्र जाप
१५७१	८८००००

आयुकर्मपूजा १, वेदनीय कर्म पूजा १, स्नात्र पूजा २, कई दिनों तक ब्रह्म व्रत पालन, इस प्रकार धर्म क्रियाएं की गईं।

वैशाली प्रेस, घी वालों का रास्ता, जयपुर ।